प्रबल-परीक्षा

[एक रोमांचकारी ऐतिहासिक उपन्यास]

लेखक
धर्मकेसरी श्री कुँवर वीरेन्द्रसिंहजी रघुवंशी

प्रकाशक
नेशनल पब्लिशिंग हाउस
नई सड़क, दिल्ली

लेखक की अन्य रचनाएँ—

काव्य

१. जातीयता

२. राजर्षि भीष्म पितामह

नाटक

१. मर्यादा का मूल्य

२. सयम-सम्राट्

३. स्वातन्त्र्य-सग्राम

४. परमवीर चक्र

उपन्यास

१. देश-दीपक

२. कालिजर-कीर्ति

३. साहस

प्रथम संस्करण
अक्तूबर, १९५५

मूल्य
साढ़े तीन रुपये

मुद्रक
बालकृष्ण, एम. ए.
युगान्तर प्रेस, डफरिन पुल, दिल्ली

श्रद्धाञ्जलि

हमारे देश के अनुपम रत्न, साहित्य-सेवी, विज्ञान-विशारद, गणित-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित स्वर्गीय डाक्टर अवधेश नारायणसिंह जी एम० एस-सी०, डी० एस-सी०, डीन आफ दी फ़ैकल्टी आफ़ साइन्स, लखनऊ विश्व-विद्यालय की पवित्र स्मृति में :—

श्रीमान्,

विज्ञान, गणित प्रवीण बन, विस्तार विद्या का किया।
शिक्षक, कुशल साहित्य-सेवी, हो सुव्रत-आसव पिया॥
परहेतु जीवन ध्येय माना, बढ़ कला के क्षेत्र में।
सेवक-समाज तथा सदा रख, राष्ट्र का हित नेत्र में॥
साहित्य-नौका आपकी शुभ ज्ञान-बल्ली से चली।
शिक्षित-जगत्-भव अत: यह अर्पित तुम्हे श्रद्धांजली॥

विनीत—

लेखक

दो शब्द

प्रस्तुत 'प्रबल-परीक्षा' नामक लघु उपन्यास पाठको को भेट करते हुये, इन 'दो शब्दो' के प्रकटीकरण मे केवल-मात्र दो शब्द ही निवेदन करने का मेरा विचार है, जिनमे से एक है प्रस्तुत उपन्यास के शीर्षक एव कथानक-निर्णय के सम्बन्ध मे, और दूसरा है प्रस्तुत रचना-विषयक प्रेरणा-स्रोत के परिचय से सम्बधित।

प्रस्तुत उपन्यास के कथानक को यदि कोई विद्वान् ऐतिहासिक सत्य स्वीकार करने मे किञ्चित सकोच भी करने लगे, तो भी इसे पूर्ण रूप से गल्प अथवा काल्पनिक कहने का तो साहस कर नही सकते, क्योकि इस पर कितने ही लेखक अपनी-अपनी समर्थन-सम्बन्धी कुशल लेखनी उठा चुके हैं, जिसके कारण यह कथानक अब कल्पना के स्तर से बहुत ऊपर उठ गया है। अत. हम यदि इसे ऐतिहासिक सत्य मानते हैं तो कुछ अनुचित नही करते। इसके अन्तर्गत एक युवक नरेश अपने वीरत्व और वचन के प्रमाण मे, एक वीराँगना अपने पवित्र पातिव्रत और सतीत्व के प्रमाण मे, और एक सच्चा कर्त्तव्यतत्पर नमक हलाल सेवक अपनी स्वामि-भक्ति के प्रमाण मे, अपने-अपने प्राणो की बाजी लगाकर ससार की स्वधर्म सम्बन्धी अत्यन्त कठोर एव महत्त्वशील *प्रबल परीक्षा* मे किस प्रकार पूर्णरूप से सफल तथा उत्तीर्ण सिद्ध होते हैं, यह प्रस्तुत उपन्यास के अध्ययन का विषय है, जिसका विचार करते हुए हमारी दृष्टि मे प्रस्तुत उपन्यास का शीर्षक तथा नाम 'प्रबल-परीक्षा' ही अत्यन्त उपयुक्त लगता है।

प्रस्तुत कथानक को लेखनीबद्ध करने में जिन-जिन महानुभावो से प्रेरणा प्राप्त हुई है उनमे स्वर्गीय श्री डाक्टर अवधेश नारायणसिह जी एम० एस-सी०, डी० एस-सी, डीन आफ दी फैकल्टी आफ साइन्स, लखनऊ

विश्वविद्यालय, श्री ठाकुर सत्यनारायणसिह जी ससदीय-सचिव (Minister for Parliamentary Affairs), श्री डाक्टर सम्पूर्णानन्द जी, चीफ मिनिस्टर उत्तर-प्रदेश, श्री ठाकुर त्रिभुवन नारायणसिह जी ससद-सदस्य (Member Parliament), श्री कुवर रघुवीरसिह जी एम० ए० प्रोप्राइटर आरमी मस्कैट्री स्टोर्स, श्री बालकृष्ण जी एम० ए० मैनेजिंग डायरेक्टर, युगान्तर प्रकाशन लि०, श्री पडित रूपकिशोर जी इन्जीनीयर बरमा-शैल, श्री पण्डित दयानन्द जी मन्त्री अ० भा० जॉ० ब्रा० महासभा और कुँवर घनश्यामसिंह जी भवानीपुर तरकौला (बिजनौर) हैं, जिनका मै विशेष रूप से आभारी हूँ और जिनको हर्ष के साथ कोटिश धन्यवाद देता हूँ तथा हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

उक्त सज्जनो मे से भी, विशेप कृतज्ञता, श्रद्धा एव भक्ति के अधिकारी हैं, स्वर्गीय श्री डाक्टर अवधेश नारायणसिह जी जिन्होने इस कार्य मे अन्य सब से अधिक अभिरुचि प्रकट की थी, और जो दुर्भाग्यवश आज इस मर्त्य-लोक मे नही हैं। आप सदृश उत्साह-वर्द्धक हितैषी मित्र की मृत्यु प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन से पूर्व ही हो गई, इस सहयोग की शून्यता और श्रीमान् के चिर वियोग से लेखक को भी महान् शोक हुआ है, किन्तु फिर भी वह अपने हृदय पर सन्तोष का पत्थर रखकर जगद्पति जगदीश्वर से यही प्रार्थना करता है कि, वह उनकी आत्मा को स्वर्ग मे शान्ति प्रदान करे और उनके पारिवारिक स्वजनो के विरह परितप्त हृदयो पर सन्तोष का जल छिडके, जिससे वे उस पारिवारिक गृहस्थ-जीवन की नाव को भवसागर पार करने मे समर्थ हो, जिसे श्रीमान् आज मझधार में छोडकर परलोक-वासी हुए हैं।

आज इस पुस्तक के प्रकाशन के समय जो कही वे महानुभाव इस संसार मे जीवित होते तो अपनी प्रिय प्रेरणा से विरचित इस रचना के समर्पण को सहर्ष स्वीकार करते हुए स्नेह एव वात्सल्य से इसी प्रकार गद्गद् हो जाते, जिस प्रकार कोई पिता अपने नवजात प्राण-

धार पुत्र को प्रथम बार गोद में खिलाते हुए प्रसन्नता तथा हर्ष से द्रवीभूत हो जाता है। इसी विश्वास को हृदय मे धारण करके लेखक, उनके भौतिक रूप से स्थूल शरीर के अभाव मे, अपनी इस रचना को श्रद्धाञ्जलि स्वरूप उनकी महान् आत्मा की भेट कर रहा है और आशा कर रहा है कि उनकी आत्मा इसे स्वीकार करके लेखक को कृत्कृत्य करेगी और उसके शोकपूर्ण हृदय को शान्ति प्रदान करेगी।

श्री डाक्टर साहब के वश-परिचय के विषय मे यहाँ पर इतना ही कहना पर्याप्त है कि आप बनारस जिले के एक सम्भ्रान्त राजपूत (क्षत्रिय) सरदार थे। आपके पूज्य पिता स्वर्गीय श्री ठाकुर प्रसिद्धनारायण सिह जी वहा के देहाती इलाके के एक सुप्रसिद्ध जमीदार होते हुए भी अपने स्वास्थ्य के बिगड जाने के कारण चिकित्सा एव उपचार के लिए औषधि आदि की सुविधा के विचार से देहात को छोडकर स्थायी रूप से बनारस नगर के नई बस्ती मुहल्ले मे निवास करने लगे थे।

वही पर श्री डाक्टर साहब का जन्म सन् १९०१ ई० में हुआ। आप अपने पिता के तृतीय सुपुत्र होकर स्ववशोजागर प्रमाणित हुए। आपके प्रथम ज्येष्ठ भ्राता श्री ठाकुर विजयनारायणसिह जी आपके वियोग-शोक मे आपके निधन के छः मास के अन्तर्गत ही इस ससार को छोडकर चले गये। आपके द्वितीय ज्येष्ठ भ्राता श्री ठाकुर जगदीशनारायण सिंह जी बनारस मे ही रहकर वकालत करते हैं। आपके कनिष्ठ भ्राता त्यागी और तपस्वी देश-सेवक श्री ठाकुर त्रिभुवननारायणसिंह जी ससद-सदस्य दिन-रात देश-सेवा मे रत रहते हैं।

श्री डाक्टर साहब की शिक्षा-दीक्षा का केन्द्र बनारस ही रहा और वही के हिन्दू विश्वविद्यालय से आप एम० एस-सी० पास करके एक स्नातक होकर निकले। अध्ययन समाप्त हो जाने के उपरान्त भी आप अपने विद्या-प्रेम का परिचय प्रदान करते हुये अध्यापन कार्य मे ही सलग्न हो गये और बडी लग्न से उसका सम्पादन करने लगे। इसी अवस्था के

अन्तर्गत सन् १६२७ ई० में कलकत्ता विश्वविद्यालय से आपने गणित विषय मे डाक्ट्रेट प्राप्त कर लिया। सन् १६२८ में लैक्चरर और फिर क्रमश: प्रोफेसर तथा डीन आफ दी फैकल्टी आफ साइन्स हो गये। अपनी गम्भीर गवेषणा के पश्चात् आपने गणित विषय पर कई विद्वत्ता-पूर्ण ग्रन्थ भी लिखे हैं जो अपनी श्रेष्ठता के स्वय प्रमाण हैं। आप एक परम प्रख्यात साहित्य-सेवी और समाज-सुधारक व्यक्ति थे। आप ११ जुलाई सन् १६५४ ई० को, ५३ वर्ष की आयु होने पर, ऐसे असमय मे काल के ग्रास बने, जबकि आपका भाग्य-भास्कर उन्नत होता हुआ मार्तण्ड-मण्डल में मध्यम धाम की ओर जा रहा था। आपने अपने पीछे अपनी सन्तान मे चार पुत्र और तीन कन्याए छोडी हैं। इसके अतिरिक्त भ्रातृज आदि से सयुक्त आपका परिवार भी अच्छा सम्पन्न है। इस समय इस परिवार का सारा भार देशभक्त श्री त्रिभुवन बाबू पर ही आ पडा है। ईश्वर उन्हे इस भार के वहन करने मे समर्थ करे!

प्रस्तुत उपन्यास मे इसके कथानक के निर्वाह तथा भाषा-भाव आदि में, सम्पादन सम्बन्धी त्रुटियाँ इसलिये रह गई कि इसके रचना-काल मे आर्थिक एव अन्य पारिवारिक अशान्तिकारक सकट मे पड जाने के कारण मेरा मस्तिष्क कुछ उद्विग्न रहने लगा था और वह वाछनीय गम्भीरता को प्राप्त न हो सका। अपनी इस न्यूनता के लिए प्रिय पाठको से क्षमा-याचना करते हुये मै उनसे अपनी इस कृति को उदारता-पूर्वक अपनाने की प्रार्थना करूँगा।

पौटाबादशाहपुर
(बुलन्दशहर)
भाद्रप्रद शुक्ला दशमी
सम्वत् २०१२ वि०

विनीत
कुँवर वीरेन्द्रसिंह रघुवंशी
धर्मकेसरी

पहला परिच्छेद

आज भारत देश मे कला-कौशल, सौन्दर्य और शान के उपासक मुगल सम्राट् शाहजहाँ का शासन-काल वर्तमान है। राजश्री की सह-गामिनी समस्त सिद्धियो अर्थात् शिक्षा, साहित्य, सगीत, शिल्प, काव्य, निर्माण-कला, चित्रकला, हस्तकौशल आदि विभूतियो ने, ससार के प्रत्येक कोने से चलकर साम्राज्य की राजधानी मे डेरा लगा लिया है। अत. प्रस्तुत शासन के अन्तर्गत अद्वितीय आभा को प्राप्त आगरा नगर अपने अनु-पम तथा सुविशाल गगन-चुम्बी भव्य भवनो और राज-प्रासादो से परिवेष्टित होकर प्रकृति की प्रतिष्ठा तक को ठेस पहुँचा रहा है और परिचय दे रहा है अपने विशाल-हृदय कला-पारखी के अगम्य, उच्च तथा असीमित मतव्यो का।

दोपहर के पश्चात् का समय है। भगवान् भास्कर पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान कर चुके हैं। सन्ध्याकाल के आगमन मे कुछ ही देर बाकी है। सध्या-कालीन प्रभाव के अन्तर्गत, अस्त होते हुए सूर्य की सुन्दर सुनहरी किरणे शीतल होकर राजधानी के राज-प्रासादो पर पडती हुई, अपूर्व आकर्षण, शुभ्र ज्योत्स्ना और असीमित आनन्द का अनुभव करा रही हैं। सब से अधिक प्रस्तुत किरणो से प्रभावित हुआ है कलकल-निनादिनी यमुना नदी का अठखेलियाँ करके बहने वाला नीलवर्ण निर्मल वारि, जिसने उनके साथ मिलकर, तथा रग-बिरगी फुलझडियाँ बनाकर दर्शको के प्रमोदार्थ वायुमण्डल मे छोडना आरम्भ कर दिया है। सन्ध्या काल का आगमन पाकर मनुष्य क्या पशु-पक्षी भी अपनी दिनभर

की दौड-धूप समाप्त करके, अपने-अपने निवास-स्थानो की ओर जाने लगे हैं। दिनभर जनसमुदाय से भरपूर एव व्यस्त रहने वाले नगर की चहल-पहल अब कुछ कम होने लगी है। योही धीरे-धीरे स्वयात्रा समाप्त करके सूर्य भगवान् ने अपना मुँह अन्तरपट के अन्दर छिपा लिया। दिवसपति की अनुपस्थिति से लाभ उठाकर, अन्धकार निश्चित रूप से बढने लगा। उसके प्रभाव को क्षीण करने के लिये मानव-समाज ने कृत्रिम उपादानो अर्थात् दीपो का सहारा लिया किन्तु वे असफल सिद्ध होकर इसी उक्ति के समर्थक प्रमाणित हुए कि 'मानव-कृत कृत्रिम उपादान प्राकृतिक प्रगति पर विजय पाने मे सर्वथा असफल रहते हैं।'

अन्धकार का आगमन पाकर सामान्य राह-वाटो की कौन कहे, शाही मार्ग भी प्रायः जनशून्य हो गए हैं। किन्तु एक व्यक्ति इस समय भी यमुना के जल की ओर पैर लटकाये शाह घाट की एक पैड़ी पर बडी देर से विचार-मग्न होकर इस प्रकार उठने का नाम न ले अविचल भाव से बैठा है, जैसे पत्थर की प्रतिमा हो। उसने प्रकाश और अन्धकार दोनो का चित्रदर्शन किया है पर तो भी उसका दिल नही भरा। कभी-कभी उसके मुँह उठाकर उत्सुक नेत्रो के इधर-उधर देखने की क्रिया से ऐसा प्रतीत होता है मानो वह किसी अन्य व्यक्ति की प्रतीक्षा मे हो और वाँछित व्यक्ति निश्चित वेला को व्यतीत करके भी साक्षात्कार को नही आया हो। प्रस्तुत व्यक्ति के विशाल डील-डौल, बलिष्ठ शरीर और तेजस्वी मुख-मुद्रा तथा राजसी लिबास एव तडक-भड़क से ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह कोई राजा, महाराजा अथवा सम्राट् का सगा-सम्बन्धी या बडा ताजीमी मन्सबदार हो। तब प्रश्न उठता है कि ऐसा असाधारण व्यक्ति एकाकी रूप से निर्जन स्थान पर ऐसी अवस्था में क्यों बैठा है ? लीजिए पाठक ! आपकी उत्सुकता निवारण करने के लिये वह कुछ कह भी रहा है।

"इस मूर्खता की भी कोई सीमा है कि आमेर-नरेश महाराजा

जगतसिंह ऐसे अनुपयुक्त स्थान पर असमय मे बैठकर एक तुच्छ शाही दासी के आगमन की प्रतीक्षा करता रहे और वह, इस तरफ पैर बढ़ाने का नाम भी न ले। जब केवल सकेत मात्र पर उसकी मृत्यु हो सकती है तो फिर यह अवज्ञा क्यो ?"

इस कथन का अन्तिम वाक्य मुँह से निकला ही था कि एक स्त्री ने बडी श्रद्धा और विनयपूर्वक अर्थात् अदब के साथ उसका अभिवादन करते हुये तथा इस प्रकार का अभिनय उपस्थित करते हुये कि उसके देर होने के कारण भय से प्राण निकले जा रहे है, उक्त स्थान मे प्रवेश किया। प्रथम व्यक्ति ने उसकी ओर कटु दृष्टि से देखकर कहा, "मुरादन, क्या तुमको मालूम नही कि हम कब से तुम्हारी प्रतीक्षा में बैठे है ?"

'मुझे बडा अफसोस है इसके लिये। मै मजबूर थी शाही हाजत मे ली जाने की वजह से, सरकार ! मुझे माफी मिले।" दासी की विनयशील मुखमुद्रा देखकर युवक महाराज का क्रोध शान्त हो गया और वह मुस्कराकर बोले "किसी मनुष्य को अकारण तग करना और फिर बहाना बनाकर जले पर नमक छिडकना ? तुम शैतान हो, इसकी सज़ा दी जायगी।"

"नही हुजूर, मैं कलाम की कसम खाकर अर्ज करती हूँ कि मुझे बादशाह की पेशी मे रहने की वजह से मजबूरन रुकना पडा, नही तो कनीजा हर वक्त सर-आँखो के बल सरकार के हुजूर में रहने और खिदमत करने को तैयार है।"

"अच्छा खैर ! जाने दो व्यर्थ की बातो को; बोलो, वहा का क्या समाचार है ?"

"मैने उसका गजब ढाने वाला हुस्न अपनी आँखो से देखा है, सरकार !"

"क्या उसका वास्तविक सौन्दर्य उसके चित्र-सौन्दर्य से भी बढकर है ?"

"कही ज्यादा सरकार ·· ! उसका रूप कयामत ढाने वाला है ।"

"क्या वह शाहजादी रोशनआरा से भी ज्यादा खूबसूरत है ?"

"शाहजादी रोशनआरा तो उसके पैर का धोवन भी नही है, हुजूर ! उसे तो जमीन का ऐसा चाँद कहिये, जिसका सानी दुनियाँ मे दूसरा है ही नही ।"

"अच्छा ! यह बताओ कि उससे मिलने का तुम्हे अवसर कैसे मिला ?"

"इसमे क्या मुश्किल थी, हुजूर ! मै मनिहारिन का वेश बनाकर चूडियाँ बेचने के बहाने राजमहल मे चली गई थी ।"

"तो तुमने उस पुष्प को नजर भर कर स्वय देख लिया, क्यो ?"

"जी हाँ सरकार ! देख ही नही लिया बल्कि बात-चीत भी कर ली ।"

"तुम्हारे सामने वह हँसी और मुस्कराई भी तो होगी न ? उसके दाँत·· ···चमक···"

"क्या पूछिए, हुजूर ! उसके हँसने पर फूल से झडने लगते थे और उसके दाँत ऐसे चमक जाते थे, जैसे अनारदाने के गुच्छे या मोतियो के लच्छे हो । मुझ बूढी कुरूपा की तो उन लोगो ने बडी खिल्ली उडाई थी । बडा मजा आया ।"

"आह! तुमने तो मेरे घावो को और भी ताज़ा बना दिया, मुरादन !"

"काश कि मुझ को यह मालूम होता कि मेरी बाते हुजूर को अच्छी नही लगेगी, तो ऐसा कहने से पहले अपनी जबान को कटवा लेती ।"

"नही, मेरा मतलब यह नही है, मुरादन ! जब बिना देखे ही इतना प्रेम बढ गया कि एक तरह का नशा-सा मेरे ऊपर सवार होने लगा और हो गया दिल टुकडे-टुकडे तो जो कही उसके दर्शन हो गये तो न जाने क्या होगा ?"

"इश्क ऐसी ही बला है सरकार ! क़यामत हो जायगी कयामत ।"

"क्या तुमने किसी राजा-रईस की चर्चा उसके दिल की यह थाह लेने को नही छेडी कि उसका दिल किसी भाग्यवान् की तरफ से प्रभावित हुआ है कि नही ?"

"न छेडती तो वहाँ जाने ही से क्या फायदा था हुजूर ! अगर आप जैसे बडे आदमियो का नमक-धानी खाकर उसे हलाल करने की भी बुद्धि इस दासी मुरादन मे न होती तो इस पत्थर की मूरत को पूछता ही कौन ?"

"नही, मैने यह प्रश्न इसीलिये किया क्योकि तुम्हे विस्तार के साथ यह पहले बतलाया नही गया था न !"

"क्या जरूरत थी सरकार ! दासी ने मालिक का मन्शा इशारे से ही समझ लिया था ?"

"अच्छा, बताओ मेरा क्या अभिप्राय था ?"

"वही जो भौरे का फूल से या चातक का चन्द्र से होता है ।"

"निस्सन्देह तुम तो बडी चतुर हो ! खैर, आगे चलो ।"

"मै चूडियो के साथ-साथ तसवीरे भी बेचने के लिये लेती गई थी और मैने सारी तसवीरे उसके सामने खोलकर रख दी थी ।"

"क्या वह उस समय वहा अकेली थी ?"

"नही सरकार ! उसकी तीन-चार सहेलियाँ उसी उम्र की उसके साथ थी ।"

"अच्छा तो तुमने चित्र खोलकर दिखाये । फिर क्या हुआ ?"

"मुस्लिम रईसो की तसवीर तो उसने नाक चढाकर बिना देखे ही लौटा दी ।"

"और हिन्दू रईसो की ?"

"उनमे से उसने तीन तसवीर लेकर उनकी कीमत मालूम करनी चाही।"

"तब तुमने क्या उत्तर दिया ?"

मैने कहा, 'राजमहल मे तसवीर की कीमत ही क्या ? जो पसन्द आगई उसका खुशी से आप ही इनाम मिल जाता है।"

"तो वे चित्र किस-किस भाग्यवान् के थे और तुम्हे क्या पुरस्कार मिला ?"

"तीन तसवीर, एक महाराणा कर्णसिह मेवाड की, दूसरी बूँदी के महाराज छत्रसाल की और तीसरी तसवीर हुजूर की, उसके पसन्द आई और उनकी कीमत के रूप मे उससे मुझे तीन मुहरे मिली।"

"क्या सच कहती हो कि उसने मेरा चित्र भी खरीदा ?"

"क्या दासी सरकार के सामने झूठ बोलने का भी हौसला कर सकती है, हुजूर ?"

"अच्छा, तुम्हारी बातो से सीने मे प्रसन्नता की गुदगुदी पैदा होती जा रही है। कुछ उन भावो पर और प्रकाश डालो तो जो उन चित्रो को देख कर उसके हृदय मे उत्पन्न हुये।"

"पहले उसने तीनो तसवीरो पर निगाह डाली और फिर उनमे से एक तसवीर को इतने गौर से देखा कि देखते ही देखते उसका चेहरा खुश्क हो गया, आँखे पानी से तर-बतर हो गई और हाथ ऐसे काँपने लगे जैसे मानो तसवीर हाथ से गिर जायगी।"

"क्या तुमने यह ध्यान नही किया कि ऐसा किसके चित्र पर हुआ ?"

"यह जानने की कोशिश तो मैने बहुत की, पर ख्वाहिश पूरी न हो पाई। मगर ख्याल है कि शायद ऐसा हुजूर ही की तसवीर पर हुआ होगा।"

"क्या, कुछ और रहस्य भी प्रकट हुआ था क्या ?"

"हाँ, उसके चेहरे की खुशी और बेफिक्री उस वक्त बिल्कुल काफूर हो गई थी। चेहरे पर उदासी छा गई, सीना धकँधकाने लगा, तमतमाहट से मुँह लाल होकर पसीने से तर-बतर हो गया और आँखे सजल होकर सीप सी चमकने लगी।"

"उसकी आकृति उस समय बड़ी सुन्दर लगती होगी।"

"हद से ज्यादा सुहावनी, सरकार! क्या कहना?"

"क्या ही अच्छा होता, मुरादन! जो कही मैं किसी तरह उस पुष्प को प्राप्त करके अपने विरह से धडकते हृदय का हार बना पाता।"

"मुरादन के सलामत रहते मायूस न हो, सरकार! यह उसे हुजूर के पास तक लाने मे अपना खून-पानी एक कर देगी।"

"यह आमेर-नरेश भी इसके लिये तुम्हारे शरीर को लाखो रुपयो की कीमत के हीरे जवाहरातो से सजाकर चमत्कार का चन्द्र बना देगा। इसके अनन्तर इस प्रकार तुम्हे दासी से रानी बनाकर भी, वह तुम्हारा सदा ऋणी रहेगा, मुरादन! और तुम्हारे उपकार को कभी स्वप्न मे भी न भूलेगा। तुम को जितने धन की आवश्यकता हो उसे लेकर कार्य को पूरा करने मे लग जाओ। बेगम साहिबा से तुम्हे छुट्टी दिला दी जायगी।"

"अच्छी बात है सरकार, मै अगले हफ्ते इस काम के लिये जाऊँगी।"

इस वार्तालाप के अनन्तर वे दोनो प्रतिकूल दिशाओ को प्रस्थान के लिये प्रस्तुत हुए।

वाचक! अब आप इन दोनो का परिचय पा चुके होगे? इनमें से पुरुष पात्र तो महाप्रतापी स्वर्गीय महाराज मानसिंह के सुपूत्र महाराज जगतसिह है, जो अपने राज्य के स्वामी होने के साथ-साथ साम्राज्य के अन्तर्गत समस्त रजवाडो मे सर्वश्रेष्ठ नरेश गिने जाते है। इसी श्रेष्ठता के उपलक्ष मे उनको विशेष रूप से सर्वोच्च सप्तहजारी मन्सब और सम्राट् शाहजहाँ की मुसाहिबी आदि के प्रमुख कार्य प्राप्त हुये है। इन्होने

कही से रूपनगर के राजा रूपसिंह की सुपुत्री सौन्दर्य-सुषुमा किरणमयी के सौन्दर्य की चर्चा सुनकर, उसकी सत्यता का पता लगाने के लिए शाही महल की प्रस्तुत दासी मुरादन को नियुक्त किया है और उसने जो विवरण वहाँ लाकर उनको दिया है उसका ज्ञान पाठक प्रस्तुत वार्तालाप से प्राप्त कर चुके हैं और उस प्रेम की कसक से भी परिचित हो चुके हैं, जिसका कि आमेर-नरेश शिकार हुगे हैं। महाराज जगतसिंह तो इस वार्ता के पश्चात् अपने डेरे को चले गये, किन्तु मुरादन, जब अपनी सफलता पर प्रसन्न होती हुई, राजमहल की ओर को मुडने लगी तो उसका एक दूसरे युवक सरदार से सम्पर्क हो गया, जिसे अम्बर नरेश के समान ही रौब-दाब वाला कहना होगा। दासी ने उस सरदार को भी नम्रता और ताजीम के साथ सलाम किया। मुरादन को पहचानकर सरदार ने हँसकर कहा—

"जियो, मुरादन ! मेरे चाँद जियो !! आजकल तुम्हारी मुलाकात ही नसीब नही होती। क्या बात है, किन मामलो मे उलझा रहता है यह नूरे आलम ?"

मुरादन—रुहेलखण्ड के नवाब जनाव शेरशाह साहब के वास्ते बन्दी का जी-जान सब कुछ हाजिर है। कुछ दिन से बाँदी बाहर मुहीम पर चली गई थी। मेरे लिये जो खिदमत हो बताई जाय।

अब पाठको को मालूम हो गया होगा कि जो सरदार मुरादन के साथ अब दूसरी बार मिलकर बातचीत मे सलग्न हुआ है वह रुहेला नवाब शेरशाह है।

शेरशाह—(हँसकर) मुरादन जैसी नाजुक-वदन कामिनी और यह मुहीम ? खैर, किस बदनसीब शाह या राजा-महाराजा को फतह करने गई थी मेरी मौज्जमा ? क्या इस खाकसार को ऐसे छोटे-मोटे कामो के लिये भी काफी नही समझा गया ?"

मुरादन—सरकार ! बाँदी को शरमिन्दा न करे। आमेर के महाराज

ने अपने एक निजी काम से मुझे रूपनगर भेजा था।

शेरशाह—(आश्चर्य प्रकट करते हुये)—रूपनगर ! रूपनगर उन्होने तुम्हे क्या करने के लिये भेजा था ? और खासकर तुम्ही को क्यो भेजा गया ?

मुरादन—सरकार ! उन्होने एक बात की सच्चाई की जाँच करने के लिये मुझे भेजा था और मुझ ही को उन्होने इसलिये भेजा, क्योकि मेरे बेटे की वहाँ पर कपडे की दुकान है और मै वहाँ की हरएक बात से वाकिफ हूँ।

शेरशाह—महाराज साहब ने तुम्हारी मार्फत किस बात की सच्चाई की जाँच कराई है, जरा बताओ तो मुरादन !

मुरादन—इतना ही कि रूपनगर की बडी राजकुमारी बडी खूबसूरत औरत है।

शेरशाह—तो तुमने मालूम करके उन्हे क्या बताया ?

मुरादन—यही कि उसके बराबर हसीन दुनियाँ के परदे पर भी कोई नही है।

शेरशाह—क्या वाकई वह ऐसी खूबसूरत है ?

मुरादन—खुदा कसम हुजूर, मैने ऐसी खूबसूरत औरत दूसरी आज तक नही देखी।

शेरशाह—क्या वह शाहजादियो से भी ज्यादा हसीन है ?

मुरादन—बेशक सरकार ! उनसे कही ज्यादे।

शेरशाह—क्या आमेर महाराज साहब उस पर जी-जान से फिदा हैं ?

मुरादन—मुझसे उसकी खूबसूरती की ताईद हो जाने पर तो वे जैसे मजनूँ ही बन गये है, सरकार ! वे मुझे वहाँ फिर भेजना चाहते हैं।

शेरशाह—सूआ डोरा डालने, क्यो ?

मुरादन—जी सरकार !

शेरशाह—हूँ ! मगर ताज्जुब है कि उन्होने इस राज को अपने दिली

दोस्त शेरशाह तक से भी छिपा लिया। बेटा, हम से छिपाकर फायदा भी क्या उठायेगे ?

मुरादन—नही सरकार, अभी छिपाने या बताने की नौबत ही कहाँ से आती। अभी तो उन पर इश्क ने रग चढाना शुरू ही किया है।

शेरशाह—अच्छा ठीक है। जाओ। मगर महाराज के दरिया में गोते लगाकर कही हमारे जैसे नदी-नालो को मत भूल जाना।

मुरादन—भला यह भी कही मुमकिन है, सरकार ! आपके वास्ते तो बन्दी के जी-जान हाजिर हैं, क्योकि आप तो अपने निजी हैं और उनका रहा सौदा लेन-देन का।

इसके पश्चात् मुरादन तो राजमहल को चली गई। किन्तु शेरशाह को आमेर-नरेश से बिना मिले सन्तोष नही हुआ और वे अपने घर जाने का विचार छोडकर शीघ्रगति से बढते हुये आमेर-नरेश के डेरे पर जा पहुँचे। इस समय उनका मस्तिष्क राजनीतिक ससार मे घूम रहा था। महाराज जगतसिंह भोजन आदि से निवृत होकर अपने दीवान-खाने मे आकर विराजे ही थे कि उनको चोबदार ने नवाब रुहेला के आने की सूचना दी। महाराजा साहब ने अपने सरदार भूर सिह को भेजकर नवाब साहब को सम्मान पूर्वक लाने की व्यवस्था करदी। निकट आने पर आपने स्वय अपने स्थान पर खडे होकर उनका स्नेह-पूर्वक स्वागत किया और अपने समीप बैठाकर निम्न प्रकार से बात-चीत की :—

"इस समय हमारे योग्य किस सेवा की आवश्यकता पड गई जिसके कारण इतनी रात को असमय में दर्शन देने का कष्ट किया, नवाब महोदय ?"

"कोई खास बात तो नही थी। सिर्फ जनाब को सलाम अर्ज करने ही की गर्ज से इधर आ निकला। क्योकि कई दिन से जनाब का नियाज ही हासिल नही हुआ था।"

"बड़ी कृपा की आपने ! और कोई विशेष समाचार सुनाइये।"

"रूपनगर की बडी राजकुमारी के हुस्न की बडी शोहरत है; न जाने यह कहाँ तक ठीक है ?"

"सुना तो हमने भी है, आगे ईश्वर जाने।"

"अपने किसी खास आदमी को भेजकर इस अमर की सचाई की जाँच करा लेनी चाहिये।"

"रूपनगर मे मुरादन का लडका दुकान करता है। जब वह उससे मिलने वहाँ जा रहा थी तो हमने उसे इस बात की सचाई की जाँच भी सौप दी थी। उसने आकर भी उसके सौन्दर्य की प्रशसा की है।"

"मुझे कितनी खुशी हो अगर वह फूल जनाब को हासिल हो जाय तो।"

"आपके अनुग्रह के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद ! आपके समान एक हितैषी मित्र को पाकर हम अपने आपको परम सौभाग्यशाली समझते हैं।"

"तो जनाब की मगनी के लिए दूसरी तरफ का क्या खयाल है ?"

"उधर का तो कोई पता नही मालूम, किन्तु मेरे हृदय की दशा तो ऐसी शोचनीय है कि उसका विचार करके तो यही कहना होगा कि वह पुष्प मुझे प्राप्त होना ही चाहिये।"

"फिर उसके पाने की तरकीब भी जनाब ने कोई सोची होगी ? मेरे खयाल से राजी-खुशी आसानी से तो उस गुल का हाथ लगना बहुत मुश्किल जान पडता है।"

"हमने तो अभी इसकी कोई तरकीब सोची नही है और न इस तरह की योजना कोई हमारे मस्तिष्क मे ही है। हम तो ऐसी बातो के लिये सदा आप ही पर निर्भर रहते आये हैं और आगे भी रहेगे।"

"अच्छी बात है,ऐसा है तो अब देखिये जरा बन्दे की भी होशियारी।"

इसके पश्चात् उन दोनो के अन्दर कुछ बाते कानो मे हुई जो सुनने मे नही आई। इसके अनन्तर महाराज तो नवाब रहेला को सहर्ष विदा करके अपने शयन-कक्ष मे चले गये और नवाब साहब वहाँ

से सीधे अजमेर के सूबेदार कासिम खा के घर पर पहुँचे। वे वहाँ पर देखते क्या हैं कि कासिम खाँ इस समय अपने दीवानखाने मे बैठे महफिल का मजा ले रहे हैं। दीवानखाने मे तबला, सरगी आदि बाजे बज रहे हैं और एक नर्तकी अपनी जर्क-वर्क कीमती पोशाक को फडफडाती हुई अपने नाच और गान की दक्षता से उपस्थित लोगो को मंत्र-मुग्ध कर, उनसे ठण्डे प्रहारो के द्वारा धन उगलवा रही है। एक-एक अदा और एक-एक स्वर-मजरी पर रुपयो की वर्षा होने लगती है। मुजरे की हरएक ताल पर, खाँ साहब, जो कि उस महफिल के नौशा हैं, उसकी कार्य-कुशलता की द्रव्यदान द्वारा स्वागत और सराहना कर रहे हैं।

शेरशाह भी वहा महुंचकर प्रस्तुत मनोरजन मे सम्मिलित हो गये। जब वह जशन समाप्त हो गया, तब कही शेरशाह और कासिम खाँ को वार्तालाप करने का अवसर मिला। रूपनगर की राजकुमारी के सौन्दर्य और आमेर-नरेश की इच्छाओ पर प्रकाश डालते हुए शेरशाह ने उस मामले मे अपनी अभिरुचि का कारण और सूबेदार को उनका कार्य समझाया। कासिम खाँ ने उनके प्रस्ताव को तो स्वीकार कर लिया किन्तु अपने भाग का स्पष्टीकरण अवश्य चाहा। इसका शेरशाह ने एक ऐसे रहस्य-मय एव कूटनीति-पूर्ण ढग से उत्तर दिया कि सूबेदार प्रसन्न होगए। अन्त मे योजना की सारी बातें भले प्रकार ध्यान में रख लेने के पश्चात उसे शीघ्रातिशीघ्र कार्यरूप मे परिणत करने का निश्चय हुआ। यह भी निर्णय हो गया कि दूसरे ही दिन सूबेदार अजमेर के लिए प्रस्थान कर देगे और वहाँ पहुँचकर योजना-सम्बन्धी आवश्यक वस्तुओ के जुटाने का प्रबन्ध करेगे तथा प्रत्येक कार्य की सूचना शेरशाह को देते रहेगे।

वहाँ से चलकर शेरशाह सम्राट् के प्रधान-मत्री तहव्वर खाँ से मिले और उनको सारी परिस्थिति से परिचित कराते हुए उनसे उस

बात की प्रार्थना की और उन्हे उस कार्य को करने के लिये तत्पर किया, जो भारत सम्राट् को प्रेरित करके, उनके द्वारा ही कराये जाने के लिये निश्चित था। इसके उत्तर मे तहव्वर खाँ की पहली बाते उसी प्रकार की हुई जैसी की सूबेदार कासिम खाँ ने की, किन्तु नवाब रुहेला भी तो पूर्ण रूप से सुलझे हुए घाघ और नीति-कुशल व्यक्ति हैं। शीघ्र ही उनकी शंका निवारण करके अपने कार्य को करने के लिए उन्हे सहर्ष तत्पर कर लिया। इसके पश्चात् उन्होने अपने स्थान का मार्ग लिया। आज की दौड-धूप के कारण उनका शरीर थककर चूर-चूर हो गया है। किन्तु कार्य की सफलता-पूर्वक व्यवस्था हो जाने से उन्हे बडा सन्तोष है। अतः अपने डेरे पर पहुँचकर शान्ति के साथ वे स्वशयन-कक्ष मे आकर विश्राम करने लगे हैं।

दूसरा परिच्छेद

आज सारे दिन वडी तेज गर्मी रही है। इस गर्मी की ज्वाला से तप्त होकर ससार मानो झुलस-सा गया है। भगवान् भास्कर रोष से रौद्र-रूप धारण करके दिन भर अग्नि उगलते रहे हैं। ज्येष्ठ मास की गर्मी के दिन और उस पर भी राजस्थान की जलती वालू पर बसा हुआ उसका पश्चिमी मरुस्थल भाग। इस भाड के सदृश उबलती हुई परितप्त बालू मे यात्रा करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। अत: यात्री-जन ऐसे कष्टदायक समय मे या तो अपने घरो से निकलते ही नही और यदि निकलते भी हैं तो छाता आदि अनेक रक्षा के तद्विरोधी अनुदानो को लेकर। इसके उपरान्त जिस समय गर्मी अत्यधिक तेज हो जाती है, तो वे काम छोडकर विश्राम करना आरम्भ कर देते हैं। किन्तु कुछ ऐसे भी लोह-पुरुष हैं जो कष्टानिष्ट की परवाह न करके प्रकृति के साथ भी सघर्ष में तत्पर हो जाते हैं। इस समय हमें यहाँ उन यात्रियों का विवरण देना वाछित नही जो ऐसे असुविधाजनक समय मे या तो घर से निकलकर कही जाते ही नही और यदि निकलकर चल भी देते हैं तो वृक्षादि की छाया में विश्राम करने लग जाते हैं और तब तक उठने का नाम नही लेते, जब तक कि सूर्यदेव पश्चिम की ओर मुँह फेर कर अपनी गर्मी को कुछ कम नही कर देते। हम यहाँ पर उन कर्मवीरों का विवरण देना चाहते हैं, जो सर्दी-गर्मी, धूप-छाँह, सुख-दु:ख किसी

वस्तु की परवाह न कर सघर्ष मे तल्लीन हो कर्त्तव्य-मार्ग पर अग्रसर हो स्वकार्य मे जुट जाते है और सफल होकर ही दम लेते है। हाँ, तो जिस दिन की गर्मी का हम उल्लेख कर रहे है उस दोपहर के समय ताप से पीडित होकर मनुष्य तो क्या पशु-पक्षी भी वृक्षो और झाडियो में जा छिपे है। किन्तु एक जन-यूथ इस उगलती ज्वाला में भी ठहरने का नाम न ले लगातार चलता ही जा रहा है। प्रस्तुत जन-यूथ किस प्रकार का है और किस अनिवार्य कारण-वश कही विश्राम करने का नाम नही लेता, यह हमारे विचार का विषय है। वाचक! आप शायद यह सोचते होगे कि यह कोई बरात है जो आने वाली रात्रि की शादी की धूम-धाम, आमोद-प्रमोद तथा प्रीति-भोज आदि की प्राप्ति के चाव मे कष्टा-निष्ट को न गिनकर शीघ्र पहुँचने के विचार से निरन्तर चली जा रही है अथवा किसी आक्रमणकारी सेनानी की वह वाहिनी है जो चाहे किसी नृप की ओर से हो या डाकू की ओर से, निरीह और निरपराध जनता को लूट कर धन से जेबे भरने के चाव में समयासमय, दु ख-सुख या जीवन-मरण का विचार न कर आगे बढी चली जा रही है। अपरच यह भी अनुमान हो सकता है कि यह किसी पर-दु ख को न समझने वाले उस हृदयहीन राजा या राज-कर्मचारी का सैलानी बेडा है जो अन्यथा दण्ड को इस ज्वाला के कष्ट से भी अधिकतर दारुण जान उसके विरोध मे मुँह खोलने तक का प्रयास ही नही कर सकता और स्वय को केवल भगवान् की दया पर छोड, नाना कष्ट सहते हुए भी उसको केवल भाग्य का चक्र जान चुप हो जाता है। ऐसे व्यक्तियो की भगवान् ही रक्षा किया करता है कारण कि जब एक व्यक्ति बलिदान को अपना अमिट अथवा अनिवार्य ध्येय तथा कर्तव्य मान अपने प्राणो की भी परवाह न कर, उसके लिये शुद्ध हृदय से तत्पर हो जाता है तो ससार की ऐसी कोई शक्ति या उपलब्धि नही जो उसके लिए सुगम न हो और उसकी सफलता का मार्ग साफ कर, उसके आगे घुटने न टेक दे, अर्थात्

बलिदानी वीर के उन्नतिशील मार्ग मे अवरोधक तत्त्व बन कर कोई शक्ति ठहर नही सकती । सफलता मे देर सम्भव है किन्तु, अन्धेर नही । अब पाठक ! आप प्रस्तुत जन-यूथ के विषय मे अवश्य यह जानने के लिये उत्सुक होगे कि वह किस प्रकार का है जो इस समय यात्रा कर रहा है ? यह रूपनगर नरेश की दौरे की टोली है । इसमे हाथी, घोड़े, सुखपाल, पालकी, छकडे आदि सभी प्रकार के वाहन हैं । मनुष्य भी, सैनिक और नागरिक, दोनो ही प्रकार के इसमे सम्मिलित होकर इसे खिचडी बना रहे हैं । अब इस यूथ को किस श्रेणी मे गिनेगे, इसका निर्णय तो आप पाठकों पर ही छोडते हुये हम यहाँ केवल इतना कह देना ही उचित समझते हैं कि भारत-सम्राट् शाहजहा के किसी अति आवश्यक आह्वान पर प्रस्तुत महाराज रानी तथा दास-दासियो सहित राजधानी को प्रस्थान कर रहे हैं । राजधानी से लौटने तक अपने राज्य के प्रबन्ध के लिये अपने पुत्र एव युवराज विक्रमकुमार को छोड दिया है जो अपने पिता की अनुपस्थिति मे राज्य-भार सम्भालेगे । सम्राट् का शीघ्रातिशीघ्र मिलने का आज्ञा-पत्र पाने के कारण वे बिना विश्राम तथा समयासमय का विचार किये, कूँच-पर-कूँच करते चले जा रहे हैं । इन लोगो ने ऐसी कई दोपहरियाँ चलने मे ही व्यतीत की हैं । दिन-भर चलते रहने का इनका निश्चित कार्य-क्रम है । अत. सूर्य के पश्चिम की ओर मुँह फेर लेने और वायु-मण्डल के शीतल हो जाने पर भी वह टोली अपनी क्रिया में यथावत लीन है ।

सन्ध्याकाल के आने तथा दिवसपति के अन्तरध्यान होते ही आकाश-मण्डल मेघाच्छन्न हो गया है । इस समय यह रूपनगर की राज-मण्डली अरावली की उन उपत्यकाओ के पार करने मे निमग्न है जो ढूँढार प्रदेश पर आच्छादित हैं । मार्ग पर्वतो की उन कन्दराओ मे से होकर जाता है जो इधर-उधर दोनो तरफ ऊँची-ऊँची पर्वत-श्रेणियों से घिरी हुई हैं । इन्ही कन्दराओ मे होकर एक नदी बहती है

ग्रौर शायद उसी के जल ने पहाडी को काट कर ग्रपना मार्ग बनाने के लिये ही इनको जन्म दिया है। इस स्थान के चित्र को विशेष रूप से समझने के लिये यो कहना चाहिये कि जैसे एक गोलाकार घेरे को एक रेखा दो स्थानो पर काट देती है उसी प्रकार पर्वत-श्रेणी से घिरे एक छोटे-से चौरस मैदान को शेष समतल भूमि से मिलाने के लिये नदी ने उन पहाडो को दो स्थानो पर काटकर दो घाटियाँ बनादी है, जिनमे से एक मैदान मे प्रवेश करने ग्रौर दूसरी उससे बाहर निकल कर दूसरी ग्रोर जाने का मार्ग बनाती है। सन्ध्या के समय रूपनगर की यह टोली एक घाटी को पार करके उसी मैदान मे पहुँच गई है जिसका कि हम वर्णन कर रहे है। इसी समय पीछे से ग्रौर ग्रधिक सघन काले-काले बादल ग्राकर भयकर रूप धारण कर ग्राकाश में उनकी तरफ तेजी से बढने लगे। कुछ-कुछ गर्द-गुबार भी उडने लगा ग्रौर साँय-साँय की ग्रावाज सुनाई देने लगी। थोडी ही देर मे मेघ की बौछारो के साथ उठती हुई ग्राँधी के झोको ने पूर्णतया उस घाटी को घेर लिया। झझा के झोको के साथ रेत के कण मिले हुये चले ग्रा रहे हैं जो सैनिको के मुँह पर इस प्रकार लग रहे हैं, मानो बन्दूक मे भर कर बजरी के छर्रे मारे जा रहे हो। ग्राँखो मे गिर कर रेत उन्हे खसखसी बनाकर बन्द कर रहा है। इसके साथ ही साथ वे बड़ी-बडी बूँदे, जो पृथ्वी पर पटाक-पटाक पड रही हैं, दृश्य को ग्रौर भी ग्रधिक ग्ररुचिकर बना रही हैं। प्रस्तुत झंझावात के ग्रन्तर्गत इस मण्डली ने, ज्यो ही ग्रागे के दर्रे मे प्रवेश करने के लिये पैर बढाये कि ऊपर से ईंट-पत्थरो की वर्षा होने लगी। ग्रगला मार्ग बन्द पाया गया। पिछले की जाँच की गई तो वह भी बन्द मिला। ग्रब तो उनको ऐसा जान पडने लगा कि किसी शत्रु ने उन्हे इस प्रकार से इसी चूहो की चूहेदानी सदृश चौबन्दी मे बन्द कर समाप्त करने का निश्चय किया है। किन्तु यह रहस्यमय शत्रु कौन है ग्रौर किस ग्रपराध-वश इस घाटी में छिपकर उनको समाप्त किये देता है, इसका कुछ पता नही

चल सका। बूँदो के साथ-साथ आते हुये तीक्ष्ण वायु के झोके इस घाटी पर विचित्र ढग से अपनी अलग चढाई कर रहे हैं। रात्रि के आगमन और आकाश के मेघो से आच्छन्न होने के कारण अन्धकार इतना प्रगाढ हो गया है कि हाथ मे हाथ मारने पर भी कुछ नही सूझता। यह मण्डली इस प्रकार की चिन्ताओ मे निमग्न हो ही रही है कि शत्रु ने पहाडो की चोटियो पर से नीचे उतर कर चारो तरफ से घेरा डालते हुये हल्ला बोल दिया। आक्रमणकारी चतुर सेनानी के अधीन 'शक्ति माता की जय' का घोर रव करते हुये रूपनगर-मण्डली पर आक्रमण कर रहे हैं। रूपनगर-महाराज शत्रु के आक्रमण के प्रतिशोधनार्थ युद्धारम्भ करने से पूर्व यह जानना चाहते हैं कि उनका शत्रु कौन है और किस अभिप्राय से उनके साथ सग्राम छेड रहा है? इसके उत्तर मे शत्रु-पक्ष की ओर से केवल इतना ही बताया गया है कि पिण्डारी सेनापति शेरेजग ने धन की लूट के विचार से आक्रमण किया है। जब महाराज ने धन देने का भी आश्वासन दे दिया तो शत्रु की माँग राजकुमारियो तक पर पहुँच गई। इस घृणाजनक अपमान पर महाराज रूपनगर को भी अत्यन्त क्रोध आ गया और वे भी युद्ध करके प्राण देने पर तत्पर हो गये, कारण कि वे भी एक क्षत्रिय नरेश हैं और अपमान की अपेक्षा युद्ध मे प्राण देने को कई गुना उत्तम वस्तु समझते हैं। अत प्राणो के बलिदान का निश्चय करके वे अन्तिम रूप से युद्ध मे सलग्न हो गये। इसलिये युद्ध ने अत्यन्त भीषण तथा भयंकर रूप धारण कर लिया। यद्यपि रूपनगर वाले हथेली पर प्राणो को रखकर बडी वीरता से लड रहे हैं, फिर भी उनका पक्ष शत्रु-सेना की गति-विधि एव अवस्था का ज्ञान न होने के कारण हानि पर हानि सह रहा है। और पूर्ण पराक्रम के अर्थात् एक-एक वीर द्वारा अनेक शत्रुओं के मारे जाने के उपरान्त भी विजयश्री उनसे दूर होती जा रही है। इसका सब से बड़ा श्रेय शत्रु की अधिक सख्या तथा उसके परिस्थिति ज्ञान एव उत्तम स्थान-प्राप्ति को ही दिया

जा सकता है। कुछ देर के युद्ध के पश्चात् रूपनगर वाले युद्ध मे पूर्ण-तया परास्त हो गये। उनका प्रत्येक वीर सग्राम मे काम आ गया। यद्यपि हताहत शत्रुओ की सख्या उनसे कई गुना अधिक रही है, फिर भी थोडी सख्या वाली रूपनगर-मण्डली को अपनी शक्ति बहुत ज्यादा अनुभव हुई है। अपने प्रत्येक सैनिक के युद्ध में लडकर हताहत होने पर वे भी युद्ध करते हुये पिण्डारियो के द्वारा बन्दी हो गये। पिण्डारी सेनापति ने अपनी विजय घोषित करते हुये महाराज और महारानी को अपने साथ एक बन्दी के रूप मे ले जाने का निर्णय किया और शेष रूपनगर वालो की मरहम-पट्टी की व्यवस्था कर अपने घर को वापिस लौट जाने का आदेश दे दिया। साथ ही उनको यह भी कह दिया कि यदि विक्रमकुमार दोनो राजकुमारियो के डोले, एक सहस्त्र घोडे और एक लाख रुपया फिरौती के रूप मे हमारे पास भिजवा देगे तो हम उनके माता-पिता को छोड देगे, अन्यथा उचित समय तक प्रतीक्षा करने के उपरान्त इन दोनो को फाँसी पर लटका देगे और बलात् वाँछित वस्तुएँ शत्रु से ले लेगे। इसी आशय का एक पत्र भी उनके पास सीधा भिजवा रहे हैं। इस समय रूपनगर की राजकुमारिया केवल पिण्डारी दल के सेनानी शेरेजग की दया पर हैं। पिण्डारियो का कोई किला या रहने का निश्चित स्थान नही है। उनका निवास पर्वतो के अन्तर्गत ही रहता है, अत फिरौती उसी स्थान पर ही पहुँचनी चाहिये।

महाराज और महारानी को शत्रु के बन्दीगृह का अतिथि बनाकर तथा अपने मृत सैनिको से सदा के वास्ते विदा लेकर रोते विलाप करते रूपनगर के घायल व्यक्ति कई दिन की कष्टपूर्ण यात्रा मे भूखे-प्यासे भटकते हुए अपने नगर मे पहुँचे और मार्ग की समस्त दुर्घटना का समाचार तात्कालीन शासक विक्रमकुमार को कह सुनाया। इस दुखद सम्वाद के पाते ही विक्रमकुमार के हृदय को बडा प्रबल आघात पहुँचा। राजमहलो मे उसे सुनकर कुहराम मच गया। प्रत्येक स्त्री-पुरुष शोक से आँसू

बहा रहा है। राज के झण्डे नीचे झुक गए हैं। नगर-निवासियो ने शोक-चिह्न धारण कर लिए हैं। प्रत्येक स्थान शोक का अड्डा बन गया है। राजसभा मे उक्त दुर्घटना और पिण्डारियो की चुनौती के विषय को लेकर, कर्तव्य का निश्चय करने के लिये विचार-विनिमय होने लगा है, जिसमे यह तय पाया है कि जब तक अधिकृत रूप से कोई सम्वाद प्राप्त न हो, इस दशा मे कोई पहल न की जाय, क्योकि यह शासन के सम्मान का प्रश्न है। इस सम्वाद को पाकर राजकुमारियाँ भी बडी घबरा गईं और उचित युक्ति को सोच निकालने की चेष्टा करने लगी, किन्तु समस्या का कोई तात्कालिक हल न सूझ सका। एक नृपति द्वारा एक डाकुओ के सरदार के लिए प्रचुर धन-राशि और राज्य का मान, राजकुमारियो का बलिदान, एक अत्यन्त हेय एव अपमानजनक प्रस्ताव है, जिसे कोई वीर राजपूत जीवन रहते स्वीकार अथवा सहन नही कर सकता। किन्तु दूसरी ओर माता-पिता की इस प्रकार की दुर्दशा को देखकर उनकी मुक्ति का उपाय न करना भी कोई उत्तम सन्तान सहन नही कर सकती, चाहे उसे कितना ही बडा बलिदान क्यो न करना पडे। इसी विचार मे कई दिन व्यतीत हो गए, किन्तु ऐसा कोई उपाय ध्यान में नही आया जो प्रस्तुत उलझन से मुक्ति दिला सके।

प्रस्तुत दुविधाजनक स्थिति के अन्तर्गत एक साधुवेषी पिण्डारी भिक्षार्थ आया और एक बटुआ छोड कर चला गया। नौकर-चाकरो ने यह समझ कर कि भिखारी का बटुआ भूल से रह गया है, उसे राजदरबार मे पहुँचा दिया। जब दो-एक दिन उसे लेने के लिये कोई न आया तो वहाँ पर उसको खोलकर देख लिया गया। यह देखकर सबको बडा आश्चर्य हुआ कि बटुए के अन्दर एक डिब्बा निकला है, जिसमें रूप-नगर के राजकुमार के नाम पिण्डारी सेनापति शेरजग का पत्र रखा हुआ मिला है। पत्र का मजमून नीचे लिखे अनुसार है—

"प्रिय बन्धु, जै माता की !

आपके माता-पिता हमारे बन्दीगृह के अतिथि है। हमने उनकी फिरौती के रूप मे कुछ वस्तुए और प्रचुर धन की परस्पर अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने के विचार से याचना की है, किन्तु दुख है कि आपने हमारी प्रार्थना पर अब तक कोई ध्यान नही दिया है। अब हम आपको अपने अन्तिम निर्णय की सूचना देते हैं कि यदि कृष्ण-जन्माष्टमी तक आप हमारी माँग को पूरा करने मे असमर्थ सिद्ध हुए तो हमे आपके माता-पिता को शक्तिदेवी के मन्दिर मे बलि का बकरा बनाना पडेगा और आपको अपना प्रबल शत्रु समझकर जो कुछ हमसे आपके अनिष्ट मे बन पडेगा, करना होगा। यदि आपने हमारी माँग स्वीकार करके हमारे साथ मित्रता का व्यवहार किया तो हम सदा आपकी सहायता तथा सेवा करते रहेगे।

विनीत—शेरेजग 'पिण्डारी दलपति।'

इस पत्र के प्राप्त होने पर अब पिण्डारियो के दुस्साहस के विषय में कोई सन्देह ही नही रह गया है। अत अब समस्या का गम्भीर रूप से कुछ न कुछ निर्णय होना ही चाहिए, यह सोचकर राज्य के महामत्री और महाराज के अन्तरग परामर्शदाता वयोवृद्ध श्री हरीहर पारीक की अध्यक्षता मे राजभवन के अन्दर एक मत्रणा हो रही है। इस अन्तरग सभा मे राजकुमारियाँ भी सम्मिलित हैं। विचार-विनिमय के पश्चात् यह निश्चय हुआ है कि पिण्डारी सेनापति शेरेजग को एक पत्र द्वारा यह सूचना दे दी जाय कि हमको माँगों के विषय मे प्रबन्ध करने के लिये विजयादशमी तक का अवकाश चाहिए, सो दिया जाय और शेरेजग के ऱ्स इस पत्र के पहुँचाने तथा समय लेने का कार्य स्वय पारीक जी के नयत्रण मे हो, ताकि कुछ दिन के लिए अनिष्ट की घडी टल जाय। इसी समय मे किसी ऐसे समर्थ नरेश को भी मित्र बनाना चाहिए जो रूपनगर राज्य के सम्मान को अपना सम्मान समझ, तद्रक्षार्थ

प्रस्तुत हो जाय, साथ ही इस कार्य को करने मे समर्थ भी हो। इस पर कुमारी किरणमयी को सहेली व चचेरी बहन राजबाला ने कहा कि 'यह कार्य मेरे ऊपर छोडा जाय। मुझे अपने एक स्वजन की परीक्षा करनी है। परीक्षार्थ कोई उचित अवसर तथा विषय न मिलने के कारण मै चुप बैठी रही हूँ। अब अवसर हाथ आ जाने पर उसकी योग्यता और वीरता का भी पता लगाना है।' पारीक जी के द्वारा राजबाला से उस व्यक्ति का परिचय तथा विस्तृत विवरण कार्यसाधन की क्षमता के विचार से पूछे जाने पर उसने उत्तर दिया 'जिस समय मै अपनी ननिहाल करौली मे गई थी तो वहाँ मेरी अकस्मात् इन्द्रगढ के नरेश सरदार मौकमसिह जी से एक सहभोज के अवसर पर भेंट हो गई। उस समय राजघराने के वहाँ पर कई स्त्री-पुरुष थे और इस दोहे की सत्यता पर विचार-विनिमय कर रहे थे कि—

'इक हाडा बूँदी धनी, इक राणा मेवार।
उन हिन्दुन की पति रखी, इन राखी तलवार॥'

इस पर मुझसे न रहा गया और झट कह ही तो दिया कि महाशय! अभी तक तो हाडा की तलवार की वीरता का कोई प्रसग हमारी दृष्टि में आया नही है। हम इसकी सत्यता को किस प्रकार अगीकार कर सकते हैं? इस पर क्रोध मे आकर इन्द्रगढ नरेश श्री मौकमसिह जी ने कहा, 'हाथ कगन को आरसी क्या है, हमारी वीरता की प्रत्यक्ष आजमाइश कभी भी की जा सकती है।' अत में उसी दिन से अवसर की तलाश मे रही हूँ कि कब बूँदी की तलवार की परीक्षा हो। सौभाग्य से अब इस परीक्षा का विषय तथा अवसर दोनो हाथ आ गए हैं, फिर क्यो न जाँच करली जाय कि उन वचनो मे कितनी सार्थकता है और हाडा की तलवार कहाँ तक वीरत्व प्रकट करके स्वनामधन्य हो सकती है?—

जब क्षीर भी है और यन्त्र भी है और दिल ने भी यह ठानी है।
तो साफ जॉच क्यो ना करले, इस दूध मे कितना पानी है॥'

पारीक जी ने तथा अन्य उपस्थित सभ्य जनो ने राजबाला की युक्ति को उक्तिसगत बताया और उसे कार्य का रूप देने का समर्थन किया। तदनुसार राजबाला के द्वारा इन्द्रगढ नरेश को एक पत्र लिखवाया गया, जिसमे रूपनगर की प्रस्तुत समस्या का विस्तार के साथ वर्णन किया गया और रूपनगर की प्रतिष्ठा की रक्षार्थ हाडा तलवार की परीक्षा ली जानी निश्चित हुई है, यह सूचना भी उन्हे दे दी गई। इस कार्य का सम्पादन भी श्री पारीक जी के ऊपर ही छोड दिया गया।

अगले दिन पारीक जी यात्रार्थ प्रस्तुत हो गए और दोनो कार्यो को सफलतापूर्वक करके एक सप्ताह के अन्तर्गत वापस लौट आए। उनकी योग्यता एव कार्यकुशलता की सर्वत्र प्रशसा होने लगी। पहली सफलता तो यह हुई कि पिण्डारियो के सेनापति के पास पत्र पहुँचाकर उसको बातो ही बातो में ऐसा उल्लू बनाया गया कि उसने पर्याप्त अवधि देना स्वीकार कर लिया। यही तक नही, उससे यह भी स्वीकार करा लिया गया कि इस अवधि मे वह महाराज और महारानी को बन्दीगृह मे किसी प्रकार का कष्ट नही देगा तथा उनके भोजन आदि के प्रबन्ध के लिए स्वधर्म के ऐसे व्यक्तियो को नियुक्त करेगा, जिन पर महाराज का पूर्ण विश्वास हो और वह भोजन आदि की सामग्री किसी प्रकार उनकी इच्छा के प्रतिकूल न हो।

इसके अनन्तर वे इन्द्रगढ गए। वहाँ पर उन्होने सरदार मौकमसिंह से भेट की और पत्र देकर रूपनगर के राजघराने की सारी सकटपूर्ण समस्या उनके सम्मुख उपस्थित की। उसको सुनकर इन्द्रगढ के राव साहब गम्भीर हो गए। दूसरे दिन अपने बन्धु प्रवर बूँदी नरेश श्री छत्रसाल जी से जाकर मिले और समस्त वृत्तान्त उनसे निवेदन किया। छत्रसाल जी ने पारीक जी को बूँदी आमन्त्रित किया और अपने

विशेष परामर्शदाता सरदारो की अन्तरंग सभा में यह मामला विचारार्थ उपस्थित किया, जिस पर उन्होने यही परामर्श दिया कि इस हाडा तलवार की परीक्षा तथा एक मित्र राजा की प्रतिष्ठा की रक्षा मे हाडौती को अपनी बुद्धि और शक्ति दोनो जुटा देनी चाहिए। इसके पश्चात् युवक हाडा नरेश श्री छत्रसाल जी ने कोटा जाकर अपने चचा वयोवृद्ध महाराज माधौसिह जी, जिनकी वीरता की ख्याति-सुगन्धि से समस्त देश सुवासित हो रहा था, के साथ भी प्रस्तुत विषय को लेकर मत्रणा की। कोटा नरेश ने भी यही परामर्श दिया कि रूपनगर के राजघराने की प्रतिष्ठा की रक्षा मे हाडा तलवार उस समय, जबकि उसकी परीक्षा हो रही है, अपने म्यान से बाहर अवश्य निकलनी चाहिए। अत सहायता का निर्णय पूर्ण हो गया। पारीक जी के द्वारा रूपनगर को यह उत्तर भिजवा दिया गया कि, 'विजयादशमी से पूर्व ही रूपनगर के महाराज और महारानी को हम बन्धन-मुक्त कराकर रूपनगर पहुँचा देगे। रूपनगर के राजघराने को किसी प्रकार की उत्सुकता एव उत्तेजना प्रकट न करके निश्चिन्त रूप से चुपचाप अपने घर बैठा रहना चाहिए, क्योकि हाडा तलवार बिना किसी अन्य शक्ति की सहायता के इस कार्य को सम्पन्न करेगी। इसके अतिरिक्त हम किस योजना को लेकर क्षेत्र मे उतरेगे, उसके विषय मे भी रूपनगर वालो को समय से पूर्व नही बतलाएगे।' मुक्ति के आश्वासन को पाकर रूपनगर की जनता अत्यन्त प्रसन्न हुई और निश्चित होकर अपने काम-काज मे लगी।

तीसरा परिच्छेद

राजस्थान के बहुत से पार्वत्य स्थान अत्यन्त दुर्गम और भयकर हैं और उनमे भी सबसे अधिक बीहड है बनास नदी का वह विस्तीर्ण खादर जो पहाडो की घाटियो के बीच में मीलो तक झाडियो और वृक्षो से ढका हुआ पडा है तथा जहाँ पर भयकर हिसक वन्य-पशुओ का निवास है। ऐसे खादर का विशेष रूप से उल्लेखनीय भाग पडता है हिण्डौली के निकट-पास, जहाँ के जगलो मे मनुष्य को दिन मे घुसते हुए भी भय प्रतीत होता है, अबेर-सबेर की कौन कहे? राजस्थान की नदियाँ वर्षाकाल मे तो बडे भयकर वेग से उमड कर बहती है, किन्तु ग्रीष्म ऋतु मे गर्मी की अधिकता के कारण बिल्कुल सूख जाया करती हैं। उस समय केवल उनका जीर्ण-शीर्ण शुष्क कलेवर मात्र ही शेष रह जाता है। यही दशा इन दिनो प्रस्तुत बनास नदी की है। उसमे इस समय इस ग्रीष्म ऋतु मे केवल इतना ही पानी रह गया है, जितना कि प्राय नाले-नालियो मे हुआ करता है। जल के सहारे रेतीली भूमि मे झाडियो की कमी के कारण, जल के निकट समान्तर आवागमन का मार्ग बन गया है। मुख्य तट जो कही-कही जल की सतह से कई सौ फीट ऊँचा है ऊबड-खाबड और झाड-झकाड पूर्ण होने के कारण चलने-फिरने के लिए प्रत्येक प्रकार से अनुपयुक्त है। इन सब कारणो से इस घाटी के अन्दर दिन मे अन्धकार और जन-

शून्यता रहती है। इससे उसमे प्रवेश करने का विरला ही मनुष्य साहस कर सकता है प्रत्येक नहीं। रात्रि के समय मे तो यह स्थल अन्धकार से ऐसा ढक जाता है कि जो हाथो-हाथ भी कुछ न सूझ सके। इधर-उधर से आने वाली जगली जानवरो की भयकर आवाजे भय से हृदय को कपा कर वीर पुरुषो को भी कायर बना देने वाली होती हैं। इसी नदी की खाई सदृश जल-प्रवाह से बनी एक पगडण्डी की तरफ हम अपने पाठको का ध्यान आकर्षित करते हैं। अमावस्या की अर्द्ध-रात्रि का समय है। इस समय हर तरफ घटाटोप अन्धकार छा रहा है। सबसे अधिक आज की इस अमावस्या की पूर्ण तिमिरमयी रात्रि ने, जो कि विशेष रूप से चोर और वचको के लिए एक विभूति समझी जाती है, दृश्य को और भी अधिक भयकर बना दिया है। ठीक ऐसे ही समय मे एक बीस-पच्चीस मनुष्यो की टोली नदी के गर्भ मे गुप्त रूप से छिपते-छिपते उस दुर्ग की ओर बढ रही है जो कि उससे कुछ मील दूर पश्चिम की ओर सामने पहाडी पर दृष्टिगोचर हो रहा है। नदी दुर्ग की पिछली दीवार से सटी हुई है जो एक तरफ स्वय दुर्ग की खाई का काम करती है और शेष तीन तरफ की खाई को जलदान करती है। इस समय नदी मे पानी की कमी के कारण खाई भी सूखी पडी है। इसी खाई को लक्ष्य बना कर यह टोली आगे बढ रही है। टोली का नायक सबसे आगे-आगे इस निर्भीकता से चल रहा है, मानो, यह भूमि उसकी चिर-परिचित हो। शेष सब मनुष्य बिना किसी प्रकार का शब्द किये धीरे-धीरे उसका अनुकरण करते हुए बढे चले जा रहे हैं। दुर्ग की दीवार के निकट पहुँच कर नायक रुक गया और अपने साथियो को ऊपर तटवर्त्ती निकट की झाडी मे बैठने का आदेश दे आप स्वय इधर-उधर इस प्रकार घूमने लगा मानो किसी व्यक्ति की प्रतीक्षा कर रहा हो। इतने ही मे एक धीमी-धीमी सीटी की आवाज़ सुनाई दी। उस आवाज़ पर प्रस्तुत टोली-नायक ने भी सीटी बजाई। इस सीटी की

आवाज को सुनकर उस पक्के कुएँ की शिला का एक पत्थर धम से नीचे की तरफ को सरक गया जो दुर्ग की दीवार से दस-पन्द्रह हाथ दूर नदी के तट से सटा हुआ उस स्थान पर खडा है, जहाँ से नदी के पानी की धारा खाई से पृथक् होकर आगे को बहती है। पत्थर के नीचे की ओर सरकते ही उस गोलाकार पक्के घेरे में एक तीन हाथ चौडा और पाच हाथ लम्बा खिडकी के सदृश द्वार खुल गया जिसमे से एक व्यक्ति धीरे-धीरे ऊपर की ओर आता दीख पडने लगा। टोली नायक बडी तेजी से बढकर उस खुले हुए द्वार के निकट पहुँच गया और मन्द स्वर मे पुकारने लगा 'चमेली, क्या कार्य ठीक है ?'

'हाँ श्रीमान्, कार्य बिल्कुल ठीक है। तीन-चार मनुष्यो को लेकर मेरे साथ-साथ शीघ्र आ जाइये। देर करने से कार्य बिगड़ सकता है।' इतना सुनते ही टोली नायक ने एक विचित्र ढग की सीटी बजाई, जिस पर झाड़ी मे छिपे हुये व्यक्ति तत्काल उनके निकट आकर खडे हो गये। नायक ने उनको निकट पाकर आदेश दिया कि 'तुम लोगो मे से पाच व्यक्ति हमारे पीछे इस कूप के अन्दर चले आयेंगे, शेष एक-एक, दो-दो हाथ के अन्तर से इस प्रकार छिप जायेंगे, कि दुर्ग की दीवार पर से अथवा इधर-उधर से हमको देखकर यहाँ होने वाली घटना का कोई आभास प्राप्त न कर सके।' सैनिको ने 'बहुत अच्छा' कहा और सब अपने-अपने कार्य मे निमग्न हो गये। पाँच व्यक्ति तो नायक महोदय के पीछे-पीछे उस कूप-द्वार के अन्दर घुस गये जो अभी खुला है और शेष आदेशानुसार बिखर कर नदी के खादर मे छिप गये है। पाठक ! यह कूपद्वार और कुछ नही, दुर्ग के अन्दर जाने के लिए एक गुप्त सुरग है। सम्भवत: गढ के बनाने वाले उसके स्वामी ने नदी स्नान के वास्ते अथवा जल आदि नदी से मँगावे के लिये उक्त सुरग का निर्माण कराया होगा। जिस खिडकी के खुलने पर अभी-अभी नायक और उसके पाँच साथी उसमे घुसे है, वहाँ से नीचे उतरने की

सीढियाँ बनी हुई हैं जिन पर शनैः शनैः सब लोग बिना कुछ कहे-सुने पाँच-छः गज नीचे उतर गये हैं। अब सामने साफ एक दहलीज दृष्टिगोचर हो रही है। दहलीज मे मन्द-मन्द प्रकाश हो रहा है। पाठक! अब हमको उस व्यक्ति की ओर ध्यान देना चाहिये, जिसको नायक ने 'चमेली' के नाम से पुकारा है। यह स्त्री देखने मे एक अत्यन्त सुन्दर और चतुर बीस-बाईस वर्ष की आयु की अत्यन्त चचला और फुर्तीली युवती प्रतीत होती है।

सम्भवतः यह इस टोली-नायक की कोई जासूस है, जिसने एक योगिन का वेश धारण कर नायक की किसी विशेष कार्य-सिद्धि के वास्ते शत्रु के दुर्ग मे प्रवेश किया है। पाठक! अधिक उत्सुक न हो, इसका सारा रहस्य अभी खुला जाता है। अब यह चमेली नामक युवती योगिन क्या करती है उस पर दृष्टिपात कीजिये। दहलीज मे लगभग पचास कदम अन्दर जाने पर चमेली रुक गई और अपने साथी टोली-नायक को वही खडे रहने का सकेत करके, आप लगभग सौ कदम और उसी दहलीज मे बढ गई। सामने एक दरवाजा उसको समाप्त करके दुर्ग मे निकलता है। उस दरवाजे पर मजबूत किवाड लगे हुए हैं। सुरग के द्वार को खोल कर उसमे अन्दर जाने से पूर्व ही इस युवती ने यह बाहर वाली किवाड़े इसलिये बन्द करदी हैं ताकि दुर्ग की तरफ से कोई व्यक्ति आकर दहलीज होने वाली कार्यवाही से अवगत न हो जाय। अब उन किवाडो के निकट दोबारा पहुँच कर यह जानने के लिये कुन्दे को पकड कर उसकी फिर से जांच की है कि वह ठीक तौर से बन्द है या नहीं। उसे ठीक तरह से बन्द पाकर वह तत्काल पीछे आ गई और अपनी फितूही की जेब से एक चाबियो का गुच्छा निकाल लिया है जिसमे दुर्ग की सारी चाबियाँ हैं। यह चाबियो का गुच्छा उसके हाथ किस प्रकार से लगा है यह रहस्य आगे खुलेगा। अब यह देखना चाहिये कि यह योगिन करती क्या है? हाँ, तो चाबियो का गुच्छा लेकर और उनमें से एक चाबी छाट कर

इसने एक दरवाजे के किवाड खोल दिये जो कि प्रस्तुत दहलीज मे से खुलते है। उस द्वार के खुलते ही एक तहखाना दृष्टिगोचर होने लगा है जिसमे दो व्यक्ति बन्द पडे हैं। पाठक! पहचानिये, इस तहखाने मे यह बन्दी-जन अन्य कोई नही केवल रूपनगर के महाराज और महारानी है। तहखाने के द्वार को आज एकाएक रात्रि के समय खुलने और एक स्त्री के साथ-साथ पाँच-छ. अज्ञात व्यक्तियो को प्रवेश करते देखकर, वे भय से काँप कर आश्चर्यचकित हो कुछ कहने को तत्पर हो गये। तभी चमेली ने तत्काल उगली को मुह पर रखकर धीरे से कहा, 'चुप, चुप, शत्रु नही मित्र है। हम आपको बन्धन-मुक्त करने आये हैं। दोनो चुपचाप हमारे साथ-साथ चले आइये।' रूपनगर के महाराज और महारानी ने इतना सुनकर उस समय बिना कोई शब्द मुँह से निकाले आगन्तुको का अनुकरण करना आरम्भ कर दिया। तहखाने से निकलकर अब सब लोग दहलीज मे आ गये। दहलीज मे दुबारा लौटकर चमेली फिर एक मिनट खडी होकर कान लगाकर यह जानने की चेष्टा करने लगी कि दुर्ग मे से हम लोगो की कार्यविधि को किसी ने देखा तो नही है एव दुर्ग मे कोई व्यक्ति जाग तो नही रहा है। उसे यह जानकर अत्यन्त हर्ष एव सन्तोष हुआ कि उसका कार्य बडी उत्तमता के साथ सम्पन्न होता जा रहा है। कर्त्तव्य का एक बहुत बडा भाग सफलतापूर्वक समाप्त हो चुका है पर किसी को अभी तक कानोकान खबर नही है। सब लोग दुर्ग मे कुम्भकर्ण की निद्रा मे पडे सो रहे हैं। दुर्ग मे हर तरफ सन्नाटा छाया हुआ है। सदर फाटक को छोडकर जहाँ पर उसके अन्दर से बन्द हो जाने पर भी कोई पहरेदार शायद जाग रहा हो, उसमे अन्यत्र कही कोई चिड़ी के चौकने का शब्द भी सुनाई नही पडता। किसी ने अमावस्या की सतर्कता पर भी विचार नही किया कि इसके अन्दर क्या कुछ हो सकता है। अस्तु, अब चमेली टोली-नायक के निकट आकर कहने लगी—

"अब मै इस तहखाने का कुन्दा खोलती हूँ, आप लोग सजग एव

सचेत रहे। इस दुर्ग का स्वामी और आपका शत्रु, पिण्डारियो का सेनानी शेरेजग मैने इस पिजडे मे बन्द कर दिया है। यद्यपि मैने उसको काफी से अधिक शराब पिलाकर बेहोश कर रक्खा हे, किन्तु फिर भी आप लोगो को बडी फुर्ती और चतुरता से कार्य करने की आवश्यकता है, क्योकि प्रथम तो वह सबल तथा शक्ति-सम्पन्न शत्रु है और दूसरे वह अपने ही स्थान मे है, यदि कही हम लोग अपने कर्त्तव्य मे तनिक भी भूल कर गये तो फिर खैर नहीं है। इस पर नायक ने चमेली के सर पर हाथ फेर कर कहा 'शाबाश चमेली ! अब समझे तुम्हारे चातुर्य्य को। सम्भवत. तुम आज ही अपने मित्रो के बन्धन छुडाने के साथ साथ शत्रु को बन्दी बनाने की व्यवस्था भी कर चुकी हो। तुम बडी अच्छी और बुद्धिमान् हो। खैर, कोई चिन्ता नही, तुम कुन्दा खोलो। अब हम परिस्थिति को सभाल लेगे।' इतना सुनते ही चमेली ने दूसरे तहखाने का भी कुन्दा खोल दिया। कुन्दे के खुलते ही सब लोग तहखाने मे घुस पडे। वहाँ पहुँच कर क्या देखते हैं कि तहखाने मे मन्द-मन्द शमादान जल रहा है। एक गद्दे पर मसनद के सहारे शेरेजग पडा खुर्राटे ले रहा है। उसके मुँह से शराब की दुर्गन्ध की लपटे उठ रही हैं। एक निकट की दरी पर इकतारा पडा है। शायद शेरेजग के मनोरजनार्थ बजाते-बजाते योगिन इसको छोडकर कही चली गई है। टोली के अन्दर पहुँचने की आहट से उसकी झपकी टूटी और उसने आँखे फाड कर परिस्थिति समझने के लिये इधर-उधर देखा। सभवत वह यही निश्चय नही कर पा रहा है कि वह स्वप्न है अथवा जागृत अवस्था में वह सब दृश्य देख रहा है और यह अज्ञात व्यक्ति योगिन के साथ मित्र हैं या शत्रु। इसी समय टोली-नायक ने निकट पहुँच कर उसके मुँह को हथेली से इतनी कडाई से दाब लिया कि उसका मुँह खुलना असभव हो गया। साथियो ने उसी समय उसके हाथ-पैर पकड कर मुश्के कस दी। इसके उपरान्त नायक ने उसके मुँह से अपनी हथेली हटाकर उसमे कपडा ठूँस दिया और ऊपर से पट्टी बाँध

दी। अब शेरेजग हिलने या बोलने के लिये बिल्कुल असमर्थ हो गया। नायक का सकेत पाकर साथियो ने उसे उठा लिया और सब लोग शीघ्र दुर्ग से बाहर होने के लिये सुरग की ओर को बढ चले। कमरे से बाहर निकलते हुए चमेली ने शमादान बुझा दिया। अत सारी दहलीज में अन्धकार छा गया। इस सघन अन्धकार मे सब लोग टटोल-टटोल कर धीरे-धीरे शान्ति-पूर्वक उस दहलीज से बाहर की ओर बढने लगे। नायक और चमेली रूपनगर महाराज और महारानी की सहायता करने लगे। अन्य साथी शेरेजग को घसीट कर ले चलने लगे। अन्त मे अन्धकार को चीरते हुए बडी कठिनाई के साथ सुरग पार करके सब लोग बाहर आ गये। बाहर आकर नायक ने फिर धीमी धीमी सीटी बजाई जैसे उस कार्य समाप्ति की सूचना साथियो के वास्ते विजय सदेश हो। सीटी के शब्द को सुनकर सब लोग वहाँ पर एकत्रित हो गये और नगी तलवार के साथ महाराज, महारानी और बन्दी की रक्षा करते हुये उसी नदी-गर्भ वाली पगडण्डी द्वारा जिससे कि वे लोग आये थे, लौट कर जाने लगे। इस समय कार्य की सफलता-पूर्वक सम्पन्नता के कारण सभी अत्यन्त प्रसन्न है। किन्तु अनौचित्य का विचार कर अपनी प्रसन्नता को कोई शब्दो मे प्रकट नही कर सकता है। सब लोग लोहयत्र के समान बिना किसी प्रकार के शब्द किये चुपचाप चले जा रहे हैं। लगभग तीन मील तक ये लोग यो ही नदी के अन्दर चलते रहे और एक ऐसे स्थान पर पहुँच गये जहाँ से न किला दिखाई देता है और न उसके अन्दर की आवाज ही सुनाई देती है। अब टोली-नायक ने मुँह खोला और कहा 'भाई महासिंह, महाराज और महारानी पैदल यात्रा करते हुए थक गये होगे। अब हम ऐसे स्थान पर आ गये हैं जहाँ शत्रु हमारा कुछ बिगाड नही सकते। यहाँ से बून्दी के वास्ते मार्ग भी सीधा और साफ है। अत घोडो को यही ले आओ। अपने महाराज को महाराज और महारानी रूपनगर

की सकुशल मुक्ति और शत्रु के बन्दी हो जाने का शुभ समाचार भी सुना देना और वाहनादि को प्रस्थानार्थ तैयार कराते आना। इस समय हमारा निश्चय यही है कि इन्द्रगढ पहुँच कर ही दम ले। यात्रा के लिए यह तड़क का समय भी अच्छा है।'

'बहुत अच्छा!' कहकर उसी टोली मे से एक दूसरे व्यक्ति निकले और तेजी के साथ आगे बढ गये। टोली के शेष व्यक्ति वही ठहर कर घोडो के आने की प्रतीक्षा करने लगे। नायक ने महाराज रूपनगर को सम्बोधन करके कहा, 'महाराज! घोडे हमने इसलिए किले से काफी दूर छोड दिये क्योकि उनकी आहट पाकर शत्रु सजग हो जाते। दूसरे यह नदी मार्ग जिससे कि दुर्ग तक पहुँचना तै था घोडे ले जाने के अनुकूल भी नही है। वहाँ घोडो की कोई जरूरत थी भी नही।"

रूपनगर महाराज अभी तक यह ही नही जान पाये हैं कि उनको मुक्ति प्रदान करने वाले सज्जन कौन हैं और कहाँ के हैं तथा किस प्रयोजनवश उन्हे मुक्त करने आये हैं? वे बून्दी आदि का नाम सुनकर कुछ अनुमान लगाने मे निमग्न होने के कारण शिष्टाचार के नाते 'हाँ, हाँ' करके चुप हो गए। नायक महोदय का भी अभी अधिक वार्ता करने का विचार नही था। अत. वे भी चुप हो गए और शेरेजग के मुँह की पट्टी खोलने लगे। इसी समय महासिंह भी घोडो को साथ लेकर आ गए। वे अपने घोड़े पर सवार होकर अन्य पाँच घोडो को सईसों द्वारा लिवाकर लाए हैं। घोडो के आ जाने पर एक घोडे पर महाराज और महारानी रूपनगर को सवार कराया गया। एक पर स्वय टोली-नायक सवार हुए और एक पर चमेली योगिन। अन्तिम पाँचवे घोडे पर शेरेजंग को लादकर ले चले। मार्ग में शेष सैनिक और हाथी-घोडे वाहन आदि सहित बूंदीनरेश मिल गए। नायक ने उन्हे प्रणाम किया। उन्होंने नायक को गले लगाकर कहा, 'भाई मौकमसिंहजी! आपकी बुद्धि, युक्ति, साहस और शौर्य निश्चित रूप से प्रशसनीय है।' नायक महोदय ने 'यह

सब आपके ही चरणो की कृपा है ' कहकर उन्हे अधिक वार्तालाप का समय न दे, कूँच आरम्भ कर दिया। कुछ समय तक यह वीर मण्डली यात्रा मे सलग्न रह, इन्द्रगढ पहुँची। सबने अपने शस्त्रास्त्र खोल तथा वस्त्रादि उतारकर नित्यकर्म से छुट्टी पाई। भोजन-विश्राम के पश्चात् बूँदी-नरेश छत्रसालजी ने इन्द्रगढ मे ही एक सभा की। सब लोग सभा में उपस्थित हुए। महाराज और महारानी रूपनगर को भी उसमें ससम्मान उचित आसन दिये गए। उसी समय बन्दी शेरेजग को उपस्थित किया गया। उससे पूछे जाने पर अपने बयान मे उसने कहा कि वह मानपुरा का रहने वाला मुन्ना मेव है, जो एक डाकू से बढते-बढते प्रबल दलपति हो गया है और पहाडो मे रहकर बडे-बडे कारवाँ और रईसो को लूटा करता है। इस समय उस पर मुगल सूबेदार कासिम खाँ की दया का हाथ है। अत उन्होने इसे अलीगढ का दुर्गपति भी बना दिया है। उन्ही की आज्ञा से इसने रूपनगर-नरेश की यात्रा-मण्डली को लूटा है और राजकुमारियो को फिरौती रूप मे लेने की धमकी दी है। इसके पश्चात् बूँदी की प्रसिद्ध वेश्या चमेली जान ने अपने बयान मे बताया कि किस प्रकार अपने हितैषी इन्द्रगढ नरेश मौकमसिंह जी के आग्रह पर वह योगिन का रूप धारण कर शेरेजग के दुर्ग मे पहुँची। लोगो के हस्त-सामुद्रिक से जीवनफल बताकर उनकी मान और प्रशंसा की पात्रा बनी। यहाँ तक कि शेरेजग तक भी उसकी पहुँच हो गई। शेरेजंग उससे ऐसा प्रभावित हुआ कि तहखाने में उसके साथ रात्रि को गाना सुनने पर तत्पर हो गया। चमेली ने सारा भेद लेकर मौकमसिंह जी को बुला लिया और फिर किस चतुराई से महाराज और महारानी को छुडाया तथा शेरेजग को बन्दी बनवाया, वह पाठक जान ही चुके हैं। महाराज ने उसके कार्य की बडी सराहना की और उसे बहुत-सा धन इनाम मे देकर विदा किया।

चौथा परिच्छेद

अजमेर से बूँदी जाने के लिये विगत काल मे सकीर्ण या शुष्क जन-पथ को छोडकर कही ऐसे विशाल मार्ग या सडको का ताँता नहीं था जैसा आजकल दिखाई दे रहा है। उस समय भूमि भी आज के समान समतल कर कृपि-उपयोगी नही बनाई गई थी। राजस्थान का बहुत-सा भू-भाग यो ही झाड-झकाडो से ढका हुआ ऊबड-खाबड पडा हुआ था और ऐसे ही एक भाग मे होकर उक्त जन-पथ जाता था। कही ऊँचे-ऊँचे पहाड खडे थे तो कही कुछ थोडा-सा मैदान अथवा विपम खाई-खल्लर, जिनके अन्दर प्रवेश करके पार हो जाना बडे साहस का कार्य था। इस प्रकार का प्रयास करने वाले भी थोडे ही वीर-हृदय पुरुप होते थे। कारण कि उन बीहड घने जगलों में शेर-चीते आदि हिसक वन्य-पशु और चोर-डाकू छिपे रहते थे जो अपने आखेट की जरा सी भी गन्ध पाकर उस पर आक्रमण कर देते थे। शासन-सूत्र उस अस्थिर काल में ऐसे ढीले पडे थे कि कौन कहाँ का था और कहाँ लुट-पिट गया या मर-खप गया, इसकी कोई खबर तक लेने वाला नही था। मनुष्यों के प्राणों का मूल्य बहुत थोड़ा था। शासन की इकाइयो में या तो अत्यन्त छोटे-छोटे राज्य अपनी अत्यन्त सकीर्ण विचारधारा को लिए हुए जन-रक्षा के विचार से अपर्याप्त होते थे या होते थे बडे साम्राज्य, जिनका कर्तव्य केवल छोटी इकाइयों से उनके साथ लड़-भिडकर तथा अपने अधीन

करके केवल राज-कर मात्र ही वसूल करना होता था। सर्वसाधारण जनता की सुख, सुविधा, शान्ति, समृद्धि और सरक्षण का ध्यान किसी को भी नही होता था। भिन्न-भिन्न राज्यो मे जनता के दृष्टिकोण को लेकर राजनैतिक, आर्थिक या सामाजिक किसी प्रकार के बन्धन-सूत्र नही थे।

उसी मध्यकाल की एक सध्या के समय प्रस्तुत सकीर्ण जन-पथ पर एक विशाल वीरवाहिनी यात्रा मे सलग्न दृष्टिगोचर हो रही है। इस वीरवाहिनी के सख्याधिक्य से अनुमान होता है कि सम्भवत वह किसी राज्य के ध्वस करने के लिये प्रलय की सूचना बनकर आ रही है। बनास नदी को पार करके वह बूँदी राज्य के अन्दर घुमती चली जा रही है। मण्डलगढ को पीछे छोडती हुई इस समय वह देवली से सटी हुई उस पर्वत-शृङ्खला के निकट पहुँच गई है, जो कि बूँदी राज्य की पीठ की रीढ गिनी जाती है। पर्वत की तलहटी में जिस स्थान पर इस विशाल सिंहवाहिनी ने पड़ाव डाला है, वह एक छोटा-सा चौरस मैदान है। अनेक सुविधाओ के विचार से इस दल के नायक ने उसी स्थान को निवासोपयोगी निश्चय किया है। अध्यक्ष की आज्ञा से ऊँटो से सामान उतार लिया गया है और तम्बू-डेरे तानकर उस जन-शून्य मैदान को एक जन-निवास की बस्ती बना दिया गया है। कही लोग अपने ऊँट, घोडे आदि के दाने-चारे की व्यवस्था मे निमग्न हैं तो कही कोई अपने और अपने साथियो के भोजन आदि की व्यवस्था कर रहे हैं। इन तम्बुओ के मध्य मे एक बडा पण्डाल है, जो कि हर प्रकार के राजसी ठाठ-बाट और तेज प्रकाश से युक्त है। उसमें लगे झाड-फानूस और मखमली कनातो से उद्भासित होता है कि उस वाहिनी के प्रधान का शिविर यही है, जो और सब की अपेक्षा अधिक महत्व रखता है। इस पण्डाल मे एक ऊँचे मञ्च पर गिलम-गलीचे और तोसक-तकिए का आश्रय लिये एक अधेड़ व्यक्ति बैठा है। इसके निकट चार-पाँच व्यक्ति

श्रौर बैठे हैं, जो देखने से उसके सहायक सेनापति जैसे मालूम होते हैं। अध्यक्ष ने सब पर एक दृष्टि डालने के पश्चात् एक नवयुवक को सम्बोधन कर कहना आरम्भ किया—"बुन्दा बेटा ! मैं तुम्हे अपने दिल के टुकडे इस सहादत से भी ज्यादा प्यारा समझता हूँ। तुम्हारे वालिद का जितना ख्याल तुम्हे है उससे कही ज्यादा मुझे है, जिसका यह सबूत है कि शाहशाह आलम की बिना इजाजत हासिल किए ही, मैं अपने प्यारे दोस्त शेरेजंग को रिहा कराने के वास्ते, एक बडे बहादुर और नामवर दुश्मन से लोहा लेने के ख्याल से उस पर फौज लेकर चढ आया हूँ।"

"हम लोग आपके इस अहसान के ताउम्र शुक्रगुजार रहेगे हुजूर।"

"हम समझते हैं कि अपना सदर मुकाम इसी जगह रख कर दुश्मन पर चुटपुट हमले करे, क्योंकि यह जगह खान-पान के ख्याल से बडे आराम की है।"

"हुजूर का ख्याल ठीक है। पडाव को यही रख कर लडना फायदामन्द है।"

"कल मरदान खॉ को एक चौथाई फौज देकर मडलगढ़ की तरफ से दुश्मन की रियासत मे घुसाया जाय, दरिया खा को पूर्व की ओर से और हम बुन्दा को लेकर यही से कार्रवाही शुरू करे, क्यो मरदान खाँ ?"

"जनाब ने बिल्कुल ठीक सोचा है। मुझे भी यह तरकीब दुरुस्त जँचती है।"

यह पिछला वाक्य समाप्त भी नही हुआ था कि कही दूर जंगल से किसी चीत्कार की ध्वनि सुनाई दी। चीत्कार के शब्द थे : 'चलो-चलो, बचाओ-बचाओ, दुहाई कासिम खाँ सरकार की।' इन शब्दों की तीन बार पुनरावृत्ति होकर वह चीत्कार आकाश मे विलीन हो गई। आवाज़ ऐसी बारीक थी, जिससे यह स्पष्ट रूप से किसी स्त्री-कण्ठ से निकली मालूम

देती थी, जैसे कही निकट से ही आई थी। चीत्कार को सुनकर सब के सब एक साथ चौकन्ने हो गये।

पाठक ! अब यहाँ पर इस विशाल सिंहवाहिनी और उसके अध्यक्ष का परिचय देना उचित है। यह सेना अजमेर के सूबेदार कासिम खाँ की है। कासिम खाँ शाहजहाँ के प्रमुख मन्सबदारो मे से एक है और है उसका परम विश्वास-पात्र स्वजन। तभी उसे अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रान्त राजस्थान मे सूबेदार बनाकर रक्खा है। उसने अपनी इस विशाल सेना को लेकर अपने मित्र शेरेजग का बधन मुक्त करने का बीडा खाकर बूँदी-नरेश वीर शिरोमणि छत्रसाल हाडा पर आक्रमण किया है और प्रस्तुत स्थान पर, जिसका वर्णन हम पाठको के सम्मुख रख चुके हैं, पडाव डाला है। इस समय कासिम खाँ अपने डेरै मे बैठा अपने सरदार मरदान खाँ, दरिया खाँ, शेरेजग अर्थात् मुन्ना मेव के पुत्र बुन्दा मेव और अपने पुत्र सहादत खाँ के साथ उक्त प्रकार के वार्तालाप मे निमग्न हो रहा था कि उस वार्तालाप का ताता किसी दुखित की चीत्कार ने तोडकर उनके ध्यान को एक नये विषय पर ही लगा दिया। कासिम खाँ ने कहा, 'दरिया खाँ ! तुम फौरन एक हजार सिपाही लेकर इस दुखिया सख्स का पता लगाओ और मुमकिन हो तो जालिम, मजलूम दोनो फरीको को पकडकर हमारे सामने हाजिर करो। जल्दी जाओ, देर का काम नही।' दरिया खाँ सैनिक सलाम करके उठा और अनमने मन से जाने के वास्ते तैयार हुआ जैसा कि उसकी आकृति से प्रतीत होता है। इसका कारण यह था कि इस असमय मे धक्के खाना उसने व्यर्थ का सिर-दर्द समझा, किन्तु विवश है अपने से ऊँचे अधिकारी की आज्ञा के कारण है। ऐसी दशा मे वह कर भी क्या सकता है। अत शस्त्रास्त्र तथा रण-वस्त्रो से भले प्रकार सज्जित होकर तथा एक सहस्र योद्धाओ को साथ लेकर घटनास्थल की ओर बढा। जगल मे चारो ओर घटाटोपान्धकार छाया हुआ है।

आकाश काले-काले बादलो से घिरा हुआ है। ऐसी भयकर रात्रि के समय झाड-झकाड से पूर्ण इस अजनबी ऊबड-खाबड बीहड प्रदेश मे चलना-फिरना अथवा अनुगमन करना अत्यन्त कठिन है और इस पर भी सबसे बडी कठिनाई यह है कि अन्धेरे मे मार्ग का कही पता नही लग रहा है। दरिया खाँ सदलबल उसी स्थान की ओर बढने लगा जिधर से वह चीत्कार की ध्वनि सुनने मे आई है। बडी कठिनाई के साथ वह उस खाई को पार कर उस स्थान पर पहुँचा जहा ध्वनि खाई के दूसरी तरफ से आई जान पडी। यह खाई बहुत गहरी और अत्यन्त भयानक है। खैर, जैसे-तैसे उसे पार कर वह अपने दल सहित वहाँ पहुँचा।

वाछित स्थान पर पहुँच जाने के पश्चात् सरदार दरिया खाँ को ऐसा मालूम दिया कि कही आगे की तरफ कुछ लोग लड-झगड रहे है जिनकी आवाज उस जगह साफ सुनाई दे रही है। दरियाखाँ ने अपने सैनिको को आगे बढने की आज्ञा दी जिसका तुरन्त पालन हुआ। किन्तु ज्यो-ज्यो वे आगे बढते गये, त्यो ही त्यो, वह वार्ता ध्वनि आगे बढती चली गई। यहाँ तक कि वे उसका पता लगाने मे अपने डेरे से दो मील दूर निकल आये। पर किसी को न पाकर अब निराश हो पीछे लौटने का विचार ही दिल मे लाये थे कि वही चीत्कार ध्वनि उनसे लगभग एक फर्लांग की दूरी पर फिर सुनाई दी। दरिया खाँ ने अब की बार फिर साहस करके उसके निकट पहुँचने की चेष्टा की और उसने इस अन्तिम बार के अपने प्रयत्न मे कुछ सफलता भी प्राप्त की। इस भयानक रात्रि मे चीत्कार करने वाले जिस व्यक्ति का पता लगाने के लिये वे डेरे से चले थे उसे अन्तत. पा ही लिया। वह एक मुस्लिम युवती है और एक वृक्ष से बँधी हुई पडी है। उसके शरीर पर कई घाव भी हो रहे हैं जिन से रक्त बह कर उसके कपडो को इस प्रकार रगीन कर रहा है जैसे कही होली खेलकर आई हो। सरदार दरियाखाँ ने उसके निकट पहुँचने पर उसे

अर्द्ध-मूर्च्छित तथा भयभीत पाया। पहले तो मुगलो को देखकर वह बेहोश हो गई और फिर बडा भय तथा क्रोध प्रकट करते हुये कहने लगी 'हाय पापी राजपूतो, इस तरह तडफा-तडफा कर मत मारो। इससे तो बेहतर है कि मेरा एक साथ ही काम तमाम कर दो। मेरे खून का बदला सूबेदार कासिम खाँ की शमशीर जरूर लेगी।' दरिया खॉ ने जब उस स्त्री को अपने मुगल सरदार होने का तथा उसकी सहायता करने का विश्वास दिलाया और उसके बन्धन खोले तब कही उसका ढाढस बँधा। उसने कहा, 'मैं तहव्वर खॉ की बेगम अजीजन हूँ और आगरे की रहने वाली हूँ। सूबेदार कासिम खॉ की बीवी हमीदा बेगम, सरदार दरिया खा की बीवी मुश्तरी बेगम और मरदान खॉ की बीवी जमीला बेगम व मुमताज की खास कनीजा मुरादन के साथ मैं अजमेर शरीफ जाने के लिये घर से निकली थी कि हमारे काफिले को बूँदी के राजपूतो ने गिरफ्तार कर लिया और हम को इज्जत खोने पर मजबूर किया। हम लोगो के रुकावट करने पर हम को मार-मार कर अपनी ख्वाहिश पूरी करने पर जोर देने लगे और राजी न होने पर कैद कर दिया। मेरी बाकी साथिन तो यहॉ से एक मील दूर एक मकान मे बन्द हैं। सिर्फ मैं वहॉ से निकल कर भाग आई हूँ। मुझ को यहॉ कुछ राजपूत सिपाही मिले जो यह जानने की फिक्र मे हुए कि मै शाही गिरफ्तार शुदा औरतो मे से तो नही हूँ। मै उन्हे बताती नही थी इसलिये वे मुझे मार-मार कर वापिस ले जाना ही ठीक समझ खीच रहे थे। आप लोगो के आने की आहट पाकर वे लोग मुझे इस पेड से बाँध कर भाग गये है।' सरदार दरिया खॉ अपनी और सूबेदार की बीवी का नाम सुनकर क्रोध और मोह से पागल हो गया और शीघ्रातिशीघ्र उसको कष्ट से मुक्त करने के लिये छटपटाने लगा। उसने बडी उत्सुकता के साथ अजीजन से पूछा, 'जिस जगह तुम कैद की गई वह कोई किला है या मामूली मकान और

दुश्मन के कितने आदमी उसकी हिफाजत कर रहे हैं।'

अजीजन ने उत्तर दिया—

'जहाँ पर मेरे साथ वाली कैद हैं वह एक मामूली-सा मकान है, जो पहाड की घाटी मे जगल के अन्दर है और नज़दीक पास कोसो तक कोई बस्ती नही है। उसकी हिफ़ाजत करने वाले दुश्मन के सिपाही पचास से ज्यादा नही है। अगर उनको वहाँ आज ही न छुडाया गया तो शायद कल दिन में कही दूसरी जगह भेज दी जायँगी।' इस बात को सुनकर तो दरिया खाँ आपे से बाहर हो गया। अपनी पत्नी के लिये क्या कुछ नही किया जाता। अत वह शीघ्र इस स्थान तक पहुँचने के लिये छटपटाने लगा और कहने लगा, 'अच्छी अजीजन! तुम हमारे साथ-साथ चलकर हमे उस जगह ले चलो। हम उनको छुडायेगे और काफिरो को उनके किये की सजा देगे।' अजीजन ने कहा, 'मै तुम को उस जगह का पता निशान बता सकती हूँ, मगर जो जुल्म मेरे ऊपर हुये हैं, उनकी याद करके मेरा कलेजा डर से काँप रहा है और उस तरफ को कदम नही उठते।' दरियाखाँ कडक कर बोला, 'हम काफिरो को कच्चा ही चबा लेगे। हमारे साथ जाने मे किस बात का डर है? हमारी ताकत को देखो हम उन्हे किस तरह तगडी सजा देकर मुल्के जहन्नुम रसीद करते हैं। हमारे साथ रहने मे कोई डर की बात नही है।' इससे कुछ आश्वस्त हो अजीजन उनके साथ जाने के लिये राजी हुई।

अब तो दरियाखाँ का दल अजीजन को आगे करके मुगलानियो को छुडाने के वास्ते बडी तेज़ी के साथ उस स्थान की ओर बढने लगा, जहाँ पर उनके बन्दीगृह मे होने का पता दिया गया और जिधर वह उनको ले जा रही है। लगभग आध घण्टे की यात्रा के पश्चात् अजीजन दरिया खा के दल को एक तग घाटी मे से होकर तथा उसे पार कराकर एक ऐसे स्थान पर ले आई है, जो भूमि की सतह से लगभग सौ फीट

सीधी खडी पहाडी पर है। यह एक ऐसा छोटा चारो ओर से घिरा हुआ मैदान है, जैसा हॉकी खेलने का होता है। सामने की तरफ उसमे एक छोटा-सा पत्थर का बना पहाड की एक गुफा से मिला हुआ कोठा-सा है। अजीज़न वही एक पत्थर पर खडी होकर कहने लगी 'इसी कमरे मे वे सब कैद हैं।' इसी समय एक सीटी की आवाज हुई और उनको यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि वह पत्थर जिस पर अजीज़न खडी है उसे लेकर भूमि मे धँसता जा रहा है और अन्त में एक कुएँ की शक्ल में हो अजीजन को अन्दर छोडकर तथा फिर ऊपर आकर, चबूतरा-सा बन गया है। अभी वे इस समय अपने कर्त्तव्य पर विचार कर भी नही पाये है कि दूसरी सीटी बजी और उसके साथ ही उस स्थान मे से, जिस पर वे खडे है, भयकर ज्वाला की लपटे निकल कर उनको जलाने लगी। दरियाखाँ का दल उस भयानक अग्निकाण्ड मे इस प्रकार से जलने लगा, जिस प्रकार भाड के अन्दर चना या मटर भुनते हैं। चारो ओर हाय तोबा, चीख पुकार का क्रन्दन हो रहा है। सम्भवत. उस स्थान पर उस दल को स्वाहा करने के लिये बारूद बिछा दी गई है और वह स्त्री धोखे से उसे समाप्त कराने के विचार से वहाँ ले आई है। सरदार दरिया खा के सैनिक, जो अग्नि की लपटो मे जलते हुये ज्यो-त्यो कर जैसे ही बाहर होने के विचार से, उस कन्दरा के द्वार पर पहुँचे तो अपने बाहर निकलने के मार्ग को भी पीछे से बन्द पाया, जिसे शायद उनके आगे बढ जाने के पश्चात् ही ईंट-पत्थरो से अति शीघ्र बन्द किया गया है। अब तो उनको अग्नि मे जल मरने के अतिरिक्त चारा ही क्या रहा। चारो तरफ हाहाकार मचा हुआ है। इसी समय पहाडो के ऊपर से राजपूतो के तीर और ईंट-पत्थर के प्रहार उनको अपना आखेट बनाने लगे। इस प्रकार बिना अपने पराक्रम-प्रदर्शन का अवसर पाये लगभग सब यवन सैनिक यमपुर के अतिथि होने लगे। केवल गिने-चुने मनुष्य ही इस हत्या-काण्ड की कासिमखाँ को खबर देने के लिये शेष बच

सके। वे भी घायल और अग्नि से झुलसे हुये हैं। सरदार दरियाखाँ युद्ध मे समाप्त हो गये। एक सहस्र योद्धाओ मे से एक चौथाई से अधिक नही बचे। उनमे से भी सबके सब घायल और अग्नि से जल जाने के कारण मृतप्राय हैं। जब इस कत्लेआम का समाचार सूबेदार कासिमखाँ को मिला तो वह आश्चर्य और भय से सन्न हो गया। क्रोध भी शत्रु पर अत्यधिक आया किन्तु अर्द्ध-मूर्च्छित सर्प की भाँति छटपटाने के अतिरिक्त वह और कर ही क्या सकता था, अत मन मारकर चपचाप बैठ गया।

पाँचवाँ परिच्छेद

प्रात काल का सुहावना समय है जो मनुष्य क्या पशु-पक्षियो तक को आनन्द दे रहा है, किन्तु दु खी है तो केवल एक शासक-हृदय अर्थात जब से सूबेदार कासिम खॉ ने अपने सैनिको और सेनापतियो के भयकर नर-वध का समाचार सुना है उसके शरीर मे काटो तो खून नही निकलता। उसी समय से लगातार अपने बिस्तर पर पडा हुआ वह आह भरकर छटपटाता रहा है। दिल टूट गया है, उत्साह क्षीण हो गया है और मस्तिष्क मे विकार पैदा हो गया है। इस समस्या का कोई हल सूझ ही नही रहा है कि इस प्रकार के छली शत्रुओ का किस प्रकार सफलता-पूर्वक निबटारा किया जाय। मरदान खॉ, सहादत खा और बून्दा मेव सभी ने सान्त्वना देने की चेष्टा की है पर किसी के आश्वासन से सन्तोष नही होता। कारण कि जो युक्ति तर्क-सिद्ध नही है, उसमे सफलता मिलनी कठिन है, क्योकि युद्ध और व्यापार सही गणना के खेल हैं और जो व्यक्ति ठीक-ठीक गणित लगा सकता है, वही सफलता का अधिकारी है। जब बुद्धि ने उसका दिल निश्चित मार्ग पर न डाला तो वह पथभ्रष्ट होकर इधर-उधर खाई-खल्लरो मे धक्के खाने लगा और ठोकर खाकर एक स्थान पर ऐसा गिरा कि फिर उठने की क्षमता ही नही रही। वह काफी देर तक इस तरह पडा-पडा छटपटाता रहा और स्मरण करने लगा अपने विगत जीवन की, उन घटनाओ की जो बहुत पीछे छूटकर

विस्मृति के तिमिर में विलीन होती जा रही हैं।

हताश सूबेदार की जब शत्रु की सीमा मे आकर ऐसी दयनीय दशा देखी, तो सहादत खाँ से न रहा गया। उसने कहा "अब्बाजान। आप ऐसे हिम्मत क्यो हार रहे हैं। अभी हमारी खाट नही कट गई है। अगर एक दफा दुश्मन ने धोखे से हमे नुकसान पहुँचा ही दिया तो क्या? काठ की अनेक बार तो नही चढा करती। अब की बार क्या करेगा? मैं अभी एक बडी सेना लेकर लडाई में जा रहा हूँ। भाई बुन्देखाँ मेरे साथी होगे। राजपूताने की चप्पा-चप्पा भर जमीन इनकी देखी हुई है। मैं काफिरो का एक तरफ से ऐसा सफाया बोलूँगा और आपकी बहादुरी मे चार चॉद लगाऊँगा कि दुनिया याद रक्खेगी। आप जरा हुकम करे?"

"प्यारे बेटे! अभी तुम और बुन्दा बालक हो। राजपूतो की लडाई के फनो से वाकिफ नही हो। मेरा दिल तुम्हे भेजने की इजाजत नही देता।"

"शेर का फरजन्द शेर से कम नही होता, अब्बाजान! मैं जरूर मुहीम पर जाऊँगा।"

"कोई हर्ज नही है, जनाब! बालक के दिल को भी तोडना नही चाहिये। अगर हुक्म हो तो यह खादिम मरदान खाँ भी छोटे भाई की हिफाजत करने के लिये इस जग मे जाने को तैयार है। मेरी मौजूदगी मे इसका कोई बाल भी बाँका नही कर सकेगा। लडाई के फन मे मैं गनीम से कम होशियार नही हूँ।"

'हाँ! ऐसी हालत मे मै, सहादत को जग मे जाने की इजाजत बखुशी दे सकता हूँ। खुदा इसकी उम्र बुलन्द करे! मगर अपना हिफाजत का हाथ हर वक्त इसके सिर पर रखना। तुम्हारे ही भरोसे इसे लडाई पर भेज रहा हूँ।"

"आप बे-फिक्र रहे, मैं हर वक्त इनके साथ रहकर जग मे इनकी हिफाजत करूँगा।"

मरदान खाँ की बातो को सुनकर सूबेदार को तसल्ली हो गई और उसने उसकी हिफाजत मे दोनो युवको को युद्ध मे जाने की आज्ञा दे दी। तत्काल लगभग पाँच हजार योद्धाओ की हाथी-घोडो आदि से युक्त-चतुरगिनी सज गई। रण-वाद्यो के साथ उस वीर-वाहिनी ने नदी के किनारे-किनारे इस योजना को लेकर कूँच किया कि पूर्व की ओर से बूँदी पर आक्रमण कर तथा शत्रुओं मे प्रलय-काण्ड उपस्थित कर, उनके किये का दड दिया जाय। जिससे कोई आगे इस तरह की हिमाकत करने का हौसला ही न कर सके और मुगल शासन का वाहन निर्विघ्न चलता रहे।

सहादत खाँ की सेना सारे दिन ऊबड-खाबड निर्जन झाड-खंड के पार करने मे व्यस्त रही। बडी कठिनाई से वह फिर नदी के निकट आई। पाठकवर्ग! यहाँ पर आपको यह सन्देह होना सम्भव है कि जब यात्रा नदी के किनारे-किनारे आरभ हुई थी तो फिर उसको छोडकर उसी सेना ने जगल का मार्ग क्यो ग्रहण किया और पुन उसी नदी के किनारे पर कैसे आ गई? इसके उत्तर मे केवल इतना ही कहना पर्याप्त है कि सशय निवारण के लिये बनास नदी के बहाव की गति पर दृष्टि डालनी चाहिये। पहले यह नदी पश्चिम से पूर्व की दिशा मे बहती है। फिर सामने मार्गावरोधक पर्वत-श्रेणियो के आ जाने के कारण, यह अपना रुख बदल कर दक्षिण से उत्तर की ओर को बहना आरभ कर देती है। इसके पश्चात् एक गोलाकार घुमाव लेकर उत्तर से दक्षिण को चल देती है और फिर अन्त मे उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की दिशा मे बहती हुई उत्तर-दक्षिण घूमकर चम्बल मे मिल जाती है। इसी दक्षिण-उत्तर और उत्तर-दक्षिण मोड़ो के कारण सेना के मार्ग से नदी का बहाव पृथक् होकर फिर निकट आ गया और समान दिशा मे बहने के कारण पुनः उसे अपनी मार्ग-प्रदर्शिका बना उसके किनारे-किनारे चलना आरम्भ कर दिया। सूर्य के अस्त होने के समय यह सेना एक ऐसे स्थान पर आ गई जहाँ से बून्दी की तरफ का प्रवेश मार्ग केवल इस नदी के गर्भ मे होकर

जल की धारा के किनारे-किनारे है और उसके दोनो तरफ दो पहाडो की श्रेणिया मीलो ऊँची सीधी खडी हैं। सहादत खाँ की सेना ने बून्दी की तरफ जाने के वास्ते और कोई मार्ग न देख नदी के गर्भ द्वारा ही यात्रा करनी आरम्भ कर दी और लगभग दो-तीन घण्टे तक वह इसी प्रकार चलती रही।

जिस समय यह सैन्य एक ऐसे स्थान पर पहुँची जहाँ दो ऊँचे-ऊँचे सीधे खडे पहाडो के मध्य मे नदी का फाट इतना तंग हो गया था कि पक्तिबद्ध होकर पन्द्रह मनुष्य से अधिक बराबर-बराबर उसके अन्दर यात्रा नही कर सकते थे तो देखती क्या है कि आगे जाने का मार्ग किसी ने कुछ ही देर पहले उसके अन्दर एक दीवार बनाकर बन्द कर दिया है। अब यह कौतुक उनके लिये नया नही रह गया था। अत उन्होने तत्काल समझ लिया कि दुश्मन राजपूतो ने उनकी आगे बढने की गति को रोकने के विचार से यह मार्ग ईट और पत्थरो की एक सीधी दीवार खडी करके बन्द कर दिया है जिसका अपने लाभ की दृष्टि से साफ करना अनिवार्य है। यह विचार करके तथा मरदान खाँ का परामर्श लेकर सहादत खाँ ने उस दीवार को तोडकर आगे बढने का आदेश दिया। यह आज्ञा पाते ही सैनिकगण उसके तोडने के कार्य मे सलग्न हो गये। इसी समय उनको यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि नदी का पानी बढने लगा है और बढते-बढते वह लगभग भूमि की सतह से बीस फीट ऊँचा चढ गया है और सारी सेना पानी में डूबने लगी है। उन मनुष्यो और पशुओ को छोडकर जो तैरना जानते थे शेष सब जल की धारा में विलीन हो गये।

तैरना जानने वाले मनुष्य और पशु मृत्यु के साथ संघर्ष में निमग्न हो, उसके पंजों से अपने प्राणो को बचाने के लिये हाथ-पैर मार रहे हैं। पाठक! अचानक नदी में बाढ कैसे आ गई, इसके लिये आश्चर्य प्रकट करने की आवश्यकता नही है, कारण कि प्रस्तुत स्थान से लगभग चार-

पाँच मील पश्चिम की ओर राज्य ने नदी का पानी सिचाई के लिये प्रयोग मे लेने के वास्ते एक बाँध बनाकर सारी नदी का पानी रोक लिया था। इस समय शत्रु की प्रबल वाहिनी को रोक कर उसके साथ युद्ध करने मे अपने आपको असमर्थ पाकर राजपूतो ने बाँध काट दिया है, जिससे सारी घाटी पानी से भर गई है और शत्रु-सैन्य उस बाढ मे डूबने लगी है, क्योकि घाटी मे पानी लगभग बीस फीट चढ गया है। उनके अस्त्र-शस्त्र, वस्त्र तथा अन्य सब सामान पानी मे बह गया है, जिसके बचाने की न किसी मे क्षमता है और न किसी के पास इतना अवकाश। अपने-अपने प्राणो को बचाना उन्हे भी कठिन जान पड़ रहा है जो भले प्रकार तैरना जानते है। जो लोग तैरना नही जानते उनके वास्ते तो मृत्यु अनिवार्य है ही, जिसके अतिरिक्त और कोई चारा ही नही है।

उक्ति प्रसिद्ध है कि गिरे मे चार लातें अनायास ही लग जाया करती है, वही दशा इस वाहिनी की भी हुई है। नदी मे बाढ आ जाने से तो वह अत्यन्त पीडित हुए ही, साथ ही पहाडो के ऊपर से ईंट-पत्थर, तीर और रहफलो की गोलियो के प्रहार भी होने लगे, जिनके आखेट होकर यवन योद्धागण निरुपाय होकर मृत्यु के घाट उतरने लगे। रात्रि के अन्धकार मे यवनो की सेना को यह पता लगना भी कठिन हो गया कि शत्रुओ का दल कितना है और कहाँ है ? वे केवल इतना ही जानते हैं कि पर्वतराज क्रुद्ध होकर उन पर कहर ढा रहा है और बना रहा है उन्हे परलोक का यात्री। पर्वत की भूखी कन्दराएँ सम्भवतः अधिक दिनो के पश्चात् पेट भर भोजन प्राप्त करके जन-रव की प्रतिध्वनि के द्वारा अपना हार्दिक हर्ष प्रकट कर रही हैं। यवन-सेना में हाहाकार मच रहा है। 'हाय-हाय, मरे-मरे, बचाओ-बचाओ' आदि का करुण-क्रन्दन नीरव रात्रि मे पहाडो को प्रतिध्वनित कर आकाश मे पहुँच कर निरुत्तर रूप से समाप्त हो रहा है। यही तक नही, नदी के

तग पार्वत्य तट पर पहुँचने पर वे अपने शत्रुओ की तलवार के भी आखेट होने लगे हैं। इस प्रकार शत्रुपक्ष के लिये, सब कही महाप्रलय ही अपना भयानक मुँह खोलकर उनका स्वागत-आह्वान करती दीख पडती है। इसी समय एक तीर बुन्दा मेव के लगा, जिसके आघात से थोडी देर तक तडफडाकर अन्त में वह वही समाप्त हो गया। मरदान खाँ और सहादत खाँ इस बुरी तरह से घायल हुए कि उनके प्राण बचने भी कठिन जान पडने लगे। वे सब के सब आत्म-समर्पण के लिये तैयार हो गए, क्योकि ऐसे भयानक समय मे आत्म-समर्पण के अतिरिक्त और होता भी क्या ? जबकि उनके लिये हर तरफ घोर सकट कमर बाँधे खड़ा हो। किन्तु इस प्रकार के सकट-ग्रस्त व्यक्तियो का क्या आत्म-समर्पण ? उनके पास न तो शस्त्रास्त्र हैं, जिनसे लड रहे हो और जिन्हे रखकर अपना मनोभाव प्रकट कर सके और न पताकाएं ही हैं, जिनको झुकाकर सफेद झण्डे खडे किये जावे। केवल दीन वाणी के और उनके पास निजत्व सम्बन्धी कोई चिह्न भी तो नही है। अतः वे बडे जोर-जोर से तोबा-तोबा, दुहाई-दुहाई पुकारकर और बचाओ-बचाओ, हम तुम्हारी कपिला गाय हैं, आदि कहकर अपनी आत्म-सम्पर्क पराजय की घोषणा कर रहे हैं। किन्तु मानव-प्रकोप के साथ-साथ दैवी प्रकोप के मिल जाने के कारण उनकी मृत्यु का क्रम उसी प्रकार जारी है। इसी समय एक घटना यह हुई कि मरदान खॉ, जिसके सहादत खॉ की अपेक्षा कुछ कम घाव आये थे, दिल और दिमाग के सही हालत मे होने के कारण हिताहित को ध्यान में रखकर प्राण-रक्षा के विचार से अधिक घायल सहादत खाँ को तट की ओर खीच लाया।

राजपूतो को मौका मिल गया और उन्होने उन दोनो को बन्दी बना लिया। अब मुगलो की पराजय अपनी चरम सीमा को पहुँच गई थी। अतः उन्होने सेनापतियो की समाप्ति पर वित्तभोगी सैनिकों के वध को व्यर्थ समझ शस्त्रास्त्र वर्षा बन्द कर दी और नदी का अगला बाँध खोल दिया।

बाँध के पानी के आगे नदी मे निकल जाने से शेष सैनिको के प्राण बच गए। इसी समय एकाएक दो सौ घुडसवार सैनिको को लिये एक राजपूत सरदार उनके निकट आया और उनके अस्त्र-शस्त्र और रण-वस्त्र लेकर उनको आज्ञा दी कि वे जाकर अपने सूबेदार को आज के युद्ध के परिणाम का समाचार पहुँचा दे। यह राजपूत सरदार बूंदी-नरेश छत्रसाल के भाई मौकमसिंह ही हैं।

छठा परिच्छेद

प्रात काल का समय है । अपने नित्य के कार्यों से छुट्टी पाकर सूबेदार कासिम खॉ अपने दीवानी डेरे में पधारे हैं । सूबेदार साहब का यह नियम है कि प्रात काल अपने कामो से निबटकर अपनी सेना के सब सैनिको पर, उनके सुख-दुख की बात पूछने के विचार से, एक दृष्टि डाल लिया करते हैं और फिर दीवानी डेरे मे बैठकर सिपहसालारो की सलामें लिया करते हैं । आज जबकि वे सेनानियो की सलामें लेने को तत्पर हुये तभी सरदार हाथी राजा एक ज्योतिषी को पकड लाया और उसे दरबार मे उपस्थित करके उसके ज्योतिष के हुनर की तारीफ करने लगा । सूबेदार ने भी उत्सुक हो उससे अपने पुत्र के युद्ध का परिणाम पूछा । ज्योतिषी ने तात्कालिक कुण्डली बनाकर कहा, 'सरकार, आपका पुत्र सहादत खाँ बड़ा वीर है । उसके लिये मामूली हार-जीत क्या वह तो दुश्मन के सामने पानी पर तैर सकता है और रही आपकी लडाई की बात, सो आप अनेक जीतो के साथ कल कुदरत के दुर्ग मे बैठे होगे ।' इस बात को सुनकर कासिम खाँ अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उचित पुरस्कार देकर उसे विदा किया । इस भविष्यवाणी को सुनकर सब के मुरझाये हुये मुख हर्ष से खिल उठे । हर्ष की वेला में प्राय मनोरजन सूझा करता है अत सूबेदार कासिम खाँ का भी ध्यान उस ओर आकृष्ट हुये बिना न रह सका और उसने तत्काल नर्तकी को बुलाकर नृत्य का आयोजन किया । व्यवस्थानुसार नृत्य-कार्य आरम्भ हो गया । तबला, सरगी, खडताल, मजीरे और नक्कारे आदि

बाजे बजने लगे और 'गजल', 'ठुमरी' 'बहरेतबील' आदि गायन गगन में गूंजने लगे। साँमरी जान के सगीत की स्वरलहरी क्या! मानो कोयल की कूक है, जिसे सुनकर मानवी मन मे हूक-सी उठने लगती है। नृत्य का तो कहना ही क्या? जिस समय वह किसी राग को उठाकर कहरवे का नाच करती है तो उपस्थित जनता में तहलका मच जाता है। साँमरी ने गाने-नाचने मे नाम पा रक्खा है और वह अजमेर की ऐसी विख्यात नर्तकी है कि राजा-महाराजाओ के अतिरिक्त इतर वर्ग तो उसको इस काम के लिये बुला ही नही सकता। वही साँमरीजान आज सूबेदार कासिम खाँ की सभा में समा जमा रही है। सब लोग उसकी कला पर झूम-झूमकर उसकी प्रशसा के कुलाबे बाँध रहे है और दे रहे हैं प्रसन्न होकर उसकी प्रत्येक ठुमकी पर तगडे पुरस्कार। सभा के नियमानुसार यदि एक रुपया कोई इतर वर्ग देता है तो कम से कम दो रुपये सूबेदार महोदय को देने पडते हैं। अत भाग्यवान् नर्तकी को एक साथ तीन रुपये पल्ले पड जाते है। इस प्रकार यो कहिये कि सब का समय प्रसन्नता-पूर्वक व्यतीत हो रहा है।

इस प्रकार पी-खाकर जब सब लोगो ने नाच-रग मे निमग्न हो अपने आपको खुशियो के आकाश मे पहुँचा दिया तो एकाएक कमालखाँ ने सभा मे प्रवेश करके सूबेदार साहब को सलाम किया। सूबेदार ने उसकी खस्ता हालत देखकर उससे सहादत खाँ और उसकी सेना का हाल पूछा। कमाल खाँ ने सारा समाचार आरम्भ से अन्त तक कह सुनाया। अपने पुत्र के घायल होने और शत्रु के द्वारा बन्दी हो जाने की खबर ने तो उसे क्रोध से पागल कर दिया। तबला, सरगी, नाच-गान न जाने कहा चले गये? क्रोध और शोक के आवेश मे मुट्ठी बाँधकर, होट किटकिटाता हुआ वह चीख-चीखकर कहने लगा कि 'अगर बूदी राज्य को जड़ से खोदकर मैंने न फैक दिया तो मेरा नाम कासिम खाँ नही। अब काफिरो की कयामत ही आ गई समझो। छत्रसाल! अब तू जहन्नुम का

मेहमान है। बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी।' इतना कहकर कमाल खाँ आदि घायल सैनिको और कुछ फालतू सामान को वही छोड कर वह पैदल और सवारो सहित सारी यवन सेना को तत्काल बूँदी पर आक्रमण करने के लिये तैयार करने लगा। उस समय दस हजार के लगभग सैनिको की चतुरगिनी सचालक की आज्ञा से तत्काल सजकर शत्रु के देश मे प्रवेश करने के लिये प्रस्तुत हो गई। रण के बाजे बजने लगे। एक विशालकाय गजराज पर अम्बारी रखवाकर, उसमे शाही सैन्य के सञ्चालक सूबेदार कासिम खाँ स्वय विराजमान हुये। अन्य सेनानी अपने-अपने घोडे, हाथियो पर यथायोग्य सवार हुये।

सबके सजकर गमनार्थ प्रस्तुत हो जाने पर कूँच का नक्कारा बजा। प्रस्थान आरम्भ हुआ। कर्त्तव्य की प्रेरणा और राजाज्ञा के अकुश के कारण सैनिको के पैर यात्रार्थ आप से आप बढने लगे। 'क्यो' और 'कहाँ' का प्रश्न ही नही था। क्योकि 'तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य करना और सघर्षरत रहते हुये सेनानी के इगित पर प्राण दे देना है। क्या और क्यो के तर्क करने का तुम को अधिकार नही।' इस सिद्धान्त के अनुसार अनुशासन और व्यवस्था को भग करना राजविद्रोह गिना जाता। अत. बिना समया-समय तथा उचितानुचित का प्रश्न किये आदेश के अनुसार सब सैनिक बह रहे हैं। इस प्रकार अपने सारे सबल दल को लेकर विना मार्गादि का विचार किये, क्रोध और क्षोभ के आवेश में सूबेदार बून्दी की ओर को बढा चला जा रहा है। उसने शत्रु को शीघ्र समाप्त करने के विचार से सीधे मार्ग का अवलम्ब लिया है जो अत्यन्त सकटपूर्ण और सकीण है। न कही कोई मनुष्य दृष्टिगोचर होता है और न पशु। ऐसा प्रतीत होता है, मानो आक्रमणकारी के आतक से भयभीत होकर इस क्षेत्र के निवासी इसे निर्जन छोडकर पहले ही कही अन्यत्र चले गये है। दिनभर तो इस यवन-सेना का यात्रा-सम्बन्धी कार्यक्रम चलता रहा, क्योकि बून्दी की तरफ को जाने वाला एक ही सदर मार्ग था और उसी पर अग्रसर

होते रहे। किसी से पूछने की भी आवश्यकता अनुभव नही हुई, किन्तु अब चौराहे से यह निश्चय करना कठिन हो गया। अत उसी चौराहे पर ठहर कर वे लोग किसी ऐसे व्यक्ति की प्रतीक्षा करने लगे जिससे मार्ग पूछकर आगे बढने का प्रयास किया जाय।

इसी समय एक मुस्लिम फकीर उनके निकट आकर कहने लगा—'अल्लाह के नाम पर मुझे कुछ खाना दे दो, मै भूखा मरा जा रहा हूँ। मैने तीन दिन से कुछ नही खाया। काश कि इस इलाके के वीरान होने का मुझे पहले से इल्म होता तो कायदे के साथ सफर करता।' लोगो ने उसका नाम-ग्राम पूछा और जानना चाहा कि वह कहाँ से आया है और कहाँ जा रहा है। उसने कहा, 'मै अजमेर का रहने वाला हूँ और अपने खास काम से बून्दी जा रहा हूँ।' इतना सुनकर लोगो ने उसे सूबेदार के निकट पहुँचा दिया। सूबेदार ने उसके साथ बात-चीत करके तथा खाना खिलाकर अपने ही दल मे साथ ले लिया। उसका कार्य यह निश्चय कर दिया गया कि वह सेना के साथ-साथ आराम से रहकर उसको बून्दी का मार्ग बताता चले, कारण कि उस अज्ञात प्रदेश के पार्वत्य मार्गों से वे लोग बिल्कुल अनजान है। फकीर ने तुरन्त इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और भोजन आदि से निवृत्त होकर सूबेदार के दिये हुये घोडे पर सवार हो सेना को मार्ग बतलाता हुआ सबसे आगे-आगे चलने लगा। सेना उसके पीछे-पीछे चलती रही। पहले-पहल मार्ग नीचे मैदान से ऊँचा होता हुआ चढाई ग्रहण करता-करता पहाडी के ऊपर को जा रहा था। उसी पर अपने नेता के पीछे-पीछे सेना को भी चलना पडा। इस समय सेना मैदान से लगभग दो मील ऊँची चल रही है। यह मार्ग क्या, एक पहाडी की सडक के रूप मे है, जो एक पहाडी की चोटी पर पहुँचकर, वहाँ से दूसरी पहाडी की चोटी पर स्थित, उस मार्ग से सम्बन्धित है, जो दूसरी ओर नीचे की तरफ उतर रहा है। इन दोनो पहाडियो की चोटियो के दो मार्गों को

मिलाने अथवा सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य एक पत्थरो का बना हुआ पुल कर रहा है, जिसने दोनो पहाडियो के बीच की लगभग एक मील गहरी अलाँघ्य, गहन तथा भयंकर घाटी को पाट रक्खा है। नेता-फकीर के पीछे चलती हुई सेना इस घाटी के पुल पर्यन्त की चढाई को पार करके दूसरी पहाडी के मार्ग पर पहुँच कर नीचे की ओर उतरने लगी। यह मार्ग ढलवाँ पहाडी के नीचे की ओर को उतर रहा है और इतना सकीर्ण है कि इस पर दस मनुष्य से अधिक बराबर-बराबर पक्ति बाँध कर बडी कठिनता से चल सकते हैं।

यह मार्ग जाकर एक ऐसी गहरी खाई में समाप्त हो गया है, जो शायद पहाडो के मध्य में कोई पानी एकत्रित होने की गहरी झील है और जिसके चारो तरफ पहाडो की ऊँची-ऊँची चोटियाँ सीधी खडी हैं। सम्भवत इस झील से पानी भरकर ले जाने या पशुओ को पानी पिलाने के वास्ते ही यह सकीर्ण मार्ग बनाया गया होगा। जिस खाई के पुल का विवरण दिया गया है वह खाई भी इसी झील से मिली हुई है। मानो पर्वतो के मध्यवर्ती बडी झील मे एक पहाडी का द्वीप बन गया हो और उस दूसरे पहाड के मार्ग से उसे उस स्थान पर मिला दिया हो जहाँ कि उसकी ऊँचाई बहुत कम है। इस ढलान पर सूबेदार कासिम खाँ की सेना आसानी से पहुँच गई। झील के निकट पहुँच कर वह फकीर-नेता अपने घोडे को पानी की तरफ ले जाने से पूर्व ही सूखी खाई मे कूदकर जगलो मे विलीन हो गया। सेना की अगली तीन-चार पक्तियाँ हाथियो की हैं और उनके पीछे घोडो के सवार, जिनके पीछे पैदल और सबसे पीछे सामान के छकड़े। हाथी बढते-बढते झील के निकट पहुँचे और अन्धकार के कारण जल-थल का अनुमान न लगने पर, वे पानी के निकट दलदल में उतर कर इस प्रकार फँस गये, मानो उनके पैर नीचे से किसी ने कसकर बाँध दिये हों। कासिम खाँ का हाथी अगली पंक्ति मे होने के कारण ऐसा कस

कर दलदल में फँसा कि उसका हिलना-डुलना तक भी असम्भव प्रतीत होने लगा। हाथियो और छकडो के मध्य में घुडसवारो की आठ-आठ की पक्तियाँ हैं। वे इन दोनो के मध्य में अकर्मण्य होकर कैद हो गये है, क्योकि उनके लिए न कही आगे बढने के लिये स्थान अथवा अवकाश है और न पीछे हटने ही के लिए। इधर-उधर गहरी-गहरी खाइयाँ हैं, जिन की ओर को बढना अपने आप को जान-पूछकर मृत्यु के मुँह मे धकेल देना है। प्रस्तुत परिस्थिति मे काफी देर तक खडे रहने के उपरान्त यही निश्चय हुआ कि जब आगे बढने के लिए मार्ग नही है तो पीछे ही लौट चलना चाहिये। अतः जब कुछ छकडे लौटकर खाई के पुल पर पहुचे तो यह देखकर बडे हैरान हुये कि वह पुल भी टूटा पडा है और दोनो पहाडियो के मध्य मे एक मील गहरी और लगभग बीस गज़ चौडी खाई अपना विशाल मुँह फाडे खडी है। यह देखकर उनके रहे-सहे होश भी उड गये। इस चूहेदानी में वे लोग बुरी तरह फँस गये हैं। अब लग पाया है पता उनको शत्रुओ के विचित्र हुनर, रणचातुर्य और युद्ध-कौतुक (tactices and stratagems) और उनकी महत्ता का।

इस चिन्ता-जनक स्थिति में शत्रु-सैनिको ने ऊँची पहाडी की गुफाओ से निकल कर छकडो के सामान को लूटना आरम्भ कर दिया। 'मारो मारो' 'हाय-हाय' 'लइयो' 'चलियो' 'मरे-मरे' 'अल्लाहो अकबर' और 'हर हर बम' के शब्द चारो ओर से सुनाई देने लगे। घायलो की चीत्कार और पशुओ के कातर शब्द तथा शस्त्रो का खट-खट और छप-छप का नाद रात्रि के अन्धकार मे उसको अधिकतर भयकर बनाते हुए भय से हृदय कपा रहा है। वीरगण डट-डट कर प्राण देते और कायर युद्ध छोडकर भाग रहे है। अर्द्ध रात्रि के समय घनघोर युद्ध हो रहा है। इसी समय शत्रुओ ने उनके उस मार्मिक स्थान (vital point) पर भी दोनो तरफ से छापा मारा जो हाथियो

और घोडो की पक्तियो को मिला रहा है। यवन सेना की स्थिति प्राकृतिक रूप से ही ऐसी सन्तोष-प्रद नही रही थी कि प्रस्तुत चूहेदानी मे फँस जाने के उपरान्त भी कुछ पराक्रम प्रकट कर सकती। तिस पर भी तुर्रा यह है कि उनको शत्रु की गतिविधि, उसकी सख्या और शस्त्रो का पता नही है। पौरुष दिखाये तो किस पर और किस तरह ? आखिर ये हाडा लोग मनुष्य है या छलावे, यह उनकी समझ मे ही नही आ रहा है।

सूबेदार की विशाल वाहिनी के सैनिक कीडे-मकोडो की भाँति नष्ट हो रहे हैं। उनकी असामयिक मृत्यु का भयकर दृश्य उसकी दृष्टि मे घूम कर उसके हृदय को विदीर्ण कर रहा है। आज राजपूतो के युद्ध का नग्न-चित्र देखकर उसका यह गर्व क्षीण होने लगा है कि अधिक सख्या में मुण्ड-मण्डली एकत्रित कर लेने मात्र से ही किसी योग्य सेनापति के समर्थ रण-चातुर्यपूर्ण गौरव को धक्का नही पहुँचाया जा सकता। इतनी युद्ध-सामग्री से सज्जित विशाल सेना के होने पर भी आज उसका सर्व-नाशकारी सहार स्वय उसके नेत्रो के सम्मुख हो रहा है, जिसे देखकर उसका हृदय शोक से सहस्र-सहस्र आँसू रो रहा है। हाथियो की चिंघाड, घोडो की हिनहिनाहट, छकडो की घडघडाहट, घायलो की चीत्कार और वीरो की हुकार, कानो के पर्दे फाडती हुई दृश्य को अत्यन्त भयानक तथा रौद्र बना रही है। 'अल्ला-हो-अकबर' और 'हर-हर बम' के नारे आकाश मे गूँज कर प्रलय की सूचना दे रहे हैं।

इसी समय राजपूतो के कुछ वीर तलवार और भाले ले-लेकर हाथियो के यूथ पर झपटे। उन्होने क्षणमात्र मे उनके हौदे और अम्बारी तलवार के आघातो से काटकर भूमि पर गिरा दिये। सूबेदार कासिम खाँ के हाथी की अम्बारी भी कटकर दलदल मे लुढक पडी। किन्तु हाथियों का सहारा लेकर उसके विशेष सेवको ने उसे अम्बारी से निकाल कर तट पर लाने का प्रश्न सफलतापूर्वक हल कर लिया। इस समय राजपूतो

के ऊपर सूबेदार को इतना क्रोध आ रहा था कि वह तलवार लेकर पागलो की भाँति उनके ऊपर झपटने से रोके नही रुका। इसी बीच मे वीर राजपूतो की तरफ से भी एक योद्धा उसके साथ लडने के लिए आगे बढ आया। कुछ देर तक दोनो वीर अपने हृदयो के गुबारो को निकालते हुये घोर द्वन्द्व मे सलग्न रहे। कासिम खॉ का पुत्र राजपूतो का बन्दी है और उसके अतिरिक्त उसकी सेना की भी उन्होने महान् क्षति की है। इसी भावना को लेकर वह क्रोध से विकराल रूप धारण कर जीवन-मरण की बाजी लगाता हुआ घोर सग्राम मे सलग्न हो रहा है। किन्तु उसका विपक्षी भी कोई साधारण योद्धा नही है। उसके लिये इससे पराजित होना तो दूर रहा, ठण्डे प्रकार से युद्ध करके उल्टा अपने विपक्षी को ही युद्ध में घायल कर रहा है। उसका शत्रु जो क्रोध से अगार बन उल्टे-सीधे प्रहार करने मे निमग्न है, निरन्तर असफलता का मुँह देखता हुआ अपने आघातो को निष्फल पा रहा है। काफी देर तक यह क्रम चलता रहा। अन्त मे अधिक घावो से मूर्च्छित होकर सूबेदार कासिम खॉ धराशायी हो गया। विपक्षी ने उसके भुजदण्ड बाँध कर उसे उसी क्षण अपना बन्दी बना लिया और उसको अपने एक सहायक को सौप दिया। सेना नायक-विहीन हो गई।

पाठक! सूबेदार को बन्दी बनाने वाले वीर राजपूत हाडा वश-रत्न बूँदी-धनी स्वय महाराव छत्रसाल जी है जिन्होने उसे खिला-खिलाकर बन्दी बनाया है। सेनापति से वञ्चित हो जाने पर सेना मे कोलाहल मच गया। महाराव छत्रसाल ने कडककर ऊँचे स्वर मे कहा, 'यवन वीरो! तुम्हारा अध्यक्ष हमारा बन्दी हो चुका है। आप लोग हमारी इस चूहे-दानी मे बन्द है। यदि हम चाहे तो तुम्हे इसी दशा में भूख और प्यास से तडफाकर मार सकते हैं। यही तक नहीं, आसानी से तुमको तत्क्षण तलवार के घाट भी उतार सकते हैं। किन्तु नही, तुम्हारी अकारण हत्या से हमे कोई लाभ नही

और जब तक कि तुम् किसी तरह की उद्दण्डता प्रकट न करो, हम ऐसा करेंगे भी नही। अत तुम शस्त्रास्त्र रखकर आत्म-समर्पण कर दो तो तुमको इस बन्दीगृह से बाहर निकाल देंगे।'

भय के कारण सब के छक्के पहले ही छूट रहे थे। इस घोषणा को अपने लिए एक प्राणदायक विभूति समझ, शस्त्रास्त्र और घोडे छोडकर तथा हाथ उठाकर सब के सब आश्रित हो गये। हाडा-नरेश ने पुल के स्थान पर एक तख्तो की पुलिया बनाकर केवल सैनिको को खाई के उस पार कर दिया, घोडे और सामान अपने अधिकार में कर लिये।

सातवाँ परिच्छेद

प्रात काल का समय है । ऊषा की वेला में सौम्यानन सूर्य्य की परम शोभायमान लालिमा बडी सुखद एव सुन्दर दृष्टिगोचर हो रही है और विशेष रूप से उस समय जबकि वह लालिमा कलकल-निनादिनी यमुना के स्वच्छ जल को चीरकर निकल रही हो। उस समय तो उसकी शोभा अपनी चरम सीमा को पहुँचकर दृश्य को और भी अधिक दर्शनीय बना नेत्रो को असीमित आनन्द प्रदान कर देती है । प्रभात के समय मे पक्षीगणो का कलरव नदी के निनाद से मिल कर कानो मे स्वकाव्य-कला का कमनीय कमरस निचोड तथा सगीत की सुमधुर शकर से संमिश्रित कर उन्हे अधिकाधिक श्रवण-स्वाद लेने को उद्यत कर रहा है । शीतल मन्द समीर अपनी अनुपम सुगन्धि को लेकर घ्राणानन्द प्राप्त करने के लिए नासिका को नम्रतापूर्वक निमत्रण दे रहा है । ऐसे समय मे हृदय ससार की हाय-हत्या को छोड स्वत प्रकृतिमय बन जाया करता है और अपनी रुचि वा समस्त ज्ञानेन्द्रियो को आप से आप उस ओर आकर्षित कर लिया करता है । यही दशा भारत-सम्राट् शाहजहाँ की परम प्रिय बेगम, प्रकृति के सौदर्य की समर्थ उपासिका मुम्ताज के हृदय की है । उसने इस प्रकार की प्रात कालीन प्रकृति-पय सम्बन्धी पिपासा को शान्त करने के लिए लाल किले के अन्तर्गत बारहदरी के ऊपर वाली छत की बरसाती मे उन सुन्दर क्षणो को बिताने का निश्चय किया है। इसी कारण उस बरसाती को निराले ढग से दरी-कालीन-तोशक-तकिया

गिल्म-गलीचा, तारकशी के काम की रेशमी चादरो से सुसज्जित और झाड-फानूसो से अलकृत करा दिया है। नित्य प्रातः इस आनन्ददायक प्रकृति-क्रीडा के साथ साक्षात्कार करते रहने का विचार करके प्रस्तुत बेगम उक्त स्थान पर पधारा करती है। तदनुसार आज भी उसे इस समय उसी आनन्द को अनुभव करने के लिए उस स्वर्गीय दृश्य ने आमन्त्रित किया है और वह बडी तल्लीनता के साथ उसका सुरस ग्रहण कर रही है। उसकी इस तल्लीनता को अकस्मात् दासी मुरादन ने प्रातःकाल का नाश्ता लाकर भग कर दिया है। इस पर वह कुछ रुखाई से उसके साथ निम्न बातचीत करने लगी है।

मुम्ताज—आज इतना सवेरे नाश्ता कराने की क्या वजह है मुरादन ?

मुरादन—बादशाह सलामत के वास्ते आज नाश्ता सवेरे तैयार-हो गया। उनको नोश कराने के बाद सोचा कि हुजूर को भी लगे हाथ निबटा दूँ। नाश्ते को ठण्डा करने से क्या फायदा ?

मुम्ताज—आला हजरत को आज इतना सवेरे नाश्ते की जरूरत क्योकर हुई, मुरादन ?

मुरादन—गरीबपरवर को आज सवेरे दरबार खास करना है।

मुम्ताज—आज इस वक्त दरबारे-खास क्यो ? क्या कोई खास बात है ?

मुरादन—सुना है सरकार ! कि बूंदी का राजपूत राजा सल्तनत के ख़िलाफ बागी हो गया है, जिसके इन्तजाम के वास्ते सूबेदार कासिम-खा खुदावन्द के पास एक कैफियतनामा भी भेज चुके हैं। मगर सरकार ने उस पर कोई गौर नही फरमाया। इसका नतीजा यह हुआ है कि उसने जग छेड कर सल्तनत को बडा नुकसान पहुँचाया है।

मुम्ताज—क्या नुकसान पहुँचाया है ? हमारे सुनने मे तो अभी तक कुछ भी नही आया।

मुरादन—सूबेदार कासिम खाँ और उनके सारे अमले को कैद कर लिया है, सरकार ?

मुम्ताज—सूबेदार को कैद करने की वजह ? जो कुछ जानती है सारी कहानी साफ-साफ खोलकर बयान कर।

मुरादन—असल वाकया यह है हुजूर ! कि रूपनगर की बडी राजकुमारी किरण बहुत खूबसूरत है, जिसके साथ महाराज जगतसिंह शादी करना चाहते हैं, मगर शेरशाह रुहेले ऊपर से महाराज के दोस्त बने रहकर उसे दाव-पेच से हथियाना चाहते हैं। इसलिये टट्टी की ओट शिकार करने के ख्याल से उन्होने एक बडा जाल बिछा दिया है।

मुम्ताज—तो इस जाल का शिकार बेचारा कासिम खाँ कैसे बन गया ?

मुरादन—शेरशाह ने वजीर आजम की मारफत पहले रूपनगर के राजा को बादशाह सलामत के दरबार में तलब कराया। इसके बाद उसे कासिम खाँ की मारफत रास्ते में लुटवाकर कैद करा लिया। साथ ही उसके लडके को चुनौती भिजवा दी कि किरणमयी को फिरौती की शक्ल मे पाने पर ही राजा साहब को रिहा किया जा सकता है, नही तो नही।

मुम्ताज—क्या कासिम खाँ ने बहैसियत एक सूबेदार के खुले तौर से ऐसी हिमाकत की है ?

मुरादन—नही हुजूर ! उसने अपने दोस्त मुन्ने खाँ मेव उर्फ शेरेजग के जरिये, जो डाकुओ का मशहूर सरगना है, यह काम कराया है।

मुम्ताज—डाकू को तो सजा देनी चाहिये, न कि उल्टा दोस्त बनाना।

मुरादन—इतना ही नही सरकार ! सूबेदार साहब ने तो उसे

अलीगढ के किले का किलेदार बनाकर मुगल फौज का मनसब भी सौप दिया है। उसी जालिम ने हुजूर की बावफा रियाया रूपनगर के राजा को कैदी की हैसियत से उसी किले में बन्द कर दिया और फिरौती के तौर पर राजकुमारी की तलबी की।

मुम्ताज—यह तो बडा गहरा राज़ है ! इसके आगे क्या हुआ ?

मुरादन—बेशक हुजूर ! इसके बाद रूपनगर वालो ने अपने राजा की रिहाई के लिये बूँदी के महाराव से इम्दाद माँगी। बूँदी वाले पोशीदा तरीके से रात को किले में घुसकर राजा और रानी रूपनगर को निकाल ले गये और साथ ही पकड ले गये डाकू शेरेजग को भी।

मुम्ताज—शाबाश ! कमाल कर दिखाया बूँदी वालो ने, मगर यह तो बगावत नही हुई, मुरादन !

मुरादन—इसके बाद शेरेजग के लडके बुन्दे खाँ ने सूबेदार से फरयाद की। वे पच्चीस-तीस हजार की तादाद मे वसीह सिपाह लेकर छोटी-सी बूँदी रियासत पर चढ दौडे। चढाई की वजह का बहाना यह बताकर जग का ऐलान किया गया कि बूँदी के महाराव ने ही रूपनगर के राजा को कैद कराया और शेरेजग के राज़ से वाकिफ हो जाने की वजह से उसको भी धोखे से पकडकर अपना कैदी बना लिया है।

मुम्ताज—सूबेदार की इतनी ज़ुरंत कि आला हज़रत तक को धोखा दे दिया ? खैर, सूबेदार की चढाई का क्या नतीजा हुआ ?

मुरादन—क्या बयान करूँ, सरकार ! एक हँसी, एक दुख वाली कहावत है। एक औरत के धोखे में आकर दरिया खाँ मय अपनी एक हज़ार फौज के आग मे जल मरे। सूबेदार के फरजन्द सहादत खाँ और मरदान खां की पाँच-छः हजार फौज को पानी में डुबाकर दुश्मन ने पस्पा कर डाला और मरदान खाँ व सहादत खाँ को कैद मे डाल दिया। इसके बाद खुद जनाब सूबेदार साहब के लश्कर को झील से घिरी हुई एक पहाडी राह की चूहेदानी मे घेर कर बरबाद कर दिया और सूबेदार

साहब को कर दिया नज़रबन्द हिरासत में लेकर।

मुम्ताज—जग और इश्क में हर एक चीज़ जायज है। और फिर यह धोखे की लडाई का तरीका भी तो उन्हे मुग़लो ने ही सिखाया है। इसके बाद क्या हुआ ?

मुरादन—शेरशाह ने कायम-मुकाम सूबेदार की हैसियत से बूंदी-धनी को यह हिदायतनामा भेजा कि अगर बूंदी-महाराज हमारे दो अफरीकी जवानो के साथ एक-एक से लडकर उन्हे हरा देंगे तो उनका कुसूर माँफ हो जायगा। अगर वे खुद हार गये या लडे नही तो बूंदी की रियासत से हाथ धोने पडेगे। बूंदी-धनी ने इस चुनौती को मजूर कर लिया।

मुम्ताज—राजपूत आम-बर्ताव मे नर्म मगर जंग में बडे खूँख्वार हो जाते है। खैर, उस एकाकी लडाई का क्या नतीजा हुआ ?

मुरादन—बूँदी-धनी ने दोनो शाही बहादुरो को हरा दिया।

मुम्ताज—वे नामवर शाही बहादुर कौन हैं, जो सल्तनत की इज्जत मे चार-चॉद लगाकर आये हैं ?

मुरादन—नवाब रुहेला जनाब शेरशाह और आमेर महाराज सवाई जगतसिंह बहादुर, जो अफरीदी सिपाही की सूरत बना नकाब डालकर लडे और दोनो के दोनो हार खाकर अपने-अपने घर आ बैठे।

मुम्ताज—यही तो हमारे रुक्ने-सल्तनत है, जिनकी बहादुरी, दलेरी और कूव्वते-बाज़ू की आला हज़रत भाट बनकर उनका बखान करते और डींग हाँका करते हैं। शर्म से कर दी न इन्ही लोगो ने हज़रत की गर्दन नीची ?

मुरादन—हॉ, हुज़ूर ! इस सारी ज़िल्लत को उठाकर अब सोचते हैं कि इस नाज़ुक वक्त मे क्या करे।

मुम्ताज—बूँदी-धनी जैसे जाबाज बहादुर के खिलाफ और ज्यादा फौज-कुशी करना और भी ज्यादा गये-सिरे की नादानी होगी।

मुरादन—तो क्या हुजूर ! बूँदी-धनी की बगावत को आपके खयाल से रोका ही न जाय ?

मुम्ताज—जरूर रोका जाय, मगर इन्साफ को मद्देनजर रखकर। असल मे तो ज्यादती बूँदी-धनी की नही, सल्तनत के कारकुनो की है। मेरे खयाल से तो बूँदीपति ने कोई बगावत नही की। उसने वही किया है, जो उसका फर्ज था। फर्ज को बगावत का नाम देना कोई दानाई नही है।

मुरादन—मगर खुदावन्द के खयाल मे उसके बागी न होने की बात नही आई।

मुम्ताज—यह उनकी गलतफैमी है जो किसी दिन ज़रूर दूर होकर रहेगी।

मुरादन—शायद हो जाय। मगर अभी तो उम्मीद नही।

मुम्ताज—उम्मीद क्यो नही ! और हॉ, बूँदी के राजा छत्रसाल की शक्ल ध्यान मे नही आ रही है। क्या वह हमारे हुजूर मे कभी पेशे-कदम नही हुआ ?

मुरादन—आया तो ज़रूर होगा, मगर हुज़ूर को याद नही रहा है।

मुम्ताज—अरे यह वही तो नही जिसने तीरन्दाजी का हमारे हाथो से इनाम हासिल किया था। जिसने अपनी आँखो से पट्टी बाँध कर महज आवाज पर तीरकमान से निशाना मारा था।

मुरादन—हाँ, हाँ, वही बूँदी के महाराज छत्रसाल हैं। उस वक्त वह एक राजकुमार था।

मुम्ताज—मुरादन ! उस नौजवान ने तो मेरे दिल पर ऐसा गहरा असर किया है, यानी दिल मे उसकी सूरत ऐसी समाई है कि हजार कोशिश करने पर भी आँखो के आगे से वह हटती ही नही। उसके खूबसूरत रौबीले चेहरे और बडी-बडी सुर्खी लिये डोरेदार नशीली आखो ने तो

मेरे दिल मे उसी वक्त से इश्क का तूफान-सा खडा कर दिया है। जी चाहता रहा कि फिर मिलूँ, मगर फिर वह सूरत देखने मे नही आई।

मुरादन—गजब का जवामर्द और दलेर है वह! इसके साथ ही चाँद-सा खूबसूरत चेहरा और गोल-गोल काले-कजरारे मृग के से नयन, कमाल का हुस्न है, हुजूर!

मुम्ताज—तुझसे मेरा कुछ छिपा नही है मुरादन! जैसी मेरे शरीर की हालत उसके दीदार होने पर हुई, वैसी खुदा दुश्मन की भी न करे। मेरा जिस्म क्या हुआ? उसकी बोटी-बोटी और हर बोटी का जर्रा-जर्रा और हर जर्रे का एक-एक तार उसके इश्क के रग मे एकदम रँग गया। वह रंग इतना गहरा और पक्का है कि अपना असर ज़िन्दगी-भर, नही-नही, कयामत तक भी कायम रहेगा। इस दिल मे जो तडफ उसके वास्ते पैदा हुआ करती है वह कभी खुद शाहजहाँ के वास्ते भी नही हुई। मेरा नारीपन—दरहकीकत उस नौजवान को मुकम्मिल मर्द मानकर जिस तडफ के साथ जागता है, दुनिया मे दूसरे किसी पुरुष को देखकर नही। कुछ दिन से दिल ने उसे कुछ-कुछ भुला-सा दिया था, मगर आज अचानक उसका जिक्र आते ही उसकी याद फिर से दिल को सताने लग गई है। वह सूरत मेरे दिल मे, दिल की रूह मे और रूह के जजबात मे और जजबात के झुकाव मे ऐसी जज्ब होकर बस गई है कि मुझे उसी का रूप बना दिया है। मेरा दिल, मेरी नजर उसे छोड कर और मर्दो को मर्द मानने के लिये ही तैयार नही है—वह चाहे खुद खुदावन्द ही क्यो न हो। दिल का नाता तो मेरा उससे है। उसके नाम पर ताजो-तख्त तक बाखुशी कुरबान कर सकती हूँ।

मुरादन—इश्क ऐसी ही चीज है। उसके फूल राजमहलो के गमलो की बनिस्बत माद की मिट्टी मे ज्यादा हौसले से फूलते-फलते और खिला करते है।

आठवाँ परिच्छेद

आज बूँदी की शोभा देखने योग्य है। समस्त हाट-बाट और बाजार इस समय विशेष रूप से सजाये गये हैं। राज-प्रासादो मे झाड-फानूस एवं झिलमिली लगाकर तथा दीपक आदि बहुतायत से जलाकर हर्ष प्रकट करने के लिये एक विशेष प्रकार की दीपावली मनाई गई है। मार्गो और बाजारो मे स्वागत आदि के स्वस्तिपत्र लगाये गये है। सडकें असामान्य रूप से साफ की गई है। सर्वसाधारण जनता के मकान भी स्वच्छ और साफ है और उन पर बन्दनवार बँधे हुये हैं। यह सारे हर्ष-प्रदर्शन नगर मे इसलिये हो रहे हैं कि आज भारत-सम्राट् शाहजहाँ बूँदी-नगर मे पधारे हैं। उनके राज्य मे आने का कारण भी यह है कि विग्रह की विषाक्त दुर्भावना को दूर भगा करके उसके स्थान पर सन्धि की सद्भावना की स्थापना करना चाहते है। यही कारण है कि आज वे राजा, प्रजा सब के सम्मान, श्रद्धा तथा स्वागत-सत्कार के अभूत-पूर्व प्रकार से केन्द्र बन रहे हैं।

सूबेदार कासिम खा की महाराव बूँदी द्वारा गिरफ्तारी पर सम्राट राजधानी से अजमेर पधारे। उनकी प्राण-प्रिय बेगम मुम्ताज भी उनके साथ आई। अजमेर मे उन्होने रूपनगर महाराज के मार्ग मे लूटे जाने और शेरेजग द्वारा नजर कैद किये जाने से लेकर शेरशाह और महाराज जगतसिंह के बून्दी-नरेश छत्रसाल के साथ द्वन्द्व पर्यन्त की सारी घटनाओ की स्वत. गुप्त और प्रकट रूप से जॉच की और बूँदी-नरेश को उन सारे

आरोपो के लिये, जो उन पर लगाये जा रहे थे, निर्दोष निश्चित किया। शेरेजग को सूली और सूबेदार कासिम खॉ को पदच्युत किये जाने की घोषणा हुई। बूँदी-नरेश छत्रसाल को मध्य भारत का सूबेदार बनाना निश्चय हुआ और व्यक्तिगत रूप से उन्हे सप्तहजारी मन्सब अता भी किया गया। मुम्ताज बेगम की विशेष कृपा से बूँदी-नरेश छत्रसाल को शाही ड्योढी का आला हाकिम भी नियुक्त किया गया। इन सारी उपलब्धियो के प्रमाण-पत्र (सनद) और खिलअत आज के दरबार मे दिये जायेगे। दोनो युद्धो का उत्तरदायी मुन्ना मेव और कासिम खा को करार दे उनकी सारी व्यक्तिगत सम्पत्ति को जुर्माने के रूप मे लेकर बूँदी और रूपनगर की हानि की पूर्ति की जायगी। अलीगढ का क्षेत्र इन्द्रगढ राज्य मे सम्मिलित होगा। रूपनगर की राज-कन्याओ की शादी स्वयवर के द्वन्द्व द्वारा सम्पन्न होगी। बूँदी-महाराज और सम्राट् को एकत्रित करने मे चमेलीजान, मुरादन और मुम्ताज बेगम का विशेष हाथ रहा है। उन्होने यह कार्य बडी लग्न से पूरा कराया है। बून्दी नगर से पूर्व की ओर आराम उद्यान मे सम्राट् का शिविर खडा है। उसके ऊपर शाही मुगल झण्डा गगन मे ऊँचा फहरा रहा है। सम्राट् के महाशिविर के निकट और बहुत से तम्बू, डेरे, कनात और छोलदारियाँ शाही सैनिक तथा अन्य सरकारी कर्मचारियो के वास्ते लगी हुई हैं। सम्राट् का शिविर उन सबके मध्य मे है।

लगभग दिन के दस बजे का समय हुआ। शिविर के सामने टिकटियो पर लटकने वाले घटे मे जोर-जोर से चोट पडने लगी। घटे की आवाज दूर तक सुनाई दे रही है। घटे की आवाज सुनते ही सारे दरबारी अपने निश्चित लिबास मे दरबार के अन्दर जाकर अपने-अपने स्थानो पर बैठ गये। जो सरदार तथा सिपहसालार ताजीम के अधिकारी हैं, और जिनको दरबार मे कुर्सी मिला करती है, वह कुर्सियो पर बैठ गये हैं शेष उनके पीछे खडे हो गये हैं। मुख्य द्वार के दूसरी तरफ

एक ऊँचा मच बनाया गया है। उस पर गद्दे, दरी, कालीन आदि बिछा कर तथा तारकसी और जरी की रेशमी चद्दरे फैलाकर तोसक तकिये और गिल्म गैदुओ से युक्त करके सिहासन का अनुरूप कर दिया है। सरदार सब आ चुके है किन्तु शाहजहाँ अभी तक दरबार मे नही पधारे है। इसी समय 'अदब कायदा होशियार' के शब्दो को जोर-जोर से उच्चारण करते हुये छडीबरदार प्रविष्ट हुये। उनके पश्चात् कुछ मुसाहिबो के साथ-साथ सम्राट् शाहजहाँ ने दरबार मे प्रवेश किया। सब दरबारी नीची दृष्टि किये सम्राट् के स्वागत-सत्कार मे हाथ जोडते हुये उठकर खड़े हो गये। सम्राट् मध्य मार्ग से निकलते हुए अपने आसन के निकट पहुँचकर समस्त उपस्थित सरदारो पर दृष्टिपात करते हुए अन्त मे उस पर विराजमान हो गये। उनके बैठते ही सरदारगण पूर्ववत् बैठ गये। उसी समय भाटो ने विरुदावली का बखान करना आरम्भ कर दिया। मुख्यमन्त्री मच के निकट सरदारो की सूची लेकर खडा हो गया और बारी-बारी से उनके नाम बोलता गया और वह सरदार सम्राट् के सम्मुख आकर उनको थैलियाँ अथवा हीरे-मोती आदि बहुमूल्य प्रस्तर भेट कर अपनी राज-भक्ति का प्रमाण देने लगे। अमीर-उमरा सब सरदारो ने अपनी-अपनी भेट की। भेट-कार्य समाप्त होने के पश्चात् दरबार के अन्य उद्देश्य सपादित हुए।

इसी समय सूचना मिली कि बूँदी के महाराव दरबार मे आ रहे है। यह समाचार सर्वसाधारण पर घोषित कर दिया गया। छोटे मन्सबदारो की कुर्सियाँ सम्राट् के सामने है, किन्तु पञ्च और सप्तहजारी मन्सबदारो की सम्राट के मञ्च के नीचे उनके बराबर मे है। इसी समय बूँदी-नरेश ने अपने दोनो भाइयो और मन्त्रियो सहित मुख्य द्वार से सम्राट् शाहजहाँ के दरबार मे प्रवेश कर शाहशाह की वदना की। मन्त्री ने एक चाँदी की तश्तरी महाराव के हाथ मे दी, जिसमे एक सोने की खुली हुई डिब्बी रखी हुई है और उस स्वर्ण की डिब्बी मे एक बहुमूल्य हीरा दमक रहा

है । महाराव ने वह तश्तरी सम्राट् के सम्मुख रख दी । मुख्य मत्री ने उसी समय 'मुखातिब, मुखातिब' के शब्द कहे । बादशाह ने वह भेट ले ली और मुख्य मत्री की ओर देखा । मुख्य मत्री ने दोनो हाथो के सकेत से सप्तहजारी मन्सबदारो की कुर्सियाँ दिखाईं । बूँदी-नरेश उनमे से एक पर विराजमान हो गये । उनके पश्चात् इन्द्रगढ-नरेश मौकमसिह और महासिह ठिकानेदार थानोद ने सम्राट को मुहरो की भेट की । मुख्य मत्री ने इन्द्रगढ-नरेश और थानोद के ठिकानेदार को महाराव का भाई बतलाते हुए उनका सम्राट् से परिचय कराया । सम्राट् ने उचित ताजीम देते हुए फिर रहस्यभरी दृष्टि से मत्री को देखा और मत्री ने तत्काल इन्द्रगढराव को पञ्चहजारी और थानोद आपजी साहब को तीनहजारी मन्सबदारो मे स्थान दिया । इसके पश्चात् मुख्य मत्री किसी विषय पर सम्राट् से वार्तालाप करते रहे । उसके पश्चात् महाराव और उनके भाइयो को बारी-बारी से बुलाकर सम्मान-वस्त्र अर्थात खिलअत, नवीन जागीरो के प्रमाण-पत्र (सनद-पट्टे) प्रदान किये । एक शर्तनामे पर महाराव और सम्राट् दोनो ने हस्ताक्षर किए । उसके अनुसार सम्राट् की घोषणा मे ऊपर कहे गए समस्त निर्णय कार्यरूप मे परिणत हुये । इस प्रकार बूँदी महाराव फिर साम्राज्य से सम्बन्धित हो गये । जिस समय मान-वस्त्र (खिलअत) और प्रमाण-पत्र (सनद) आदि महाराव को दिये गए, उसी समय सभा-मञ्च के ऊपरी भाग मे बैठी हुई बेगम मुम्ताज उस दृश्य को देखकर प्रसन्नतापूर्वक करतल-ध्वनि कर अपना हर्ष प्रकट करने लगी । आज मुराद्दन भी उसके हर्ष में भाग ले रही है। दरबार का समस्त निश्चित कार्यक्रम समाप्त हो जाने पर मन्त्री ने सम्राट् को सूचना दी और सम्राट् ने आज के दरबार को बरखास्त कर दिया ।

नौवाँ परिच्छेद

प्रात काल का समय है। आकाश मेघमाला से आच्छन्न है। कभी-कभी झीनी-झीनी बूँदो के झरने झरने लगते है। शान्त शीतल मन्द सुगन्ध सयुक्ता सुखद समीर हृदय मे हर प्रकार से अपूर्व उत्साह और स्फूर्ति प्रदान कर साहस और शौर्य्य के कार्य करने की प्रेरणा दे रहा है। ऐसे समय मे वीरो की तो बात ही क्या कायरो के हृदय भी उत्साह-उमगो से भर कर शौर्य्यपूर्ण कार्य्य कर दिखाने के लिये तत्पर हो जाते है। ग्रीष्मकाल का यह प्रात काल भी आज स्वास्थ्यदायक और शीतल है, कारण कि सूर्य भगवान् ने अभी तक दर्शन नही दिये है। सम्भवत: वे भी अपने कार्य्य से छुट्टी करके इस शुभ वेला मे कही आमोद-प्रमोद एव मनोरजनार्थ चले गये प्रतीत होते है। ठीक ऐसे ही समय मे बून्दी राज्य के गहन वनो के अन्दर एक शिकारी-दल अहेरिया उत्सव में सलग्न हो वन्य-पशुओ के पीछे खाई-खल्लर, वन-बह्वर तथा झाड-झकारो मे टक्कर खाता फिर रहा है। इस भाग-दौड मे और साथी तो पीछे छूट गये हैं केवल इस दल के दो प्रमुख नेता एक नाहर को अपने लक्ष्य मे देखकर उसके पीछे अपने घोडे दौडाये चले जा रहे हैं। शेर आगे जाकर एक गुफा मे छिप गया है जिसे ये लोग ढू ढते-ढू ढते थक गये है। हारकर वे इस निश्चय के साथ वहाँ अपने आखेट की प्रतीक्षा कर रहे हैं कि उसके गुफा से बाहर होते ही उसे गर्माया जायेगा। कुछ देर चुप रहने के उपरान्त ये दोनो इस प्रकार वार्तालाप करने लगे, "यह बहुत

ही अच्छा हुआ जो बून्दी से युद्ध का सकट टल गया, अन्यथा कासिम खाँ ने तो हमारे लिए आपत्ति के बीज बोने मे किसी तरह की कसर छोडी ही नही थी ।"

"भाग्य से ही इ सकट से मुक्ति मिल पाई है, श्रीमान् !"

"भाग्य तो कोई वस्तु है ही, किन्तु उसके साथ ही इस सारे अध्याय मे मेरे आदर्श बन्धु, तुम्हारा कार्य्य भी कल्पना से कही अधिक ऊचा और सराहनीय है। रूपनगर महाराज को मुक्त कराना, कासिमखा को हराकर बन्दी बनाना और इसके उपरान्त सम्राट् को सन्धि करने पर बाध्य कर देना आप जैसे नीति-परायण सामन्त का ही कार्य है, नही तो क्या यह कार्य कुछ कम कठिन है ?"

"मैने तो केवल अपना कर्तव्य-मात्र ही पालन किया है जिसके लिये पिता तुल्य अग्रज और राजा के मुँह से इस प्रकार प्रशसा करना शोभनीय प्रतीत नही होता ।"

"कर्तव्य-पालन ही तो ससार मे सबसे कठिन कार्य है और है सबसे अधिक सराहनीय । जिसके लिये मै ही क्या स्वय शाहजहाँ .. ।"

"हाँ, तभी तो मै आपको इसका अपने से अधिक श्रेय प्रदान करता हूँ, क्योकि सम्राट् को सधि पर बाध्य करने वाली स्वयं सम्राज्ञी है, जो कि अग्रज के व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित है ।

"महत्व एव मन्सब मे उन आमेर-नरेश से, जो कि सदा से साम्राज्य के सबल स्तम्भ रहे हैं, हमको कम न रहने देना इतिहास मे एक अपूर्व घटना है और है आमेर-नरेश के दिल को दुखाने वाली वार्ता ।"

"शाहजहाँ स्वय जानते हैं कि महाराज जगतसिह का व्यक्तित्व इतना ऊँचा नही, जो आप से उन्हे ऊँचा समझा जाय । धन-धान्य मे अधिक हैं तो क्या हुआ ? राजकुमारी रूपनगर के हथियाने के लिये धीरे-धीरे गण्डे-डोरे डाल रहे हैं, यह कोई अच्छी बात है क्या ?"

वाचक ! अब आपको मालूम हो गया होगा कि प्रस्तुत सिहाखेट मे

तल्लीन और कोई नही, स्वय बूँदी-नरेश छत्रसाल और उनके भाई मौकमसिह इन्द्रगढाधिपति है, जो सिह के गुफा से बाहर आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

उन्हे इस प्रकार प्रतीक्षा करते हुए कुछ ही समय व्यतीत हुआ होगा कि, 'बचाओ, बचाओ' की चीत्कार-ध्वनि सुनाई दी। बूँदी-नरेश प्रस्तुत चीत्कार-ध्वनि को सुनकर तथा अनुज को वही ठहरने का आदेश देकर इस प्रकार घबराकर उसकी तरफ पैदल ही दौडे कि घोडे आदि को लेने तक का भी उन्हे ध्यान नही रहा। घटनास्थल पर पहुँचकर क्या देखते है कि एक मनुष्य पर एक विशालकाय नाहर ने आक्रमण कर दिया है और उसे अपनी थाप से गिराकर अपने खाने के लिए घसीटता हुआ ले जा रहा है। भयभीत होकर उसके ही मुँह से वहाँ यह चीत्कार-ध्वनि हुई है, जिस पर बूँदी-नरेश इधर आये हैं।

घटनास्थल पर पहुँचकर बूँदी-नरेश से यह दयनीय दृश्य नही देखा गया। वे उस मनुष्य के रक्षार्थ शीघ्र सिह को यह कहकर ललकारते हुये कि 'ओह वनराज! उस दीन प्राणी पर क्या जोर आजमा रहा है, इधर आ और मेरा शिकार कर'—अपनी कौली मे दाबते हुये, उसके साथ मल्ल-युद्ध करने लगे। बूँदी-नरेश को मध्य मे पडता देखकर सिहराज ने उस मनुष्य को तत्काल अपने पञ्जो से मुक्त कर दिया और महाराव के साथ अत्यन्त क्रुद्ध होकर द्वन्द्व करने लगा। महाराव ने ज्यो ही वनराज की बगली चढाकर उसे कुश्ती मे पछाडने की कोशिश की, त्यो ही उसने एक-दो थाँप महाराव की कमर मे जमा दीं जिससे उनकी पीठ पर घाव हो गया और उस घाव से चिरमिराहट के साथ रक्त प्रवाहित होने लगा। इस समय वे क्रोध से लाल वर्ण हो स्वय महाभयकर दिखाई पड रहे हैं। उन्होने रोष के आवेश मे कमर से पकड कर सिहराज को उठा लिया और बडे जोर से भूमि पर धर पटका। भूमि पर पडे हुये उस हिंसक पशु को उन्होने उसके सभलने से पूर्व ही फिर से दाब लिया और घुटनो की मार

देकर उसका दम निकालने लगे। नाहर अधमरा हो गया। इस समय वह अपने आपको अपने से कही अधिक सबलतर नाहर के पञ्जो मे जकडा हुआ अनुभव करने लगा। ज्यो ही उसने भयकर दहाड मारते हुये फिर जोर मारकर काटने को मुँह खोला, त्योही महाराव ने उसके मुँह मे अपना कमरबन्दा ठूँस दिया और दोनो हाथो से उसके पञ्जो को पकड तथा उसकी पीठ पर सवार होकर उसे घुटनो से मार-मारकर ढीला कर डाला। नाहर प्राय· मरणासन्न हो गया। उसी समय एक तीर बडे वेग से दाहिनी ओर से आया और महाराव की दाहिनी जाघ मे घातक घाव करता हुआ समा गया। अब तो उनको अपनी भी जान के लाले पड गये, क्योकि विष मे बुझे तीर के कारी घाव की जलन और शरीर को शक्तिहीन करने वाले, उनसे छूटते हुये रक्त के फुआरे उनकी दशा को अत्यन्त दारुण बनाने लगे। उन्होने अपने जीवन की आशा छोड दी। इस समय उनको अपनी मृत्यु साक्षात् सामने खडी दिखाई पडने लगी। फिर भी वह इस विचार से नाहर को समाप्त करने का प्रयत्न करने लगे, क्योकि जीवित रहकर वह उस व्यक्ति को भी मार डालेगा, जिसकी रक्षार्थ वे अपने प्राणो पर खेले हैं। अत उन्होने अपने पद प्रहारो को और भी ज्यादा तेज कर दिया। जिनके सबल एव घातक आघातो से शीघ्र ही वह नाहर भी मरकर ढेर हो गया। जब महाराज को यह निश्चय हो गया कि सिंह मर गया है तो उसके सीने से पृथक हुये और उस मनुष्य के निकट जाकर उसकी अवस्था का अध्ययन करने लगे जिसे उन्होने नाहर के पजे से छुडाया है और जो इस समय भी मूर्छित पडा है। उस व्यक्ति की अवस्था को देखकर उन्होने अनुभव किया कि उसके शरीर पर ऐसा कोई प्रहार नही हुआ, जिससे उसके प्राण जाने का भय हो। उसे मूर्छा केवल भय के कारण से ही हुई है, आघात के कारण नही। यदि उसके मुँह मे पानी

डाला जाय तो वह होश में आ सकता है, मगर पानी लाये कौन ? उनकी अपनी अवस्था तो उस व्यक्ति से भी अधिक खराब है। भाई मौकमसिंह को तो वही घोडो की रक्षा और गुफा मे घुसे हुये आखेट के बाहर आने की प्रतीक्षा मे छोडा हुआ है जिनके कान तक यहाँ से आवाज भी नही पहुँचाई जा सकती। इस तरह अपने कर्तव्य विषयक विचार मे मग्न होते ही उनकी दृष्टि उस मूर्छित मनुष्य की जेब के कागज पर गई और उसे इसलिए निकाल कर पढने लगे कि शायद उससे उस मनुष्य का कुछ विशेष परिचय प्राप्त हो जाय, किन्तु उसे पढकर वे और भी चक्कर मे पड गये, क्योकि वह कागज और कुछ नही, केवल रूपनगर की राजकुमारी किरणमयी का उन्ही के नाम भिजवाया हुआ पत्र है, जिसे सम्भवत वह वाहक उनके पास बूंदी को लेकर जाते हुये मार्ग मे शेर का आखेट हो गया है। अस्तु, पत्र में उन्होने पढा—

"हे हाडा बशावतस महाराज छत्रसाल ! आपने मेरे माता-पिता को शत्रु के बन्दीगृह से मुक्त कराकर, अपने उपकारो के लिये मुझे ऐसा ऋणी कर दिया है कि श्रीमान् के वास्ते प्राण देकर भी उससे छुटकारा नही पा सकती। इसके अतिरिक्त जब आप उनको यहाँ छोडने आये और दासी को दर्शन देकर कृतार्थ किया, तो आपके व्यक्तित्व ने मुझे ऐसा प्रभावित किया कि मैने मन और वचन से आपको अपना पति निश्चय कर लिया और एक सच्ची क्षत्राणी के अनुरूप आप ही के ध्यान मे रहने लगी हू जिसका शायद आपको ध्यान भी नही है। इधर अम्बर-नरेश, जिनको मै बिल्कुल नही चाहती, छल और बल से मुझे पाने की घात लगा रहे हैं। कही ऐसा न हो जाय कि वे अपने दुस्साहसपूर्ण प्रयत्नो मे सफल हो जाएँ और आप निश्चिन्त बैठे रहे। इसलिए मै इस वाहक द्वारा यह पत्र पठाकर परिस्थिति से परिचित करा रही हूँ।

—किरण"

पत्र को पढकर वे अत्यन्त चिन्तातुर हो अपने को अत्यन्त असमर्थ दशा मे पाकर दुखी हुए, जिससे उन्हे ऐसा कठिन आघात पहुँचा कि वे चीखकर मूर्छित होगये। उस चीख को सुनकर और महाराव को शीघ्र लौटता न देखकर मौकमसिह जी भी वहा आ पहुँचे और प्रस्तुत दृश्य देखकर अत्यन्त चकित हो गए।

दसवाँ परिच्छेद

राजस्थान का परम प्रतापी सूर्य जो उन्नत पथ पर अग्रसर होता हुआ, विष्णु के मध्यम धाम पर्यन्त उत्थित होकर, अपने शौर्य-पूर्ण प्रकाश की प्रदीप्ति से ससार को चकित कर रहा था, आज अस्ताचल के निकट पहुँच अपने अन्तर्धान होने की सूचना देने लगा है। भारत का वह क्षत्रित्व, जिसने देश की सौभाग्य-श्री के सरक्षरण का भार एक प्रहरी बनकर अपने ऊपर लिया था आज अपने उस दायित्व को मध्य एशिया के निवासी तथा मानवी-सभ्यता के प्रतीक मुगल सम्राटो की चिर-सेविका बनाकर एव उसकी दया पर छोडकर, आप स्वय सकीर्णहृदयता, अज्ञान और अविचार की क्षुद्र स्वार्थमयी मदिरा पी मस्त हो, घोर निन्द्रा मे पड-कर सो रहा है।

प्रस्तुत मुगल सम्राट् देश के उक्त क्षत्रित्व रूपी बबर शेर को अपना पालतू अनुचर बना अपने इगित पर इस प्रकार से नचा रहा है जैसे कोई चतुर कलन्दर अपनी डुगडुगी के सकेत पर टुकडे के दास पालतू बन्दर को नचाया करता है। जनता के प्रतिनिधि देश के इन सब राजा-महाराजाओ ने अपने उस महान् स्वातन्त्र्य दायित्व को तुच्छ वस्तु समझ मन्सब आदि साम्राज्य मे उच्च पद प्राप्त करके उस बिना दामो की दासता को अधिक गर्व की वस्तु समझकर अपनाया है।

इस प्रकार सम्राट् शाहजहाँ के शासन काल मे कहने को तो सभी नरेश अपने स्तर और मर्यादा के अनुसार सम्राट् से नायकत्व (मन्सब)

मानवस्त्र (खिलअत) तथा अन्य प्रकार के पद मानादि प्राप्त करके उसकी सेवा का कार्य करते हैं किन्तु उन सब मे आमेर-नरेश महाराजा जगतसिह प्रमुख गिने जाते हैं। उनको सम्राट् के पुत्रो की भाँति सप्त हजारी मन्सब प्राप्त है, जो साधारणतया अन्य राजा-महाराजा या नवाबो को नही। इसके अतिरिक्त उनका साम्राज्य मे सम्मान भी काफी है और हर आवश्यक मामले मे एक विशेष परामर्शदाता सचिव (मुसाहिब) के रूप मे स्वय सम्राट् उनका परामर्श लेता है और उस परामर्श के अनुसार कार्य भी होता है। तात्पर्य यह है कि उनकी साम्राज्य मे खूब चलती है।

इसी कारण रूपनगर की राजकुमारियो के विवाह-सम्बन्ध के विषय मे भी सम्राट् ने उसके परामर्शानुसार ही विवाह की तिथि निकट-भविष्य की निश्चित करते हुये यह निर्णय दिया है कि विवाह एक स्वयवर द्वन्द्व के फलस्वरूप उस विजयी व्यक्ति के साथ सम्पन्न किया जाय जो इस द्वन्द्वयुद्ध मे सर्वश्रेष्ठ योद्धा प्रमाणित हो। इस स्वयवर मे आमेर-नरेश को और तो किसी का भय नही है केवल बूँदीपति छत्रसाल हाड़ा की ओर से कुछ चिन्ता अवश्य है, जो इस समय के प्रख्यात योद्धा हैं, क्योकि वह उनको कुछ दिन पूर्व ही एक द्वन्द्वयुद्ध मे पछाड चुके हैं। फिर भी इस चिन्ता को शेरशाह ने यह विश्वास दिलाकर मिटा दिया है कि अपनी युक्ति से छत्रसाल के कटक को उनके मार्ग से दूर कर देगा। अत. इस समय इस चिन्ता से तो वे बिल्कुल मुक्त हैं किन्तु इस बात का परिताप उनके हृदय मे अवश्य है कि शाहजहाँ ने बूँदी-नरेश छत्रसाल हाडा को, जो औचित्य से अधिक सम्मान और पद प्रदान किये हैं, उनके देते समय आमेर नरेश के विरोध का भी ध्यान नही रक्खा है। तिस पर भी इसका कोई विशेष प्रभाव उन पर इसलिये नही हुआ, क्योकि सम्राट् ने यह सब कुछ केवल अपनी परम प्रिय बेगम मुम्ताज की इच्छा को पूरा करने के लिये तद्प्रसन्नतार्थं केवल भावावेश मे किया है, जिसका भूल-सुधार वे किसी भी उचित समय पर कूटनीति से करा सकेंगे, कारण

कि बूँदी-नरेश के विरुद्ध प्रत्येक कार्य मे उनका सहयोग देने के लिये छत्रसाल के चिर शत्रु शेरशाह नवाब रहेला ने शपथ ग्रहण कर रक्खी है और शेरशाह इतना तिकडमी भी है कि येन-केन-प्रकारेण बूँदी-नरेश को अवश्य नीचा दिखाकर छोडेगा। इस समय तो स्वयवर के लिये सामान्य रूप से तैयारी मात्र करनी है।

इस प्रकार आज साम्राज्य के कार्यो से छुट्टी पाकर और सम्राट् से तत्-सम्बन्धी अनुमति लेकर आमेर-नरेश निश्चिन्त मन से आमेर के लिए प्रस्थान कर रहे हैं। शेरशाह एक हितैषी मित्र होने के नाते उस घनिष्ठता का प्रमाण देने के विचार से, उनके यात्रा-सम्बन्धी कार्यो मे उनकी दत्त-चित्त हो सहायता कर रहे हैं और करा रहे हैं सकलन, प्रत्येक मार्गोपयोगी पदार्थ का।

विदाई की वेला आ जाने पर दोनो मित्र हृदय मिलाकर इस प्रकार गाढालिगन के साथ मिले हैं, मानो एक हृदय और दो शरीर हो। दोनो के नेत्रो से स्नेहाश्रु उमडकर बरसाती नालों की भॉति बहने लगे है। यह प्रदर्शन तो बडा भावोत्पादक हुआ है, किन्तु इसमे यथार्थता अथवा वास्तविकता कितनी है, सो ईश्वर जाने। निश्चित समय से यात्रा प्रारम्भ हो गई है और उनकी टोली कूच करती हुई अपनी मजिल को दाबती जा रही है। यात्रा-काल के अन्दर अम्बरेश के मस्तिष्क मे यदि कोई विचार आता है, तो वह प्रस्तुत तीन समस्याओ, अर्थात् बूँदीपति से वैरशोधन, राजकुमारी किरणमयी की प्राप्ति और शेरशाह के साथ सौहार्द्र-निर्वाह, से ही सम्बन्धित होता है, इसके अतिरिक्त अन्य कुछ नही। यह जानकर कि तिमिरोत्पादक सन्ध्या-काल सन्निकट है और रात्रि-काल मे यात्रा करना उचित नही है, एक सुविधा-जनक स्थान को देखकर रात्रि-भर यही विश्राम करने की आज्ञा देते हुये टोली का आगे बढना रोक दिया है। अतः उक्त निश्चित स्थान पर ही, जो कि बीना-नगर के निकट है, रात्रि-भर ठहरने की व्यवस्था हो गई है। भूमि को

साफ कर तम्बू-डेरे तान दिये गये हैं । उनके मध्य मे महाराजा के वास्ते एक अति-उत्तम विशाल शिविर बनाया गया है और उसे दरी, जाजम, गलीचे, कालीन एव रग-बिरगी तारकसी के काम से युक्त बहुमूल्य रेशमी चादरो को बिछाकर राजोचित रीति से सजा दिया गया है । शिविर मे मुख्य द्वार के सामने पार्श्व मे एक विशाल मच भी बनाया गया है, जिस पर मखमल के गलीचे, कालीन, गिलम-गैदुये और तोसक-तकिये बडी उत्तमता से लगा दिये गये है । इसी मच पर एक तकिये के सहारे विराजमान होकर अम्बर-नरेश अपने निकट खडे हुये, अपने कतिपय अन्तरग सरदारो के साथ किन्ही घरेलू विषयो पर वार्तालाप कर रहे हैं ।

इसी समय द्वारपाल ने आकर निवेदन किया कि बूँदी के हाडा-नरेश महाराव छत्रसाल जी के कनिष्ठ भ्राता इन्द्रगढ-नरेश श्री मौकमसिह जी पधारे हैं और वे श्रीमान् से साक्षात्कार करना चाहते हैं । इस पर महाराज ने अपने सरदार भूरसिह को ससम्मान उन्हे अपने निकट लाने का आदेश दिया । भूरसिह के साथ-साथ मौकमसिह महाराज के निकट पहुँचे और उनको सम्मान के साथ प्रणाम कर सामने खडे हो गये । महाराज ने अपने स्थान से खडे हो कर उनका स्वागत किया और फिर अपने निकट बैठाकर निम्न प्रकार से वार्त्तालाप आरम्भ कर दिया ।

अम्बरेश—यहाँ मार्ग मे दर्शन किस प्रकार हो गये । मैं तो बूँदी-महाराव को उनके मन्सब और जागीर-सम्बन्धी उपलब्धियो के लिये उन्हे बधाई देने के लिये बूँदी जाने का स्वय ही विचार कर रहा था, किन्तु आपके दर्शन का इस समय होना तो किसी अनिष्ट का सूचक प्रतीत होता है ।

मौकमसिह—अग्रज सिहाखेट मे घातक रूप से घायल हो गये हैं, अत मै उन्ही के विषय मे प्रस्तुत दुर्घटना की सूचना लेकर सम्राट् के निकट जा रहा हूँ और साथ ही वहाँ श्रीमान् के भी दर्शन करना

अनिवार्य था, जो मेरे कार्य-क्रम का एक अग है। किन्तु हर्ष की बात है कि श्रीमान् यहाँ मार्ग मे ही उपलब्ध हो गये।

अम्बरेश—बूँदी-नरेश छत्रसाल जी सिंहाखेट मे घातक रूप से घायल हो गये हैं, यह तो अत्यन्त खेद की बात है। किन्तु वे घायल हुए कैसे, यह जानने की उत्कट इच्छा है। क्या उनके ऊपर शेर ने आक्रमण कर दिया था या कोई दूसरी बात है?

मौकमसिह—जिस समय वे नाहर के साथ मल्ल-युद्ध मे सलग्न थे, उनकी दाहिनी जाँघ मे एक तीर आकर लगा, जिससे भारी घाव हो गया। शीघ्र ही घावो की मरहम-पट्टी कराई गई और घातक की खोज की गई।

अम्बरेश—घातक की खोज! क्या उसका कुछ पता लगा? किन्तु मरहम-पट्टी के पश्चात् महाराव का स्वास्थ्य कैसा रहा?

मौकमसिह—घाव तो कारी है ही। हाँ, उपचार और सेवा-सुश्रषा का प्रबन्ध ठीक है। उसी के आधार पर कुछ उनके प्राण बचने की आशा हो चली है, अन्यथा प्राण जाने मे सन्देह ही क्या था। दूसरी बात यह है कि खोज करने पर ईशरदा ठाकुर साहब का विशेष सेवक फतह खाँ उस जगल मे कमान लिये हुये घूमता देखा गया।

अम्बरेश—क्यो, क्या फतह खाँ को आपने बन्दी नही कर लिया?

मौकमसिह—जी, नही। खोजा लोगो को केवल पहचानने की आज्ञा थी। बन्दी बनाकर लाने की आज्ञा नही दी गई थी।

अम्बरेश—आप सुन रहे हैं सरदार भूरसिह। इन्द्रगढ-धनी को आपके सेवक फतह खाँ से शिकायत है कि उसने महाराव पर छिपकर तीर चलाया।

भूरसिह—फतह खा पर यह आरोप मिथ्या लगाया गया है। वह ऐसा मनुष्य कदापि नही है। दूसरे उसकी श्री महाराव से कोई शत्रुता

नही है, और तीसरे आजकल फतह खाँ नवाब साहब शेरशाह रुहेला की पेशी मे है।

मौकमसिह—हाँ, श्रीमान्! तीर पर नवाब शेरशाह का नाम भी अकित है। इस बात से भी अपराध उसी का प्रमाणित होता है।

अम्बरेश—तो क्या आपका यह विश्वास है कि वह बाण नवाब साहब ने महाराव के वध के लिये उसको प्रदान किया होगा?

मौकमसिह—इसका यह अभिप्राय तो नही, किन्तु फतह खाँ अपराधी अवश्य है।

अम्बरेश—अच्छा! फतह खाँ के अपराध की हम जाँच कराएगे।

मौकमसिह—श्रीमान् को कष्ट करने की क्या आवश्यकता है। अपराधी हमे सौपा जाय। हम ही जाँच करा लेंगे। साक्षीजन भी बूंदी में ही हैं और यह मामला भी बूंदी राज्य का ही है।

भूरसिह—फतह खा बूंदी नही भेजा जायगा। विधानानुसार उस पर मामला आमेर मे ही चल सकता है, अन्यत्र नही। क्या अम्बरेश पर भी आपका कुछ सन्देह है?

मौकमसिह—जब दोनो राजा मित्र हैं, श्रीमान्! तब तो यह श्रीमान् की ओर से कुछ-कुछ ज्यादती है।

भूरसिह—मित्रता के ही कारण तो मामला भी उठाया जायगा, नही तो इस आरोप का और तो कोई आधार ही नही है।

मौकमसिह—ईशरदा ठाकुर साहब! आपकी वार्ता का ढग तो मित्रभाव सूचित नही करता।

अम्बरेश—सोचने की बात यह है कि आखिर फतह खाँ ने ऐसा किया क्यों?

मौकमसिह—राजकुमारी रूपनगर के पाने की इच्छा वाले प्रतिद्वन्द्वियो की प्रेरणा पर।

अम्बरेश—आप उनका प्रतिद्वन्द्वी किसे समझते हैं?

मौकमसिंह—जो वास्तव में उनके प्रतिद्वन्द्वी हैं। खैर, छोडिए इन बातो को, उनसे क्या सम्बन्ध ?

अम्बरेश—छोडिए क्यो ? नाम बतलाइए न उनके ?

मौकमसिंह—नाम का क्या होगा, श्रीमान् ! अब तो नाम सब को ज़ाहिर हैं।

अम्बरेश—मै और नवाब रुहेला, क्यो ? यही आशय है न आपका ?

मौकमसिंह—मैं तो ऐसा नही कहता श्रीमान् ! आप चाहे कुछ मान ले।

अम्बरेश—कहते तो नही, पर दिल मे विश्वास तो अवश्य ऐसा ही है। पर यह ध्यान रखना चाहिये कि हम दोनो मे से ऐसा कोई क्यों करेगा ? हमें उनसे कोई भय तो है नही ! न तो वे हमसे जनशक्ति में ही अधिक हैं और न शारीरिक बल में ?

मौकमसिंह—शारीरिक बल तथा पराक्रम में तो आप ही उन्हे अपने से अधिक मानते है। स्वयवर-युद्ध के लिए ही तो ऐसा किया गया है। और यह भी अपनी पराजय के भय के कारण। क्योकि भीरु पहले ही परास्त जो किए जा चुके हैं।

अम्बरेश—क्या आज आप अण्टा चढा के आये हैं, जो ऐसी बेसूद बातें कर रहे है। हमसे उनका द्वन्द्व कभी नही हुआ। साथ ही यह भी निश्चित समझिए कि हम उनसे द्वन्द्व में कभी घबराएगे भी नही।

मौकमसिंह—तभी जब आप और शेरशाह अफ़रीदी योद्धा बनकर गए थे। क्या इतने ही मे भूल गये ? वेश छिप सकता है, किन्तु सचाई तो नही छिप सकती ?

अम्बरेश—(कुछ झेपकर) यह आपका केवल अनुमान है। नही तो हम लोगो का वेश बदलने से क्या प्रयोजन था। आपको विश्वास करना चाहिये कि वास्तव मे वे सैनिक अफरीदी ही थे, हम नही।

मौकमसिंह—अच्छा, होगे ! इस बात को जाने दीजिये !! फिर

सही !!! अभी तो ईश्वर की कृपा से बूँदी-नरेश जीवित हैं।

भूरसिंह—बूँदी-नरेश की क्या ताव है, जो अम्बरेश का सामना करने का साहस भी कर सके। महाराज जगतसिंह का नाम सुनकर ही न काँप जाए तो बात ही क्या। आए न वे स्वयवर मे रूपनगर ?

मौकमसिंह—हाडा, युद्ध और कम्पन ! असम्भव !! हाडाओ मे अपार साहस होता है, ठाकुर साहब ! आप अपनी कहिये !! हम तो युद्ध मे हारते हुए भी कभी हिम्मत नही हारते। यदि वे घातक रूप से घायल न हो जाते, तो स्वयवर-युद्ध मे उनका सम्मिलित होना तो मानो अनिवार्य ही था।

भूरसिंह—आपने युद्ध से बचने का ढग खूब निकाल लिया है। अम्बरेश के बराबर का मन्सब मिल गया है न ! वीरता द्वारा तो अपने से प्रबल वीर के प्रति गाडी चलेगी नही। चलो यो ही कुछ दिन घसीट ले।

मौकमसिंह—आप सीमा से आगे बढे जा रहे हैं ठाकुर साहब, देखिये !

भूरसिंह—देखिये क्या ! आगे बढ रहे हैं तो बढेगे ही। हमारे विकास को रोक ही कौन सकता है ? ईर्ष्या होती है तो बूँदी महाराव को लाइये स्वयवर युद्ध में। ताकि दुनिया देख ले कि हाडा तलवार के धनी हैं या केवल बातो के।

मौकमसिंह—हाडा तो मैं भी हूँ और मेरे हाथ मे भी तलवार है, उधर आप स्वय भी एक वीर हैं। उठाइये न तलवार ! अभी यही निर्णय हो जायगा।

भूरसिंह—आइये ! यहाँ आप से डरता ही कौन है ? हम भी तो राजपूत हैं !

इसके पश्चात् तत्काल दोनो वीर अपनी-अपनी तलवारों को म्यान से बाहर खीचकर परस्पर युद्ध करने को तत्पर हो जाते हैं। महाराज उठकर

दोनो को पकडकर पृथक् करते है और दोनो के क्रोध को शान्त कराते हैं। दोनो यथावत् हो जाते है और फिर वार्ता-क्रम चालू हो जाता है।

अम्बरेश—इस प्रकार आप लोगो के लिये हाथ दिखाने का समय अभी नही आया है, स्त्रयवर युद्ध के पश्चात् आयेगा। हमारी प्रबल इच्छा तो यही है कि महाराव बूँदी स्वथवर मे अवश्य सम्मिलित हो, जिससे यह समस्या सुलझ जाय। रहा फतहखाँ के अपराध का प्रश्न, सो हम लोगो का पारस्परिक अविश्वास होने के कारण यह मामला सम्राट् के सम्मुख उपस्थित कर दिया जायगा।

भूरसिह—क्या चाम की भी कही चला करती है? मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि बूँदी-धनी हमारे प्रभु के सामने कभी आने का साहस ही नही कर सकते—न स्वयवर मे और न उसके आगे-पीछे।

मौकमसिह—वे स्वस्थ होते ही आयेगे। तुम्हारे महाराज चाहे साहस छोड दे पर वे कदापि नही हट सकते। इस बात की शर्त रही। रहा फतह खाँ के अपराध का मामला, सो उसे किसी भी न्यायालय में ले जाना नही पडेगा। श्रीमान् के विचार जानने की इच्छा थी, अब उसका हल हाडा तलवार स्वय ही निकाल लेगी।

भूरसिह—तो फिर शर्त रही।

मौकमसिह—क्यो नही, अवश्य।

अम्बरेश—क्या-क्या वस्तुयें है आप लोगो के पास अपनी-अपनी शर्त के प्रमाण मे।

भूरसिह—मेरा सब्जा घोडा, अन्नदाता!

मौकमसिह—मेरी यह तलवार, श्रीमान्!

अम्बरेश—किन्तु आपकी तलवार का मूल्य तो उस घोडे के मूल्य के बराबर नही। यदि महाराव हार गये या लडने न आये तो हम ही टोटे में रहे न!

मौकमसिह—हाडा क्षत्रिय है। आपके समान मुगलो के पास रहकर

व्यापारी नही बने। हाडा-तलवार का मूल्य घोडा तो क्या उसके स्वामी की समस्त सम्पत्ति भी नही है, श्रीमान् ! आप इस बात की चिन्ता न करें।

अम्बरेश—आप भी सीमा से परे जा चुके हैं, यदि कही करना उतना ही सरल होता, जितना कि कहना तो क्या-क्या न हो जाता ?

मौकमसिह—हा। करता अधिक है कहता बहुत कम है। हाथ कगन को आरसी क्या है ? स्वय देख ही लेगे, श्रीमान् !

अम्बरेश—खैर, आपकी तलवार ही हमारी धरोहर सही। पहले छत्रसाल जी का पौरुष देखेंगे और फिर देखेंगे आपका। यदि हाडा तलवार के अभिमानी इन्द्रगढ सरदार की, वचन के अनुसार वीरता प्रकट न हुई, तो यह तलवार भविष्य की आने वाले सन्तान के देखने के लिए प्रमाणस्वरूप प्रदर्शनी-गृह मे आमेर रक्खी जायगी। यह याद रखिये, राव साहब !

इस चुनौती के साथ प्रस्तुत वार्तालाप समाप्त हुआ।

ग्यारहवाँ परिच्छेद्

ज्येष्ठ मास की गर्मी के दिन है। रेगिस्तानी तप्त बालू पर बसा हुआ राजस्थान का उर्वरा भूमि से पृथक् सा हुआ होता रूपनगर नामक शहर, ससार के प्रत्येक पदार्थ के एकाकी रूप की घोषणा कर रहा है। अभी कठिनता से दिन के ग्यारह बजे का समय हुआ होगा, तो भी ऊपर और नीचे का सारा वातावरण काफी गर्म हो गया है। यात्रियो के पैर गर्मी मे तप्त रेत के कारण जलने लगे हैं और सिर लगा है भिन्नाने गर्म धूप और गर्म हवा के कारण। जिनके पैरो मे पादुकाये है वे भी तप्त बालू का लोहा मान गये हैं। यात्रियो ने यात्रा बन्द करके, घने वृक्षो की छाया मे दोपहरी भर विश्राम करने का निश्चय कर तदार्थ डेरा लगा दिया है। गर्मी के कारण नगर के अन्दर और बाहर, सडको और मार्गों के यातायात और चहल-पहल मे कमी आ गई है। प्राय लोग अपने-अपने घरो मे अथवा निवास-स्थानो पर, दोपहरी विरमाने के लिए चले गये है। कुछ धनाढ्य व्यक्तियो ने तो भोजन आदि से निवृत्त होकर सुन्दर पर्यंको पर शयन करना प्रारम्भ कर दिया है। कुछ ताश या शतरज से मन बहला कर अपने समय को काट रहे हैं। बिक्री का समय न होने के कारण दुकानदार अपनी दुकानो की किवाडो को आधी खुली हुई छोडकर बिक्री की ओर से निश्चित हो, अपनी गद्दियो पर बैठे-बैठे ही नीद के झोके ले रहे है। वे बेचारे लालच के मारे न सो ही सकते हैं और न जाग ही सकते हैं। अर्थ-

लालसा ने उनकी साँप-छछून्दर की सी दशा कर रखी है।

पाठक! आप अनुमान लगाते होगे कि ऐसी कठिन गर्मी मे शायद मनुष्य के क्या प्रकृति पर्यन्त के कार्य-कलाप भी बन्द हो गये होगे; किन्तु ऐसी बात नही है। इस समय भी शहर के बाहर एक चौरस भूमि में सहस्रो मनुष्य-मूर्त्तियाँ कार्य मे सलग्न दिखाई दे रही हैं। ऐसा मालूम होता है कि ये मनुष्य-मूर्त्तिया धातु या पत्थर के बने कलयन्त्र हैं जो गर्मी और सर्दी को अनुभव ही नही करते।

पाठकवर्ग! आश्चर्य का कोई कारण नही है। इस भारत देश मे जहाँ कि धन का विभाजन मानव-समाज मे उपयुक्त अथवा समुचित रीति से नही हुआ है, लाखो ऐसे निर्धन मनुष्य मिल जायँगे, जिन्होने अपने मानव-शरीर को आपत्तियाँ सह-सहकर इतना कठोर बना लिया है कि लोह-यन्त्रवत् धूप, शीत, वर्षा आदि अवरोधक शक्तियो की परवाह न करके अपने कार्य-क्षेत्र मे इस प्रकार बढे चले जा रहे हैं, मानो इन पर वे कोई प्रभाव ही उत्पन्न नही करते, फिर भी भाग्य की कुछ उन पर ऐसी मार है कि जहाँ निकम्मे और आलसी केवल खाते ही नही अपितु खाद्य-पदार्थ को बिगाडते भी हैं, वहाँ उन कर्मवीरो को दिन मे दो बार भोजन भी प्राप्त नही होता। अस्तु, रूपनगर के निकट, एक चौरस भूमि को समतल करके उसमे एक बडा समरागण अथवा अखाडा बनाया जा रहा है। उसी के निर्माण के लिए इस दोपहरी मे कार्य करने वाले मनुष्यो की मदद लगी हुई है। दोपहरी मे कार्य करने से तात्पर्य यह है कि राजाज्ञा के अनुसार, रातदिन कार्य करके, इस अखाडे के निर्माण का काम शीघ्रातिशीघ्र पूरा हो जायगा। क्योकि आज से राजकन्याओ के स्वयवर युद्ध के केवल पाँच दिन ही शेष रह गये हैं किन्तु तत्सम्बन्धी कार्य अभी बहुत कुछ शेष हैं। शायद दो-एक दिन के पश्चात आमन्त्रित युवक वीर तथा राजे-महाराजे अपने-अपने भाग्य की 'प्रबल-परीक्षा' के लिए आशार्थी बनकर आने आरम्भ हो जायँगे। इसलिए इस

उत्सव का प्रबन्ध वयोवृद्ध श्री हरीहर पारीक को सौंपा गया है। महाराज को पारीक जी मे विशेष रूप से श्रद्धा है और है उनके कार्यों पर पूर्ण विश्वास। श्री पारीक जी भी अपने कर्त्तव्य का सच्चे हृदय से प्रतिपादन किया करते है। वे राज-परिवार के अन्तरग तथा गम्भीर विषयो के परामर्श-दाता हैं। राज्य-सम्बन्धी ऐसी कोई गुप्त बात नही होगी, जिससे पारीक जी का विशेष परिचय न हो। कहने का तात्पर्य यह है कि श्री पारीक जी राज्य मे एक महत्वशील व्यक्ति है। पारीक जी ने अखाडे के निर्माण-कार्य को शीघ्र समाप्त कर देने के विचार मे मजदूरो की दोहरी टोलियाँ (Double Shift) कार्य मे जुटा रक्खी है जो रात-दिन काम करके उसे शीघ्र पूरा कर देना चाहती हैं।

यह हुई बाहर की व्यवस्था। अब अन्दर के प्रबन्ध पर भी ध्यान देना चाहिए। रनवास के अन्दर भी भाँति-भाँति के आमोद-प्रमोद की सामग्रियाँ प्रस्तुत की जा रही है। जिस प्रकार से उत्सवो के अवसर पर राजमहल, झाड-फानूस, बन्दनवार, धर्मसिद्धान्त (Mottos) रगबिरगी चित्रकारियाँ तथा भाँति-भाँति के प्रकाश, जलस्रोत और शीशो की नक्काशी अथवा पत्थरतराशी के कामो से सजाये जाया करते है, उसी प्रकार रूपनगर के राजमहल भी समस्त सम्भव प्रकार से सुसज्जित किये जा रहे हैं। नगर के प्रत्येक घर मे मगलाचार और बधावे हो रहे हैं। राजा और प्रजा के प्रस्तुत प्रसग से सम्बन्धित सभी स्त्री पुरुष प्रसन्न है और सभी सम्भव प्रकार के आमोद-प्रमोद में सलग्न हो रहे हैं। इस सारे हर्षपूर्ण वातावरण में एक हृदय ऐसा भी है जो समस्त आमोद-प्रमोद और चहल-पहल का केन्द्र होते हुए भी इसके विरुद्ध अत्यन्त दु खी है। यह परितप्त-हृदय राजकुमारी किरणमयी का है जो अपनी अट्टालिका पर एकान्त मे चिन्तामग्न बैठी है। उसकी चिंता और व्यथा का कारण यह है कि उसके चित-चोर, बून्दी-नरेश श्री छत्रसाल जी हाडा के नाहर-आखेट मे बुरी तरह घायल हो जाने के कारण, उनकी स्वयवर युद्ध मे सम्मिलित

होने की सम्भावना नही रही है जिसके कारण उसकी आशा एवं आकाक्षाओ का अँकुर अपनी वृद्धि एव विकास के साधन तथा क्षेत्र न देख, उत्पत्ति से पूर्व ही सकुचित होकर कुम्हलाया जा रहा है। उसका यह दृढ सकल्प है कि वह स्वयवर-सघर्ष के फलस्वरूप अन्य किसी व्यक्ति से विजित होकर भी, उसे वरण किये विना ही प्राण त्याग कर देगी। क्योकि उसने एक सच्ची क्षत्रिया होने के नाते मन, वचन और अन्त करण से बू दी-नरेश को ही अपना पति अगीकार कर लिया है। यदि विधाता ने उसे किसी दूसरे को सौपने का उपक्रम किया तो इस क्षत्रिया का पतिव्रत भग होने के कारण उसका प्राण-त्याग अवश्यम्भावी है। उसके अपने विचार से सकल्प में असफल होकर जीवन पर्यन्त उसके दुष्परिणाम को भोगते रहने की अपेक्षा पतन-सबन्धी प्रदर्शन से पूर्व ही जीवन की समाप्ति अधिक उत्तम है। वर्त्तमान परिस्थितियो मे व्रत रक्षण असंभव प्रतीत होता है। इसीलिए स्वयवर से पूर्व ही प्राण त्याग करना एकमात्र निश्चय तथा कर्तव्य सा बन गया है। यही कारण है कि किसी भी प्रकार का आमोद-प्रमोद उसको सुरुचिकर नही लग रहा। उसकी दशा ठीक उस शूली पर चढने वाले व्यक्ति के समान हो रही है जिसका कष्ट दर्शको की चहल-पहल तथा जनता के प्रदर्शन से और भी अधिक बढ जाया करता है। व्यथित हृदय होने के कारण स्वच्छ जल का सरोवर भी महा भयकर अग्निकुण्ड सा लग रहा है और उसमें स्नान करना मानो विशाल अग्नि की भयकर लपटो में पडकर परितप्त होना है। राजमहल का आनन्द उसे रौरव नर्क की घोर यत्रणा के तुल्य कटु तथा दु खदायी उद्भासित हो रहा है। जीवन से ऊब कर कभी वह अटारी पर चढ जाती है और कभी नीचे उतर आती है। हर्ष और शोक का, दिन-रात्रि के सदृश परिवर्तन का सिद्धान्त, अपनी दयनीय दशा को देखकर उसे थोथा सा जान पड रहा है।

संसार की रहस्यमय गति को समझने में असमर्थ होकर अर्द्धविक्षिप्त

की सी दशा मे वह अटारी मे बिछे हुये पलग पर पड रही और कुछ समय के लिए चेतना-विहीन हो गई। उसी अवस्था मे उससे मिलने के लिए उसकी अभिन्न हृदय-सखी राजबाला वहाँ आ पहुँची और उसे अचेत पाकर होश मे लाने का प्रयत्न करने लगी। चेतनता लाभ करके दुखित-हृदय किरण ने सखी को प्रसन्न-वदन देखकर बडा आश्चर्य अनुभव किया। इसके साथ-साथ रोष एव अरुचि के भावो ने भी उसे उसकी ओर से उदासीन बना दिया। कारण कि सखी की प्रसन्नता को उसने अपनी अवस्था अवगति पर उपहास मात्र ही समझा। उस समय उसकी यही इच्छा हुई, कि राजबाला उसे वहाँ अकेली छोडकर चली जाय तो अच्छा हो। पाठक ! इसमे आश्चर्य की कोई बात नही। मनुष्य की कुछ अवस्थाये ऐसी होती हैं, जिनमे वह एकान्तवास की इच्छा से परमप्रिय स्वजनो के दर्शन तथा सामीप्य मे भी अरुचि अनुभव किया करता है। राजकुमारी किरण भी उस समय इसी श्रेणी को प्राप्त होकर राजबाला को अपने पास से खिसकाने के लिए मु ह फुलाकर निम्न प्रकार से रूक्ष वार्तालाप करने लगी।

किरण—इस समय मुझे किसी का पास रहना अच्छा नही लगता, बहन ! क्या मुझे अकेली छोडने की कृपा करोगी ?

राजबाला—मेरे यहाँ आने पर अरुचि प्रकट न कीजिए, कुमारी ! मैं अपना या दूसरे व्यक्ति का समय खराब करने के लिए किसी के पास नही जाया करती।

किरण—तो फिर चक्करदार बाते न कर अपने मतलब की बात कहो न ?

राजबाला—जब मै अपने मतलब से आई ही नही, तो अपने मतलब की बात कैसे करूँ ? मै तो इस समय केवल मित्रो के मतलब से घूम रही हूँ।

किरण—यह क्या रहस्यमय बात करती हो जिसका कोई भी भाग समझ मे नही आता ।

राजबाला—मैने तो अभी कोई रहस्यमय बात की ही नही । यदि रहस्य की बात सुनने ही की इच्छा है तो वैसा ही प्रसग छेडा जाय ।

किरण—तो फिर मुझे यहाँ किस अभिप्राय से दुखी कर रही हो ?

राजबाला—दुख-सुख का दाता कर्म तथा भाग्य होता है, मनुष्य नही ।

किरण—भाग्य से ही तुम मेरे जले पर नमक छिडकने आई हो न ?

राजबाला—यह लो देखो तो, यह नमक है कि मरहम ?

इतना कहकर राजबाला ने अपनी चोली के अन्दर से एक लिफाफा निकाल कर राजकुमारी किरण के हाथ मे दे दिया । राजकुमारी किरण महाराव छत्रसाल की लिखत को देखकर तत्काल उस लिफाफे को खोल कर पढने लगी । उसमे लिखा था—

"सुभगे !

महत्वपूर्ण कार्यक्रम तथा विचित्र समस्याएँ सामने हैं । उनका सुलझाना और उनके विषय मे कर्तव्य निर्णय करना, उस समय तक, जब तक कि हितैषी मित्रो से उन पर विचार-विनिमय न कर लिया जाय, सुहितकर प्रतीत नही होता । इसी कारण-वश गम्भीर विषयो पर विचार-विमर्श करने के लिए गुप्त मिलन का आयोजन करके साधुवेष धारण कर तुम्हारे बाग मे डेरा लगाया है । यदि मिल कर नेत्रो को आनन्द प्रदान करे तो अति कृपा होगी ।

—छत्रसाल"

बूंदी-नरेश के आगमन का समाचार पाकर कुमारी किरणमयी का हृदय वास्तव मे हर्ष से खिल उठा । उसने अपनी सखी से अपने दुर्व्यवहार के लिए क्षमा मागी । आनन्द की अधिकता के कारण अपनी सखी की उपस्थिति का विचार न करके

पत्र को बार-बार अपने हृदय से लगाने लगी। इस हर्ष की अतिरेकता का एक विशेष कारण यह भी था कि उसके उस मस्तिष्क को, जो इन समस्याओ के हल सोचने मे स्वयमेव असमर्थ सिद्ध हो रहा था, अब कम से कम बूँदी-नरेश जैसे चतुर हितैषी स्वजन की प्रेरणा प्राप्त हो जायगी। उनकी सहायता और परामर्श के द्वारा अपने भविष्य का मार्ग निर्धारित कर वह अपना कार्यक्रम बनाने मे अवश्य सफल हो जायगी। कारण कि वर्तमान अवस्था मे अन्य किसी स्वजन के साथ विचार-विनिमय सफल सिद्ध नही हो सकता था।

इन्ही सभी बातो पर विचार करके अत्यन्त हर्ष के साथ वह तत्काल बाग जाने की तैयारी करने लगी। स्नान-ध्यान करके, शरीर पर तेल, फुलेल तथा सुगन्धित द्रव्यो का मर्दन कराया। इसके पश्चात् सुन्दर वस्त्राभूषण तथा अलकार धारण किये। फिर माता की आज्ञा प्राप्त करके, पालकी तैयार कराई और चार-पाच विश्वस्त सखियो के साथ उसमे बैठकर बाग को प्रस्थान कर दिया। बाग मे पहुँचकर चारो द्वारो पर पहरा देने के लिये चारो सखियो को नियुक्त कर राजबाला को साथ लेकर उसने बाग मे टहलना आरम्भ कर दिया।

बाग मे कही बूँदी-नरेश महाराव छत्रसाल जी को न देख उसे बडी चिन्ता हुई। एक वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति तो अवश्य बैठा है किन्तु वह तो बहुत साधारण सा मनुष्य जान पडता है। महाराज छत्रसाल के महान् व्यक्तित्व का उसमे सादृश्य कहाँ से आया। कहाँ राजा भोज और कहा कँगला तेली।

वह सोचने लगी कि शायद यह सामान्य वृद्ध सन्यासी कोई महाराज का सदेश-वाहक हो और उसे आगे भेजकर महाराव कही अन्यत्र ठहर गये हो। कारण कि इस व्यक्ति की आकृति ऐसी सामान्य है कि इसके बूँदी-नरेश होने का किसी को अनुमान हो ही नही सकता। सिवाय बूँदी-पति के और किसी व्यक्ति के सम्मुख जाना उसके लिये व्यवहार से

बाहर की बात थी, अतः वह वही ठिटक गई है। इसी समय राजबाला आकर उसका कन्धा पकडकर हिलाती हुई कहने लगी—

"आप यहाँ कैसे ठिठक रही है राजकुमारी! महाराव से क्या संकोच ?"

"मुझे किस के पास लेजा रही है ? यहाँ बूँदी-नरेश कहा है ?"

"वे उस वृक्ष के नीचे बूँदी-नरेश ही तो बैठे हैं, पहचानती नही ?"

"मेरे साथ ठिठोली करना उचित नही। वे बूँदी-नरेश है ?"

"नही मै ठिठोली नही करती। वस्तुत ये ही बून्दी-नरेश है। मुझे भी पहले-पहल पहचानने में ऐसा ही भ्रम हुआ था कि यह वृद्ध पुरुष भी कही वीर छत्रसाल हो सकते है ?"

"क्या मैंने उन्हे देखा नही है जो मुझे धोखा दे रही है ?"

"नही मैं झूठ नही कहती और न धोखा ही देती हूँ। ये वास्तव में बूँदी-नरेश छत्रसाल जी हैं। जैसे अर्जुन ने वृहन्नला का सफल रूप बनाने मे दक्षता दिखाई थी, उसी प्रकार की दक्षता आज बूँदी-पति ने वेश बदलने में दिखाई है।"

"यदि ऐसा है तो पहले इनसे मेरी अँगूठी माँग लाओ, मै वहाँ तब चलूँगी।"

'बहुत अच्छा' कह कर राजबाला सन्यासी के निकट गई और राजकुमारी की सारी आपत्ति कह सुनाई। और यह भी प्रकट किया कि मेरे कथन की सत्यता के निश्चय के लिये कुमारी ने अँगूठी देखनी चाही है।

संन्यासी ने यह सुनकर मुस्कराते हुए अँगूठी निकालकर राजबाला को दे दी, जिसे लेकर राजबाला राजकुमारी के निकट पहुँच गई। राजकुमारी को अँगूठी देखकर विश्वास हो गया और वह अपनी सखी को साथ लिये सन्यासी महोदय के निकट पहुँच गई। साक्षात्

होने पर प्रणाम के अनन्तर उसने भेट का थाल महात्मा के सम्मुख रख दिया।

उसे देखकर बूंदी-नरेश बडे सकोच में पड गये। कारण कि वे क्वारी कन्या के हाथ का भोजन नही किया करते थे और दान-दक्षिणा लेनी क्षत्रिय के लिये शास्त्रानुसार विर्वजित मानते थे। उनको सकुचित देखकर राजबाला ने कहा—

"महाराव! सेवा-सत्कार ग्रहण कीजिये न, सकोच क्यो कररहे हो?"

"लेने में इन्कार तो कुछ नही किन्तु उपवास के कारण यह व्यर्थ हो जायेगे। इनका यहा क्या उपयोग हो सकेगा?"

"उपवास की समाप्ति पर इसका उचित प्रयोग कर सकते हैं भगवन्! यह बिगडने वाले पदार्थ नही हैं।"

"यदि यही इच्छा है तो यहा रख दो। तुम्हारे आतिथ्य-सत्कार को ठुकराने की तो हिम्मत हो ही नही सकती।"

उसी समय राजकुमारी ने सन्यासी की दाईं भुजा पर उनका नाम खुदा हुआ 'बूंदी-नरेश श्री छत्रसाल' देख लिया। अब तो उसका समस्त सन्देह दूर हो गया और उसने अपना आचल खीचकर कुछ अधिक नीचा कर लिया।

राजबाला बडी चतुर तथा सयानी सखी होने के कारण उसके मनोभावों को ताड गई और पालकी तैयार कराने के बहाने उनको अकेला छोडकर वहाँ से खिसक गई। राजकुमारी उसके जाने के पश्चात् एकान्त मे एक पुरुष के निकट रहने पर बडी व्यग्रता अनुभव करने लगी। उसका हृदय भय, सकोच और लज्जा से धडकने लगा तथा शरीर पसीने से तरबतर यानी पानी-पानी हो गया। उसे ऐसा मालूम होने लगा मानो वह शर्म से पृथ्वी मे गडी जा रही है। आज तक किसी पुरुष के निकट एकान्त में ठहरने का अभ्यास न होने के कारण कुछ भयपूर्ण झिझक से उसका श्वास तेज चलने लगा और लगा दम अन्दर-

ही अन्दर घुटने•। उसने महाराज से विदा लेकर वहा से चले जाने का भी विचार किया, किन्तु विदा माँगना तो दूर रहा वह इतना भी प्रयास न कर सकी कि एक शब्द भी मुँह से निकाले। शरीर भी इतना •भारी प्रतीत होने लगा कि उसमे वहाँ से चले जाने की सामर्थ्य भी न रही। अत. वही ठहर कर वार्तालाप करने मे ही अपना लाभ देख, वह मूर्त्तिवत् निश्चल रूप से भूमि मे गडकर उसको कुरेदती रही और सोचती रही कोई ढग ऐसे प्रसग के प्रस्तुत करने के लिए जिससे वार्तालाप अवश्य भावी हो जाय। सन्यासी महोदय की भी यही दशा हुई। उन्हे भी स्त्री-सम्पर्क मे न रहने के कारण इस एकान्त मे स्त्री के समीप ठहरने मे बडी आत्मग्लानि अनुभव हुई। किन्तु जब कार्यवश बुला ही लिया है तो केवल न बोलने के कारण तो वह कार्य बिना सिद्ध किये बिगाडना नही चाहिये। यही सोचकर उन्होने पहल स्वरूप पारस्परिक वार्तालाप का विषय तथा प्रसग सोचकर बडे सुन्दर, शान्त एव मृदु स्वर मे निम्न प्रकार से उसका प्रकटीकरण आरम्भ किया —

"राजकुमारी, वर्तमान विपरीत परिस्थिति मे, जिससे जीवन का अस्तित्व सदिग्ध है, मैने यही उचित समझा कि एक बार गुप्त रूप से एकान्त मे मिल लूँ। यद्यपि यह क्रिया उपेक्षाजनक है तो भी विवश होकर इसे अपनाना पडा, इसी विचार से यह कष्ट दिया गया। अत. क्षमा प्रार्थना है।"

"क्षमा का नाम लेकर लज्जित न करे श्रीमान्! मैं जीवन-दुखिया स्वय यही चाहती थी।"

"जीवन से दुखी होने की आप को क्या आवश्यकता है? आप ससार का प्रकाश हैं। आपके सदृश सौन्दर्य-प्रतिमा अथवा नारी-जाति में कौस्तुभमणि को प्राप्त करने के लिए सहस्रो उत्तम से उत्तम तथा योग्य से योग्य व्यक्ति तन-मन-धन आदि सर्वस्व निछावर करने के लिए

तैयार हो जायँगे। चन्द्र की सर्वत्र चाहना होती है।"

"किन्तु इस क्षत्रिया-हृदय का तो यह दृढ सकल्प है कि प्राण त्याग देना स्वीकार है, किन्तु बून्दी-नरेश श्री छत्रसाल जी के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष को अपनाना स्वीकार नही। ऐसी दशा मे ये अपमान-जनक बातें···?" नेत्र सजल हो जाते हैं।

"किन्तु नाहराखेट मे स्वय आखेट हो जाने के कारण मैने इस विश्वास को सन्देह मे परिवर्तित कर दिया है। इस समय यहाँ मिलने का प्रधानतया कारण भी यही है कि मै तुम्हे अपनी त्याग-सम्बन्धी आंतरिक इच्छा से अवगत कर दूँ।"

"मिलन को तो मै विशेष अनुकम्पा समझती हूँ, श्रीमान्! किन्तु यह त्याग··· ।"

"अर्थात् मेरी प्रबल इच्छा यह है कि यदि स्वयवर के प्रतिफल स्वरूप आप किसी अन्य बडभागी की जीवन-सगिनी बन जायँ, तो इस अभागे को निस्सकोच रूप से भूलकर अपने नवनिर्मित जीवन मे प्रसन्न रह सके और मेरी तरफ की किसी बात की स्मृति को मस्तिष्क मे लाकर अपने हृदय को कष्ट न दे। प्रत्येक अवस्था मे आपकी प्रसन्नता ही मेरी प्रसन्नता है।"

(फिर अश्रु-वर्षा करती हुई भर्राए कण्ठ से) "यह मेरे ऊपर घोर अन्याय है श्रीमान्! क्या आप इस क्षत्रिय बाला के सत की परीक्षा ले रहे हैं? क्षत्रिय होकर यह नही जानते कि एक क्षत्रिय-वीराँगना का हृदय केवल एक ही व्यक्ति को ग्रहण करता है, दूसरे को नही, तदार्थ चाहे कोई देवता भी चेष्टाशील क्यो न हो जाय।"

"जानता सब कुछ हूँ राजकुमारी किन्तु इस विषम परिस्थिति में इस हठ को किसी प्रकार से किञ्चित मात्र भी लाभदायक नही पाता।"

"क्या मर्यादा की रक्षा कम लाभ है?"

'इतने बडे त्याग द्वारा यह मर्यादा की रक्षा ?"

"यदि इससे भी अधिक त्याग करना पडे तो भी परवाह नही, मेरी यह अटल प्रतिज्ञा है कि प्राण भले ही चले जायँ, किन्तु मेरा यह निश्चय नही बदला जायगा।"

"किन्तु मेरी इच्छा है कि आप सदृश अनुपम दिव्य पुष्प जीवन धारण करके चिर विकास को प्राप्त हो।"

"ऐसा तभी हो सकता है जब श्रीमान् स्वयवर-विजय कर दासी को प्राप्त कर ले। अन्यथा···।"

"अन्यथा आप अपना प्राण त्याग कर देगी। क्यो यही ना, और कुछ ?"

"हाँ निश्चय रूप से यही और यदि ऐसा निश्चय हो गया तो स्वयवर से पूर्व ही। उसके लिए श्रीमान् की तरफ से आज्ञा इसी समय प्राप्त करना चाहती हूँ।"

"यह कि मैं स्वयवर-सग्राम को विजय कर तुमको अवश्य प्राप्त कर लूँगा, क्यो ? किन्तु तुमको स्मरण रहे कि मेरी इस क्षतपूर्ण अस्वस्थता तथा दारुण रोग की दयनीय अवस्था मे ऐसा विश्वास दिलाना भी असत्य सिद्ध हो सकता है।"

"तब फिर प्राण-रक्षा नितान्त असम्भव है।"

"पर तुम्हारे प्राणो की रक्षा के कार्य को मैं परम आवश्यक समझता हूँ जिसके लिए स्वयवर-युद्ध में मनुष्य क्या इन्द्र तक से सग्राम करने को तैयार हूँ।"

"किन्तु ऐसी दशा मे तो दासी श्रीमान् को स्वयवर-युद्ध मे भाग लेने का भी परामर्श नही दे सकती। क्योकि क्षत-युक्त अवस्था में ऐसा प्रयास करना मानो मृत्यु को निमत्रण देना है।"

"प्रेम मृत्यु से कही अधिक महान् है, देवी !"

"तो मुझे शान्तिपूर्वक प्राण त्याग करने दीजिए न देव।"

"तुम्हे क्यो ? प्रेमी तो मै हूँ न तुम्हारा। तुम्हारे मुख-चन्द्र का चकोर, तुम्हारे रूप रूपी दीपक का पतगा और तुम्हारे पराग-पूर्ण पुष्प का दिव्य भ्रमर। तुम्हे खोकर मै इस ससार मे किस प्रकार जीवित रह सकूँगा।"

"क्या मेरे प्रेम पर कोई सन्देह है देव ! और आप के बिना यह दासी कैसे जीवित रह सकती है ?"

"बलिदान पूर्ण प्रेम पुरुष को ही उचित है। इस प्रकार का प्रेम पतगा किया करता है, दीपक नही, चकोर करता है, चन्द्र नही, भ्रमर करता है, पुष्प नही। पुष्प, चन्द्र और दीपक तो जीवित रहकर प्रेम को परितुष्ट करने के लिए ही बनाये है भगवान् ने। और भ्रमर, चकोर और पतग का कर्त्तव्य है उन पर प्राण देकर न्योछावर हो जाना।"

"मुझे यह उपहास अच्छा नही लगता श्रीमान् ! प्रेम दोतर्फा बलिदान चाहता है। यदि ऐसा नही तो प्रेम लँगडा है। कहा भी है—

आनन्द प्रेम में जभी, दो दिल हो बेकरार।
दोनो तरफ हो आग बराबर लगी हुई।"

"अच्छा तो लीजिए। यह 'प्रबल-परीक्षा' का समय है।" यह कहकर राजकुमारी ने अपनी साडी मे छिपी हुई कटार निकाल ली और अपने हृदय को उसका लक्ष्य बनाती हुई, ज्यो ही मारने को तैयार हुई कि झट से सन्यासी ने आगे बढकर कटार पकड उसे ऐसा करने से रोक लिया।

"इसकी तो इस समय कोई आवश्यकता नही ? ऐसा क्यो करने लगी, कुमारी ?"

"आवश्यकता क्यो नही, जब यह प्रकट करना हो कि—

अगारे है-छिपे हृदय में, सर्द राख का नाम नही।
जलना या गलना है इसको, और दूसरा काम नही।"

"अच्छा, अच्छा ! आप अपने खञ्जर को म्यान मे कीजिए। हम अपनी हार स्वीकार करते है।"

"बस, इतने ही निकले। इस जरा से प्रहार मात्र से हार स्वीकार।"

"हाँ, आप जीती रहे, हमे तो आपके द्वारा हार का प्रदान ही प्रिय है।"

"वह तो स्वयवर-युद्ध का उपहार है, किन्तु, यहा तो उसका और ही आकार-प्रकार है।"

"नाथ की जीत के लिए दासी की हार और हार के लिए स-सार निश्चित है।"

"यदि प्रेयसी की प्रसन्नता के लिए यह सम्भव एव सहार है तो तन-मन-धन और जन आदि सर्वस्व की बलि देकर यह सेवक उसके लिए भी तैयार है।"

"उस बलि से दोनो हार का उपहार प्राप्त कर जीते रह सकते हैं।"

"तो फिर ऐसी उत्तम योजना को शीघ्र प्रकट करके, हृदय की व्यग्रता को शान्त कीजिये न।"

"इसके अतिरिक्त दोनो की जीवन-रक्षा का मुझे तो और कोई उपाय नही सूझता। शायद कोई और होगा भी नही।"

"तो फिर उसे स्पष्ट रूप से प्रकट कीजिये, योही उत्सुकता बढाने से क्या लाभ ?"

"कैसे कहूँ ? कहते हुये सकोच होता है और कुछ झिझक-सी लगती है तथा आती है साथ ही लज्जा। हे भगवान् मृत्यु दे··।"

"यदि मुझे स्वजन नही समझती तो न कहो, कोई बात नही।"

"मै श्रीमान् को स्वजन नही समझती, तो·· फिर इस प्रकार का व्यंग्य···?" यह कहकर फिर राजकुमारी अश्रु-प्रवाहित करती है। सन्यासी महोदय भी विचलित होते हैं।

"नही, नही, मेरा स्वजन से यह तात्पर्य है कि हम दोनो मे किसी प्रकार का छिपाव नही होना चाहिये ।"

"अच्छा तो मुझे स्वयवर से पूर्व ही पृथ्वीराज और सयोगिता की भाति···"

"पृथ्वीराज जिस प्रकार स्वयवर से पूर्व ही सयोगिता को ले उडे, उसी प्रकार मै भी तुम्हे स्वयवर से पूर्व ले उडू । क्यो, यही तात्पर्य है न राजनन्दिनी का ?"

"हॉ, इसमे हानि ही क्या है ? अर्जुन-सुभद्रा, कृष्ण-रुक्मिणी पृथ्वीराज सयोगिता और · "

"ठीक है, किन्तु मै इस प्रकार का प्रयास करना उचित नही समझता ।"

"यदि यह प्रकार अनुचित है तो पहले पूर्वजो ने इस अनियमित मार्ग को क्यो अपनाया था ?"

"समाज के आचार-विचार और मान-मर्यादा मे समयानुसार परिवर्तन हुआ करते है । उस समय समाज मे बहुपत्नीवाद, नही-नही बहुपतिवाद तक प्रचलित था । किन्तु आज इन बातो का नाम लेना तक बुरा समझा जाता है ।"

"तो फिर इसका तात्पर्य क्या समझू ? श्रीमान् के हृदय-क्षेत्र मे दासी के प्रेम-पौधे का शुष्कीकरण या कुछ और ?"

"प्रेम की अगम्यता प्रकट करने के पश्चात् भी यह शुष्कीकरण कैसा ?"

"तो फिर जीवन-रक्षा किस प्रकार से करेंगे श्रीमान् ?"

"मनुष्य कुछ नही कर सकता । केवल भगवान् का भरोसा करके स्वयवर का फल देखने तक शान्ति रखनी चाहिये । यही मेरा परामर्श है । प्रत्येक व्यक्ति को सत्य, धर्म और पुरुषार्थ पर अवलम्बित होकर कार्य करना चाहिये और फल को छोडना चाहिये भाग्य या भगवान्

के ऊपर। इसके साथ ही जब तक किसी कार्य का परिणाम पूर्णरूप से प्रकट न हो जाय तब तक धैर्य और दृढता को खोकर क्रूरता के भावो को हृदय मे स्थान नही देना चाहिये। क्योकि यह कार्य वीरोचित नही है।"

"क्या, इस तत्वज्ञान के बल पर परित्राण होना सम्भव है ?"

"अवश्य ! निरावलम्ब के अवलम्ब भाग्य और भगवान् ही हुआ करते हैं। अर्थात् जब सब सम्भव यत्न निष्फल हो जाते हैं तो ईश्वराराधना ही फलदायक होती है। किन्तु उसके लिये होनी चाहिये हृदय मे पवित्रता और लग्न। जिन कार्यो के सम्पन्न करने मे बडी से बडी भौतिक शक्तियाँ भी असफल हो पाईं, उनको आध्यात्मिक-शक्ति ने सम्भावना के विरुद्ध भी क्षणमात्र मे ही ठीक कर डाला है। ऐसे उदाहरणों से इतिहास भरा पडा है।"

"तो श्रीमान् का आदेश मेरे लिये स्वयवर-युद्ध का फल देखने तक शात एव निश्चिन्त रहने का है।"

"हाँ, निस्सन्देह ! और ईश्वर ने चाहा और तुम्हारा प्रेम तथा सकल्प सत्य हुआ तो फल भी अवश्य अनुकूल ही होगा।"

"धन्य हैं देव ! मै अवश्य आपकी आज्ञा का पालन करूँगी।"

इसी समय राजबाला वहा आ उपस्थित हुई और कहने लगी—"कुमारी ! सायकाल का समय हो गया है। मन्दिर मे आरती हो रही है। अब घर लौट चलना चाहिये, नही तो माता जी चिन्तित होगी। पालकी को तैयार करा आई हूँ, अब केवल उसमे आपके बैठने की ही देर है।" इसके पश्चात् सन्यासी महोदय की ओर मुडकर बोली : "क्षमा करना भगवन् ! अब हम आपके शुभ आशीर्वाद सहित प्रस्थान की आज्ञा चाहेगी, क्योकि घर जाने मे देर हो रही है।"

संन्यासी ने मुस्कराकर उन्हे विदा किया और दोनो सखियाँ प्रसन्न-वदन हो, महाराज को प्रणाम कर, पालकी की तरफ को बढने लगी।

मार्ग मे किरणमयी ने, जो राजबाला के पीछे-पीछे जा रही है, बिना सखी को जताये कई बार मुड-मुडकर सन्यासी की ओर देखा है, बार-बार प्रणाम किया है और कृपा बनाये रखने के लिये मार्मिक सकेत किया है। सन्यासी जी ने भी प्रत्येक प्रयास का प्रत्युत्तर ठीक उसी की गति की पुनरावृत्ति करते हुये उसी की भाँति दिया है और उस समय तक उसे एकटक देखते रहे हैं, जब तक कि वह पालकी मे बैठकर चल नही दी और आँखो से ओझल नही हो गई।

पाने के विचार से स्त्री-पुरुषो की अच्छी खासी भीड लग गई है। शायद ही कही कोई रिक्त स्थान शेष बचा हो। समरागण चौतर्फा लोहे के तारो की बाड से घिरा हुआ है ताकि दर्शको मे से कोई वहाँ होकर अन्दर प्रवेश न कर सके। इस बाड के अन्दर की तरफ चारो ओर कुर्सियो की एक कतार है, जिस पर स्वयवर मे भाग लेने वाले आशार्थी (उम्मीदवार) शूरगण विराजमान हैं। उनमे बहुत से ऐसे महानुभाव है जो राजे-महाराजे, अमीर-उमरा, उच्च सेनाध्यक्ष तथा अन्य प्रकार से सामान्य सभा-मण्डलीय वीर योद्धा है और जो विशेष रूप से बल-पौरुष से युक्त होकर युद्ध-कार्य मे प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके है। इसके अतिरिक्त रूपनगर के वे सैनिक भी यत्र-तत्र नियुक्त है, जिनका कर्त्तव्य एक सम्भ्रान्त सामन्त सेनानी की अध्यक्षता मे हर प्रकार से आन्तरिक व्यवस्था को ठीक रखकर समरागण की रक्षा करना है। चार मनुष्यो के साथ, उच्च श्रेणी के एक परम अनुभवी वीर सामरिक को जयाजय की घोषणा करने के लिए नियत किया गया है। समरागण के चार द्वार हैं जिन पर सैनिको के कडे पहरे हैं। ये द्वार इतने चौडे हैं कि दस घुड-सवार उनमे होकर एक साथ बराबर-बराबर जा सकते हैं। चारो द्वारो के ऊपर चार सायबान बने हुये है, जिनमे स्त्री-दर्शको के बैठने के लिए जालियाँ और चिको से युक्त विशेष सुविधाजनक स्थान है। एक छज्जा भारत सम्राट् शाहजहाँ, उनकी बेगमो, शाहजादो और शाहजादियो के लिए सुरक्षित है और उसी प्रकार के सामने वाले एक दूसरे छज्जे पर रूपनगर के महाराज रूपसिह जी, राजकुमार विक्रमसिह, महारानी, राजकुमारी तथा अन्य निकट-सम्बन्धी जनो के लिये प्रतिष्ठित स्थान है। तारो की बाड के पीछे पैडियाँ इस प्रकार दक्षता के साथ बनाई गई हैं जिस प्रकार कि किसी सरकस के इतस्तत आन्तरिक कौतुक दर्शनार्थ, दर्शको के बैठने के लिए तख्तो की सीढी-नुमा बैञ्चे बनाई जाती है। इस स्थान से समरागण मे होने वाला प्रत्येक दृश्य भली प्रकार से देखा जा

सकता है और कोई दर्शक किसी अन्य दर्शक के दर्शन-कार्य मे रुकावट नही डाल सकता ।

उक्त कथनानुसार प्रातःकाल से दर्शक-जन आ-आकर पूर्व निश्चित एव व्यवस्थित स्थानो पर बैठने लगे हैं । ठीक दस बजे महाराजा रूप-नगर अपने पारिवारिक-जनो के साथ, जिनमें रानी, राजकुमार, राज-कुमारियाँ और महाराज से अन्यथा सम्बन्धित सज्जन सम्मिलित है, पधारे । उनके आते ही भाट, चारण एव बन्दी-जन विरद बखानने लगे। महाराज के आने के पूर्व ही दर्शक-मण्डली यथास्थान बैठकर दृश्य के प्रति उत्सुकता प्रकट करने लगी है । आशार्थी योद्धागण भी एक-दो को छोडकर सब अपने-अपने स्थानो पर आ गये है । महाराज रूपनगर के आने पर सब ने खडे होकर उनका स्वागत किया । महाराज के बैठने पर सब लोग बैठ गये । उसी समय छडीबरदारो के द्वारा 'बाअदब बामुलाहिजा होशियार' के रव के मध्य मे भारत-सम्राट् की विशाल मडली ने, उचित सम्मान के साथ सम्राट् शाहजहाँ को आगे करके, समरागण मे प्रवेश किया । रूपनगर-नरेश ने अपने स्थान से उतर कर, तथा कुछ दूर तक आगे जाकर, बडे विनम्र भाव से भारत-सम्राट् का समुचित स्वागत-सत्कार किया । महाराज ने सम्राट् को समरागण के प्रत्येक भाग मे घुमाकर समस्त व्यवस्था को समझाते हुये, प्रत्येक दर्शनीय सामग्री को दिखलाया । सम्राट् के इस परिभ्रमण के अन्तरकाल मे उनके स्वागतार्थ, समस्त उपस्थित जनता अदब के साथ, नतमस्तक हो, कर जोडे मूर्तिवत् खडी रही । प्रत्येक वस्तु के निरीक्षण के पश्चात् भारत-सम्राट् अपने पूर्व निश्चित भव्यासन पर आसीन हुये । उनके अपने आसन पर विराजमान हो जाने के अनन्तर रूपनगर-महाराज भी पूर्ववत् स्व-स्थान पर आकर बैठ गये और सम्बन्धित कर्मचारियो को स्वयवर की कार्य-वाही के श्रीगणेश करने का सकेत करने लगे । तत्काल समरागण के प्रधान अधिकारी ने आगे बढकर युद्धारम्भ से पूर्व महाराज की तरफ से,

दोनो कुमारियो अर्थात् किरणमयी और ज्योतिमयी के, स्वयवर युद्ध की घोषणा करते हुये, पूर्व-निश्चित नियमो का उपस्थित जनता के समक्ष भले प्रकार से स्पष्टीकरण किया। उसने कहा—'प्रथम महाराज रूपनगर की तरफ से दो-दो योद्धा घुडसवार समरागण मे प्रवेश करेगे। उनके साथ दो-दो योद्धा आशार्थी अश्वारोही आकर तलवारो से युद्ध करते जायेगे। प्रत्येक आशार्थी तथा अन्य योद्धा अपने प्रतिद्वन्द्वी को तलवार-युद्ध मे हराते हुए घोडे से गिराकर धराशायी करने की चेष्टा करेगा। किसी वीर का घायल होना या मर जाना उसकी पराजय का सूचक समझा जायगा। किसी भी कारणवश घोडे से गिरकर भूमि तक पहुँचा हुआ व्यक्ति भी तत्काल पराजित घोषित कर दिया जायगा और प्रस्तुत स्वयवर-युद्ध में भाग न ले सकेगा। पराजित व्यक्ति का स्थान, यदि वह पहलकर्ता या चुनौतीदाताओ मे है, तो विजेता ग्रहण कर लेगा और अन्य नवागत वीर आकर, तथा उसकी चुनौती को स्वीकार करके, उसके साथ युद्ध करने मे सलग्न हो जायेगा।

इस प्रकार अन्त मे दो ही विजयी वीर रह जाएँगे। फिर वे दो विजेता भी परस्पर उसी प्रकार युद्ध करेंगे, जिसके फलस्वरूप प्रथम और द्वितीय का निर्णय होगा। प्रथम विजयी वीर ज्येष्ठ राजकुमारी किरणमयी द्वारा वर्णीत होगा और द्वितीय कनिष्ठा राजकुमारी ज्योतिमयी के द्वारा। यदि प्रथम चुनौती-दाता अर्थात् महाराज के प्रतिनिधि ही अन्त मे विजयी हो गये तो उनको राजकुमारियो के वरण करने का अधिकार नही होगा, किन्तु रूपनगर महाराज स्वतन्त्रता पूर्वक जिसके साथ उनका विवाह करना चाहेगे उसी के साथ राजकुमारियो का कन्यादान कर सकेंगे, जिसमे किसी को कोई आपत्ति न होगी।"

इस घोषणा के पश्चात् अधिकारी के सकेत से महाराज के पूर्व-निश्चित दो प्रतिनिधि वीर समरॉगण मे अवतरित् हो गये और आशा-

थियो को युद्ध के द्वारा स्वभाग्य निर्णय की चुनौती देने लगे। तत्काल उस चुनौती को बिगुल द्वारा घोषित कर दिया गया। प्रत्युत्तर-स्वरूप दो अश्वारोही वीर तत्काल आकर सम्राट् और महाराज का अभिवादन करते हुए, प्रतिद्वन्द्वियो से भिड गये। इस प्रकार से इस स्वयवर-युद्ध का श्रीगणेश हुआ। प्रथम युद्ध मे एक चुनौती-दाता और एक आशार्थी परास्त हुए। दूसरे सघर्ष (पारी) मे महाराज का दूसरा चुनौती-दाता प्रतिनिधि भी परास्त हो गया। इसके पश्चात् बारी-बारी से योद्धागण लडकर समर-भूमि मे गिरते जाते और रण मे पराजित घोषित कर, जीवित या मृतक, समर से बाहर कर दिए जाते, जिनका स्थान नये आशार्थी तत्काल आकर ग्रहण कर लेते। एक के पश्चात् एक, इस प्रकार सैकडो ही वीर पराजित घोषित किये गये। बडी चहल-पहल के साथ इस प्रकार यह स्वयवर-सग्राम दोपहर तक चलता रहा। सैकडो मनचले आशार्थी वीर, अपनी विजय की आकाँक्षा को लेकर समरॉगण मे प्रविष्ट होते, किन्तु युद्ध मे हार मानकर तथा पराजित होकर क्षेत्र से बाहर कर दिये जाते। कभी-कभी कोई चुनौती लेने वाला वीर विजयी होकर दूसरी पारी मे स्वय चुनौती-दाता बन जाता था। दोपहर तक युद्ध होने के पश्चात् यह देखा गया कि आशार्थी मण्डली मे से इतने अधिक वीर पराजित होकर बाहर निकल गए हैं कि थोडी-सी कुर्सियो को छोडकर अधिकतर खाली ही दृष्टिगोचर होने लगी हैं। जब कोई वीर अपूर्व पराक्रम का कार्य करता अथवा किसी विशेष प्रकार का अद्भुत रण-कौशल दिखाता तो दर्शक-मण्डली ताली बजा-बजाकर, अपना प्रशसा-सूचक भाव उसके प्रति प्रकट करती थी। युद्ध का दृश्य अत्यन्त रोचक और गम्भीर बन गया था। दोपहर तक के युद्ध मे पॉच से अधिक वीर किसी योद्धा द्वारा परास्त नही हुए।

दोपहर के पश्चात् लगभग चार बजे श्याम-वर्ण के रण-वस्त्रो से

सुसज्जित, एक विशाल श्याम-वर्ण के अश्व पर सवार होकर एक वीर रण-क्षेत्र मे अवतरित हुआ और निर्भय रूप से खाली खडे हुये एक विजयी चुनौती-दाता योद्धा से समर मे भिड गया। देखते ही देखते उस श्याम-वर्ण अश्वारोही वीर ने अपने प्रतिपक्षी को धराशायी कर दिया। वह श्याम-वर्ण से पराजित होने वाला वीर अब तक के युद्ध मे सर्व-प्रथम घोषित किया जा चुका है और सब से अधिक वीरो को पराजित कर चुका है। जब ऐसे पराक्रमी योद्धा को श्यामवर्ण शूर ने हराया तो समस्त दर्शक-मण्डली की दृष्टि उस पर जा लगी और उसका हस्त-लाघव दर्शक-जनता मे सार्वजनिक सराहना का विषय बन गया। उसके पश्चात् जो भी वीर उसके सामने आता वही उसकी सिद्धहस्तता और रण-कौतुको से पराजित होकर भूमिशायी हो जाता। उसके इस प्रकार अपूर्व रण-कौशल तथा प्रचण्ड पराक्रम को देखकर समस्त उपस्थित वर्ग आश्चर्य-चकित होकर धन्य-धन्य पुकारने लगा। प्रत्येक व्यक्ति उस योद्धा का परिचय पाने के लिए उत्सुक होने लगा, किन्तु उसके आवरण के कारण अपने प्रयास मे असफल रहा। उसके मुख को एक काले रग का ऐसा मुख-पट ढके हुए है जिसके द्वारा यह पहचानना कठिन है कि यह परम साहसी और अद्वितीय योद्धा कौन है? उसने आध घटे के युद्ध मे पचास योद्धाओ को धराशायी कर उन पर विजय प्राप्त कर ली है। उसके साहस और शौर्य की सर्वत्र सराहना हो रही है।

पॉच बजे के लगभग एक दूसरा वीर भी श्वेत-वर्ण के अश्व पर चढ कर उसी रंग के वस्त्र धारण कर तथा अपने मुख को श्वेत मुख-पट से ढककर समरागण मे आया और दूसरी श्रेणी के एक विजयी चुनौती-दाता से युद्ध करने लगा। यह भी श्याम-वर्ण वीर की भॉति प्रतिपक्षी योद्धाओ को निरन्तर पराजित करता रहा। ये दोनो वीर यदि युद्ध मे तेजी न दिखाते तो पूर्व नियमानुसार यह सग्राम छ बजे तक चालू रहना चाहिये था, किन्तु साढे पॉच बजे के लगभग ही उक्त दोनो चुनौती-दाता वीरो को

छोडकर उनके साथ द्वन्द्व के लिए कोई आशार्थी योद्धा युद्धार्थ आता दिखाई नही दिया। आशार्थी-मण्डली की कुर्सियाँ भी सब की सब खाली हो गई हैं। निरन्तर प्रतीक्षा करने के पश्चात् बाहर से भी चुनौती स्वीकार करने के लिये किसी वीर की रण मे प्रवेश करने की आशा नही रही है। इस समय तक श्वेत अश्वारोही योद्धा ने पचास आशार्थी वीर धराशायी एव पराजित कर दिये हैं और श्याम अश्वारोही वीर ने एक सौ सात शूरवीर। स्वय रुहेले सरदार नवाब शेरशाह भी श्याम-वर्ण वीर के द्वारा घायल होकर इसी पराजित मण्डली में शामिल हो गये हैं। अब दस मिनट तक दोनो वीर योद्धा अल्प युद्ध-विराम की अवस्था मे अन्य आशार्थी वीरो को रण के लिये निरन्तर चुनौती देते रहे, किन्तु उनकी इस चुनौती के फलस्वरूप भी जब कोई वीर युद्ध करने को तत्पर नही हुआ तो अन्त मे सम्राट् और महाराज की आज्ञा से प्रधान अधिकारी ने इन्ही दोनो वीरो को अन्तिम विजयी घोषित कर, निर्णायक युद्ध के लिये उपयुक्त पात्र होने का फैसला दे दिया।

उक्त निश्चय के अनुसार ये दोनो प्रलयकारी वीर योद्धा इस निर्णायक सग्राम मे सलग्न हुये और भीमवेग से एक-दूसरे पर आक्रमण कर प्रत्येक प्रकार के रण-कौतुक प्रकट करने लगे। उक्त दोनो महा-पराक्रमी वीर योद्धा विजय की आकाक्षा से आधे घण्टे तक युद्ध मे रत रह, विचित्र-विचित्र प्रकार के रणकौशल तथा हाथ की फुर्ती दिखाकर दर्शको से प्रशसा तथा धन्यवाद प्राप्त करते रहे। इस निश्चय और विश्वास के साथ कि प्रस्तुत स्वयवर-युद्ध के विजेता यही दोनो वीर हैं और राजकुमारी किरणमयी एव ज्योतिमयी इन्ही के गले मे जयमाल डालेगी, जनता के हृदय मे उन दोनो ही वीरो के प्रति किञ्चित् सहानुभूति की सद्भावना उदित होने लगी है। रण-दृश्य की रहस्यमय प्रगति को देखकर किसी अदृश्य आपत्ति की आशका से, इधर दोनो राजकुमारियो के हृदय भी धडकने लग

गये है। भय-विह्वल, व्याकुल एव चिन्तित-मना वे दोनो इन्ही दोनो वीरो की जय-पराजय के परिणामानुसार अपने-अपने भाग्य के अच्छे-बुरे होने का अनुमान लगाने लगी हैं। बून्दी-नरेश की सहगामिनी होने की आशा के टूट जाने से, राजकुमारी किरणमयी की दशा अत्यन्त खराब होने लगी, कारण की रण-सलग्न उन दोनो वीरो मे कोई सा योद्धा रोग-ग्रस्त छत्रसाल के सदृश प्रतीत नही होता है। इन दोनो का दो प्रबल हाथियो के समान भयकर युद्ध यह प्रकट कर रहा है कि ये दोनो ही वीर पूर्णरूप से स्वस्थ और सर्वथा शक्ति-सम्पन्न है जबकि महाराज छत्रसाल निश्चित रूप से घायल, रुग्ण और रण के अयोग्य घोषित किये जा चुके हैं। सबसे ज्यादा परेशान उनको यही उत्सुकता कर रही है कि बल, वीर्य और पराक्रम में समान नाहरानुरूप ये दोनो अद्वितीय महाबली तथा वीर योद्धा कौन हैं? सहस्र-सहस्र कल्पना करने पर भी रणबाँकुरे उन दोनो प्रबल वीरो के विषय मे कोई अनुमान सत्य सिद्ध होता नही दीखता। इन्ही दोनो मे से एक वीर विजयी होने पर किरणमयी का विधान विनियमित वर घोषित होने वाला है, जो कि होगा उसके हृदय को असह्य, सर्वथा नितान्त अवाञ्छित होने के कारण। उधर उसके प्रेम-पात्र महाराव छत्रसाल, जिनको कि वह तन-मन एव प्राणादि सर्वस्व तक अर्पण करके पहले ही अपना प्रणयी बना चुकी है और जिनसे पृथक् होकर वह किसी दूसरे की पत्नी होने पर प्राण त्याग का सकल्प कर चुकी है, कही दूर अस्वस्थावस्था मे अपनी जीवन-निधि के खोये जाने के कारण विरह पीडा से परितप्त पलग पर पडे पश्चात्ताप कर रहे होगे। इस स्वयवर-युद्ध का निर्णय छत्रसाल तथा स्वयं उसके लिये कितना भयानक तथा प्राणघातक सिद्ध होगा—यही कल्पना-जगत् का अनुमानित विचार रह-रहकर उसके हृदय का मर्दन तथा मन्थन कर रहा है। वे ही महाराव छत्रसाल, जो उसे हृदय की देवी मान उसकी भगवती के सदृश मान्यता करते है, उसके वियोग मे

क्या स्वप्राणो को रक्षित रख सकेगे ? इस भ्रमात्मक स्थिति मे, यह सारी बाते सोचकर किरणमयी को अपना भाग्य पूर्ण रूप से अन्धकारमय प्रतीत होने लगा, क्योकि उसकी उज्ज्वलता उसे क्षमता और सम्भावना के वृत्त से बाहर की बात प्रतीत हुई । वह अपने मन मे उस भूल को अनुभव करके महा दुखी हुई जो उसने स्वयवर युद्ध का परिणाम पूर्ण-रूपेण घोषित होने पर्यन्त अपने प्राणो को सुरक्षित रखने के विषय मे महाराव छत्रसाल को वचन देकर की थी । अब वह फिर उसी सकल्प को अपने हृदय मे दोहरा रही है कि छत्रसाल जी के अतिरिक्त अन्य किसी सज्जन के पक्ष मे उसको वरण करने की आज्ञा की घोषणा होते ही वह विषपान करके अपने जीवन को समाप्त कर देगी ।

इसी प्रकार के विचारो में वह उस समय तक तल्लीन रही जब तक कि दर्शको मे बडे जोर से तालियाँ पीटनी आरम्भ नही कर दी । तालियो की आवाज ने उसे स्वप्न की सी अवस्था से चेतन करके उसका ध्यान वस्तुस्थिति की ओर आकर्षित किया । उसने स्वय अपने खुले हुए नेत्रो से देखा कि श्यामवर्ण अश्वारोही वीर के प्रबल खञ्जर प्रहार के वेग को सहन करने मे असमर्थ सिद्ध होकर श्वेत अश्वारोही वीर आहतावस्था मे भूमि पर पडा हुआ छटपटा रहा है । प्रधान अधिकारी ने श्यामवर्ण वीर को अन्तिम विजयी एव सर्वप्रथम रणजीत योद्धा निश्चय कर, बिगुल द्वारा स्वयवर रण की समाप्ति की घोषणा भी कर दी है । श्यामवर्ण और स्वेतवर्ण दोनो प्रथम और द्वितीय विजयी वीर ससम्मान महाराज रूपनगर के निकट लाये जा रहे हैं । महाराज भी खडे होकर मानपूर्वक उनका स्वागत-सत्कार कर रहे हैं । जनता यह जानने के लिए कि राजकुमारियो सदृश कन्यारत्नो को पाने वाले ये बढभागी कौन वीर पुरुष हैं, उनके खुले रूप से दर्शन करने के लिए छटपटाने लगी है । पूर्व इसके कि दोनो राजकन्यायें

उन दोनो प्रथम और द्वितीय स्वयवर युद्ध के विजेताओं के गले मे जय-माला पहनाये, सम्राज्ञी, सम्राट् और महाराज रूपनगर तीनो की इच्छा से, उनकी आज्ञानुसार दोनो विजेता वीरो के मुख-पट हटाये जा रहे हैं। जनता विजेताओ का परिचय पाने के लिए खडी-खडी उत्सुकता से पागल हो रही है।

जिस समय श्वेत-वर्ण योद्धा का आवरण हटाया गया तो यह देख कर उपस्थित जनता के आश्चर्य एव हर्ष का ठिकाना न रहा कि स्वयवर युद्ध के द्वितीय विजेता आमेर-नरेश श्री महाराज जगतसिंह जी बहादुर हैं। शीघ्र आमेर-नरेश श्री जगतसिंह जी का जय-जयकार होने लगा।

किन्तु जब प्रथम विजेता के मुख से मुखपट और रण-वस्त्र (ज़रह-बख्तर आदि) शरीर से पृथक् किये गये तो योगी सदृश भगवे रग के लबादे से लदा हुआ, पीतवर्ण, श्वेत दाढी, मूंछ और केशो से युक्त एक वृद्ध सन्यासी सा जान पडा। उसको देखकर न तो कोई यह पहचान सका कि वह कौन है और न उससे कोई किसी वीर के होने का अनुमान ही लगा सका। पता पूछने पर भी वह कुछ बोला-चाला नही, केवल एक आश्चर्य की सी शान्त मुद्रा से विक्षिप्तवत् कुछ देर इधर-उधर देखता और परिचय-विषयक सकेत से निषेध-सा करता हुआ, एक दम गिर कर निर्जीववत् मूर्च्छित हो गया। तत्काल अधिकारीगण उसके सभालने मे निमग्न हो गये। इसी समय इस भयकर एव आश्चर्यमय दृश्य को देखकर उसके आघात के सहन करने मे असमर्थ हो और हृदय से सतोष की इतिश्री कर स्वय राजकुमारी किरणमयी भी मर्माहत होकर गिर गई। महाराजा ने जयमाला पहनाने की क्रिया को कुछ समय के लिये स्थगित रखने की आज्ञा देकर राजकुमारियो को तत्काल महल मे भिजवा दिया। राजमहल मे मूर्च्छिता कुमारी किरण-मयी की पर्याप्त रूप से उपचार-चिकित्सा एव सेवा-शुश्रूषा होने लगी।

उसके कुछ होश मे आने पर राजबाला ने उसके कान के निकट मुँह लेजाकर कहा कि श्यामवर्ण विजेता वीर मुझे तो बाग वाले सन्यासी से मालूम पडते हैं। परन्तु राजकुमारी ने उसे सुनी-अनसुनी कर, न उस पर ध्यान ही दिया और न उस बात की कल्पना पर उसे कुछ विश्वास ही हुआ।

इधर शेरशाह और आमेर-नरेश का परामर्श पाकर भारत सम्राट ने विजेता सन्यासी को एक जादूगर मानकर उसके योद्धा रूप धारण करके किसी मन्त्र-तन्त्र द्वारा की गई नर-हत्या, वृद्ध योगी होकर भी राजकन्याओ के साथ विवाह की अनधिकार चेष्टा, छल, कपट और राजकुमारी के हृदय को आघात पहुँचाने के अनेक अपराधो मे उसे कठिन दण्ड देने के विचार से कारागार मे भिजवा दिया और यह घोषणा कराकर उसके दवादारू की व्यवस्था कर दी कि सन्यासी के पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर, अर्थात् जिस समय वह पूरी तरह सफाई देने के योग्य हो जाये, उसके ऊपर लगाए गये आरोपो का विचार रूपनगर की खुली अदालत मे किया जाये, तथा अदालत के द्वारा यदि कही उसका अपराध सिद्ध हो जाये तो फिर उसके लिए प्राण-दण्ड पर्यन्त कठोर से कठोर दण्ड की व्यवस्था की जाये।

तेरहवाँ परिच्छेद

रूपनगर के मित्रनिवास के एक अत्यन्त सुसज्जित शयन-कक्ष मे आमेर-नरेश महाराज जगतसिह चुपचाप चिन्तित अवस्था मे अपने पलग पर बैठे कुछ सोच रहे हैं। अभी सायकाल का भोजन समाप्त ही हुआ है। आमेर-नरेश के प्रमुख सामन्त भूरसिह फर्श पर बैठे महाराज के बदलते भावो का बिना कुछ कहे हुये अध्ययन कर रहे हैं। महाराज का चेहरा उतरा हुआ है, मानो वे उस पहलवान के समान हो जिसने किसी कुश्ती की तैयारी तो बहुत की हो, दैववशात फिर भी वह उसमें सफल न हो सका हो, उस विद्यार्थी की तरह हो, जिसने कठिन परिश्रम करके रात-दिन एक कर दिये हो, किन्तु इतने पर भी वह अपने परिश्रम मे असफल रहा हो, अथवा मरुभूमि के उस हरिण की भाँति हो, जिसके बहुत कुछ दौड-धूप करने के उपरान्त भी, उसे जल की एक बूँद तक प्राप्त न हुई हो।

वातावरण की नि शब्दता को भग करते हुये, अमेर-नरेश कुछ दुखित-स्वर मे कहने लगे "भूरसिह, मेरी सारी तपस्याएँ बेकार हो गई।"

"किन्तु सब से अधिक आश्चर्य की बात तो यह है प्रभो! कि यह फालतू जन्तु 'स्याहपोश' किस आसमान से उतर आया?" भूरसिह ने उसी स्वर मे अपने मनोभाव प्रकट किये।

"यही तो मैं भी सोचता हूँ कि यह व्यक्ति छत्रसाल तो है नही, कारण कि मैने उसकी भले प्रकार से परीक्षा कर ली है। तब यह और

कौन है ?" आमेर-नरेश ने बडी उत्सुकता के साथ अपने निश्चय का स्पष्टीकरण किया ।

"महाराव छत्रसाल तो निश्चित रूप से नही हैं । किन्तु फिर यह है कौन ? यह मेरे भी अनुमान मे नही आता ।" विवेचनात्मक कण्ठ से सामन्त ने व्यक्त किया ।

"कुछ भी हो, किरण का चित्र तो मेरे हृदय मे ऐसा जम कर बैठा है कि उसकी प्रेरणा, येनकेन-प्रकारेण उसकी प्राप्ति के पश्चात् ही दम लेने देगी ।" आमेर-नरेश ने जोरदार शब्दो मे, पूर्ण निश्चय के साथ कहा ।

"प्रभो ! क्या कोई ऐसा उपाय भी है जो वह सरलता से श्रीमान् को मिल जाय ?" सामन्त ने अपनी शुभाकॉक्षा प्रकट करते हुए प्रश्न किया ।

"कोशिश तो ऐसी ही कर रहा हूँ कि किरण और ज्योति दोनो ही मेरी हो जॉय, आगे दैव इच्छा ।" आमेर-नरेश ने नि श्वास छोडकर दु खी हृदय से उत्तर दिया ।

"प्रभो ! मैने तो लोगो को ऐसा कहते सुना है कि राजकुमारी किरणमयी श्रीमान् को न पाकर अत्यन्त दुखी हो रही है और प्राण तक देने पर तत्पर है ।" चापलूसी के स्वर मे सामन्त ने स्वामी को प्रसन्न करने के लिये कहा ।

"ऐसी दशा में तो मुझे उसकी प्राप्ति के लिये और भी तेजी के साथ प्रयत्न करना पडेगा ।" दृढता के साथ आमेर-नरेश बोले ।

इसी समय द्वारपाल ने कक्ष मे प्रवेश करके आमेर-नरेश को दडवत किया और इस प्रकार खडा हो गया मानो वह कुछ कहना चाहता है, पर कहने का साहस नही कर पा रहा है । आमेर-नरेश ने दडवत का उत्तर देते हुए पूछा, "कहो क्या बात है द्वारपाल ?"

"महाराज ! मौकमसिह नाम के एक बूँदी के सामन्त श्रीमान् के

दर्शन करने के लिये आये है।" नतमस्तक हो द्वारपाल ने उत्तर दिया।

"भूरसिंह जी! सम्मानपूर्वक ले आओ उन्हे। शायद हाडा सरदार अपनी शर्त और तलवार का निर्णय करने आये हैं। अच्छा ठीक है।" आमेर-नरेश ने अनुमान लगाकर कहा।

महाराज की आज्ञानुसार भूरसिह अन्यमनस्क मन से द्वारपाल के साथ बाहर गया और शीघ्र अपने साथ इन्द्रगढाधिपति को लेकर आ गया। आते के साथ ही इन्द्रगढ-नरेश मौकमसिह जी ने महाराज को प्रणाम किया और आमेर-नरेश ने खडे होकर उनका स्वागत किया। इसके पश्चात् दोनो मे निम्न प्रकार से बातचीत होने लगी—

"आज बहुत दिन के पश्चात हाडा सरदार पधारे है?"

"महाराज की सेवा-शुश्रूषा मे निमग्न रहने के कारण इसके पूर्व दर्शन नही कर सका। अब महाराज को ज्योति-प्राप्ति की बधाई देने आया हूँ।"

"धन्यवाद! बडी कृपा की आपने, आइये, विराजिये"— कहकर सामने पडी कुर्सी की ओर सकेत किया। मौकमसिंह उस पर बैठ गये।

"तो अब तो सम्भवत महाराज का घाव कुछ-कुछ भर चला होगा।"

"नही, नही! घाव तो और अधिक भयकर हो गया है।"

"यह सुनकर तो हृदय को बडी वेदना हो रही है, रावसाहब!"

"दैवेच्छा। क्या किया जा सकता है? उपाय तो अच्छे होने के बहुत-से हो रहे हैं।"

इसी समय भूरसिह ने कुछ अकड के साथ कहा, "किरण के न मिलने से तो घाव बढता ही, घटता कैसे? घाव ठीक कराने के लिए तो उन्हे युद्ध मे आना चाहिये था।"

"तो शायद आप उन्हे पराजित ही कर देते, क्यो?" उसी प्रकार गर्ज कर मौकमसिंह बोले।

"पराजय के भय से ही तो वे युद्ध में नही आये।" कहकर भूरसिंह ने मुँह बनाया।

"आये या नही आये, इससे क्या ? हाँ, महाराज ! वह हाडा की तलवार वापस कीजिये।" मौकमसिह ने फिर आमेर-नरेश को सम्बोधन करके कहा।

"नही प्रभो ! इन्द्रगढराव जी तो शर्त हारने पर मृत्यु के अधिकारी है, तब तलवार वापस करने का प्रश्न कैसा ?" भूरसिह ने निर्भय होकर उपहास के ढंग से कहा।

"ऐसा अन्याय क्यो, महाराज ?" मौकमसिह ने प्रश्न किया।

"क्योकि महाराव छत्रसाल जी हमारे मुकाबले के लिये तो न आये न ?" आमेर-नरेश ने कहा।

"यह कैसा न्याय है, महाराज ! आखिर आप तो किरण की प्राप्ति के अधिकारी नही हुये।" मौकमसिह ने कहा।

"कौन अधिकारी है, इसका निर्णय आपके हाथ मे नही है, राव-साहब !" आमेर-नरेश झल्लाकर बोले।

"निर्णय किसी के हाथ मे हो, मगर आप स्वयवर-युद्ध मे हार तो गये न ?"

"कौन कहता है कि मै हार गया ? जादू-टोने वाले योगियो के द्वारा हराया जाना वीरो की हार नही कही जा सकती। वह मेरा प्रतिद्वन्द्वी तो एक जादूगर है।"

"क्या प्रमाण है आपके पास कि वह एक जादूगर है। मैं कहता हूँ कि आपने हाडा-तलवार से हार खाई है।" मौकमसिंह गर्म होकर बोले।

"कायर और क्लीव हाडा, संग्राम मे मुँह छिपाकर अब मत्र-तत्र जानने वाले जादूगरो को अपनाकर किरणमयी को पाने आये हैं क्या ? अब आप लोगो के भासे में दुनिया नही आ सकती।" भूरसिंह ने अकड कर कहा।

"मुगलो के टुकडो पर बहादुर बनने वाले वीर हमने कायर और क्लीव हाडाओ की तलवार से ही हार खाते देखे हैं।" मौकमसिंह गर्ज कर बोले।

"हाडाओ ने कब और किसको हराया ?" आमेर-नरेश ने रोष में भरकर पूछा।

"बूंदी-नरेश छत्रसाल ने स्वयंवर-युद्ध मे आमेर-नरेश जगतसिंह जी को।" मौकमसिंह ने उत्तर दिया।

"असम्भव ! असम्भव !!"

"वह भी सम्भव और यह भी सम्भव। नही, नही, ध्रुव सत्य और यथार्थ।" कहकर फतह खाँ मेव का कटा हुआ सिर महाराज के सामने रख दिया।

"ओह, हत्या ! वध !! अपराध !!! भूरसिंह, रावजी को पकड लो।"

आज्ञा पाते ही भूरसिंह उन्ही की शर्त वाली तलवार को उठाकर सामने आ गये।

"ठाकुर साहब ! यदि मेरे निकट आये तो अच्छा न होगा। अभी मेरे पास कोटे की कटार मौजूद है। लीजिये ! यह निकाल ली मैंने। इसके हाथ मे रहते हुए मुझे कोई पकड नही सकता।" मौकमसिंह ने गर्जना की।

भूरसिंह ने हाडा सरदार की बात पर ध्यान न दे उसे पकडने का यत्न किया। हाडा सरदार ने कटार सीधी कर दी। दोनो वीरो ने एक-दूसरे पर वार किये। भूरसिंह का वार खाली गया। भूरसिंह के हाथ मे कटार लग गई। कटार फैंक कर उसी समय भूरसिंह का तलवार वाला हाथ पकडकर हाडा सरदार ने बडी तेज़ी से तलवार छीनकर अपने अधिकार मे कर ली। हाथ में कटार लगने से घाव हो गया और उससे रक्त प्रवाहित होने लगा। भूरसिंह चीख मारकर भूमि पर बैठ गया और वह बेहोश

हो गया। मौकमसिंह तलवार लेकर धीरे-धीरे वहाँ से चल दिये। महाराज जगतसिंह ने अपने सामन्त को घायल और अपराधी को खिसकता देखकर जोर से पुकारा 'पकडो, पकडो, अपराधी को मत जाने दो।' महाराज के शोर मचाने पर रूपनगर और आमेर के सैनिको ने घटनास्थल पर पहुँचकर मौकमसिह को बन्दी बना लिया। इसी समय नगर मे तत्काल यह अपवाद फैल गया कि बूँदी के किसी सामन्त ने आमेर-नरेश पर घातक आक्रमण किया है जिससे महाराज बाल-बाल बचे है। रूपनगर-नरेश इस समाचार को सुनते ही घटनास्थल पर जा पहुँचे। यह देखकर तो सन्तोष हुआ कि महाराज जगतसिह जी सकुशल हैं, केवल ईशरदा सरदार भूरसिंह के थोडी चोट लगी है, किन्तु जब इन्द्रगढ रावसाहब के घातक होने और उनके बन्दी बनाने की खबर मिली तो उनके होश बिगड गये। राव जी का रूपनगर मे अपमान उनके लिये मगल-सूचक नही था। उन्होने पारीक जी से परामर्श लेकर आमेर-नरेश को भी अपनी स्थिति समझाई और भूरसिंह, बन्दी हाडा राव साहब और आमेर-नरेश को साथ लेकर सम्राट् के शिविर की ओर चल पडे। सम्राट् के निकट पहुँचकर उन्होने हाडा सरदार और ईशरदा के झगडे का हाल शाहजहाँ के सामने उपस्थित किया। शाहजहाँ ने सारे मामले को सुना और समझकर बन्दी से कहा—

"आप मुल्जिम हैं, हाडा सरदार।"

"नही, सम्राट्! मै पूर्णतया निर्दोष हूँ।"

"क्यो? क्या आपने भूरसिह ठाकुर को कटार मारकर घायल नही किया? बेगुनाह फतह खाँ को कत्ल नही किया? क्या महाराज आमेर के साथ झगडा नही किया?"

"सारी बातें ठीक हैं सम्राट्! बूँदी-नरेश छत्रसाल जी को छिपकर तीर मारने वाला फतह खाँ दण्ड का अधिकारी था, 'जिसे बूँदी की अदालत ने प्राण-दण्ड दिया। मैने महाराज को उसका सिर दिखाकर

उसके दण्ड की सूचना मात्र ही तो दी है। भूरसिंह मुझे रोक कर फतह खाँ का बदला लेने के लिये मुझसे द्वन्द्व करने लगे। उनका वार खाली गया। मेरी कटार उनके लग गई। महाराज से मैने जिस सयम से वार्तालाप किया उसमे द्वेष का नाम भी न था।"

"लेकिन आप महाराज के आरामगाह मे रात के वक्त गये ही क्यो?"

"अपनी तलवार लेने के लिये गया था, सम्राट्!"

"कैसी तलवार लेने के लिये, सामन्त!"

"महाराज से पूछिये। एक दिन भूरसिह की और मेरी शर्त हुई थी। स्वय महाराज साक्षी हैं। मेरी तलवार और भूरसिह का सब्जा घोडा शर्त पर रखे गये।"

इस पर सम्राट् को अपनी तरफ प्रश्नसूचक दृष्टि से देखते हुये पाकर आमेर-नरेश महाराज जगतसिह जी ने मार्ग मे मिलने, फतह खाँ को माँगने तथा स्वयवर-युद्ध मे विजय-सम्बन्धी शर्त भूरसिह के साथ करने के उपलक्ष मे ईशरदा सरदार के घोडा और इन्द्रगढराव जी के तलवार दाव पर लगाने का विवरण दिया। महाराव छत्रसाल तदनुसार स्वयवर मे शामिल ही नही हुये है—यह भी आरोप लगाया।

समस्त वृत्तान्त के सुनने के पश्चात सम्राट् शाहजहाँ मौकमसिंह की तरफ मुडकर निम्न प्रकार से वार्तालाप करने लगे—

"आप फिर भी कुसूरवार हैं रावसाहब! तलवार वापस लेने के हकदार नही, बल्कि सजा के हकदार हैं।"

"ऐसा क्योकर, सम्राट्?"

"क्योकि जग मे महाराव छत्रसाल जी शामिल नही हुये।"

"अच्छा फिर?"

"एक जादूगर फकीर ने जादू करके १०७ बाके जगजू जवानो को फना किया है। राजकुमारी को हथियाने की साजिश और उसका दिल तोडने की कार्यवाही की। लिहाजा उस फकीर को सजा दी जायगी।"

"सजा, सम्राट् ?"

"और नही तो क्या ?" इस सल्तनत मे महाराव छत्रसाल, महाराज जगतसिह और नवाब शेरशाह के बराबर जवाँमर्द कोई है ही नही।

"तो इससे क्या हुआ, सम्राट ? महाराज जगतसिह तो किरण के अधिकारी नही।"

"क्यो नही ? शाहजादी और राजकुमारियाँ, फकीर, जादूगर और पत्तेमारो को नही ब्याही जाया करती।"

"जी, सम्राट् !"

"इसलिए फकीर की पहले नम्बर की फतह को हम मजूर नही करते हैं। ऐसी सूरत मे महाराज जगतसिह का पहला नम्बर और शेरशाह का दूसरा रहा।"

"यह घोर अन्याय है, सम्राट् ! अगम्य अन्याय !!"

"नही, नही बिल्कुल इन्साफ है। इन्साफपसन्द कायदेआजम शाहन्शाह जहागीर का फरजन्द शाहजहाँ इन छोटी सी बातो पर कही बेइन्साफी कर सकता है, सरदार ?"

"किन्तु इस मामले मे न्याय-मूर्ति सम्राट् ने न्याय कहाँ किया ?"

"क्यो नही किया ? शर्त के माफिक महाराव छत्रसाल जी लडने नही आये। इस पर आप शर्त खो बैठे। फिर भी आप फिजूल झगडा करने आमेर महाराज के आरामगाह पर जा पहुँचे। कहिये तब आपको सजा से कौन सा इन्साफ बचा सकता है ?"

"अच्छा ! कौन कहता है ?"

"हम कहते हैं ! बोलो ?"

"ऊँ हूँ।"

"ऊँ हू क्या, आप बोलते क्यो नही हैं ?"

"पूर्व इसके कि मैं आगे कुछ कहूँ, न्यायमूर्ति सम्राट् ! मै उस जादूगर

फकीर को श्रीमान् के समक्ष देखना चाहता हूँ।"

"सिपहसालार शुजाअत खा ! कैदी जादूगर को हमारे रूबरू दरबार मे हाजिर करो।"

सम्राट् का आदेश पाकर सिपहसालार शुजाअत खॉ तत्काल वहाँ कुछ सैनिको को लेकर बन्दीगृह के लिए प्रस्तुत हुए और उसी समय बन्दी जादूगर को सैनिक नियन्त्रण मे लेकर दरबार मे आ उपस्थित हो गये। सैनिको ने सम्राट् को कोरनिश की। जटाजूट बन्दी सन्यासी ने हाथ उठा कर सम्राट् को आशीर्वाद दिया। सम्राट् ने भी सबके प्रणाम का यथोचित उत्तर दिया। जटाजूट सन्यासी को दरबार मे देखकर राव मौकमसिंह उछल पडे और प्रणाम करके जोश के साथ पुकारने लगे—"हाडा वशावतस महाराव छत्रसाल की जय !"

शाहजहाँ—यह बौखलाहट कैसी रावजी ! यहाँ पर महाराव छत्रसाल जी भी कही है, नही तो फिर आप ताजीम किस को दे रहे है ? यह तो फकत एक फकीर है।

मौकमसिंह—बून्दी-नरेश महाराव छत्रसाल जी यही सम्राट् के दरबार में हैं।

शाहजहाँ—मालूम पडता है आपका दिमाग कुछ खराब हो गया है, रावजी। दरबार में सिवाय इस जादूगर के जो न बोलता-चालता है और न कुछ खाता-पीता है, और कोई है ही नही। इसके अलावा इस शख्स का बून्दी महाराव का सा हुलिया ही नही है। फिर तुम हाडा नरेश किसे पुकार कर ताजीम दे रहे हो ?

मौकमसिह—इन्ही महात्मा जी को, सम्राट् !

शाहजहाँ—इस तीन दिन से फाका करने वाले फकीर से बून्दी महाराव का ताल्लुक ?

मौकमसिंह—तीन दिन का फाका ही क्यो, तेईस दिन का सम्राट् !

शाहजहा—खैर, तेईस ही दिन का सही। इसके जादू को तो हम भी तसलीम करते हैं। जब यह एक सौ साल योद्धाओ को मार सकता है तो तेईस दिन का फाका भी कर सकता है।

मौकमसिह—मगर इनका तमाशा देखिये सम्राट्।

शाहजहाँ—कैसा तमाशा ? तमाशा तो इसका उसी दिन देख लिया, अब मतलब की बाते करो।

मौकमसिह—इनका यह भगवा लबादा उतरवाइये सम्राट्। सारा रहस्य अभी खुलता है।

शाहजहाँ—अच्छा फकीर, अपना लबादा उतार दो।

इसके पश्चात ज्यो ही फकीर ने भगवा लबादा उतारा तो सन्यासी का शरीर बिलकुल महाराव छत्रसाल जैसा जान पडा।। वही भुजा पर गुदा हुआ था 'बूँदी नरेश महाराव छत्रसाल' और वही बाई जाँघ के घाव पर पट्टी। अभी तक सम्राट शाहजहाँ तथा अन्य दरबारीगण उनके शरीर को देखकर पहचानने की कोशिश ही कर रहे थे कि मौकम-सिह ने जटा की एक डोरी तोड दी। अब तो दाढी, मूँछ और बनावटी केश दूर जा पडे। एक रबड की बारीक झिल्ली, जो मुँह पर चढी हुई थी, वह भी उतर गई और स्पष्ट रूप से महाराव छत्रसाल जी का चेहरा सब को दिखाई देने लगा। शाहजहाँ और महाराज रूपनगर, बूँदी-नरेश को देखकर हर्ष से उछल पडे। चिको के अन्दर बैठी सम्राज्ञी मुम्ताज तथा अन्य बेगमे और शाहजादियाँ भी बूँदी-महाराव का यह तमाशा देखकर खिलखिलाकर हँस पडी। इस समय दरबार मे सब के हृदय मे हर्ष छा गया, किन्तु यदि किसी को आन्तरिक वेदना हुई तो वह महाराज जगतसिह और शेरशाह को, जिनके खिले हुए चेहरे इस दृश्य को देखकर ही बिलकुल मुरझा गये और पेट मे रई-सी चलने लगी। फिर भी वे ऊपर से प्रसन्नता का अभिनय करते रहे।

"आखिर आप ने यह सब अजीब तमाशा क्यो बनाया, महाराव ?" शाहजहाँ ने हँसकर पूछा ।

"केवल राजपरिवार के मनोरजन के लिये सम्राट् ।" बूँदी-नरेश ने उसी स्वर मे उत्तर दिया ।

"हमने तो इन मुसाहिबो की सलाह से आपको जादूगर ही तसव्वुर कर लिया था और तैयार हो गये थे सजा देने के लिये ।" शाहजहाँ ने प्रकट किया ।

"सब ठीक ही है, सम्राट् !" बूँदी-नरेश ने मुस्कराकर कहा ।

"नही, नही, मुसाहिबान ! आइन्दा ऐसी गलती कभी न हो ।" शाहजहाँ ने कहा ।

"जहाँपनाह ! इसमे मुसाहिबो का कोई कुसूर नही है । महाराव ने रूप ही ऐसा बनाया कि जिसका कयास ही न हो । इसके अलावा इस बुरी तरह घायल हो जाने पर इस बहादुरी से इनका लडना ही कब मुमकिन था ?"

"खैर, मुझे बडी प्रसन्नता है कि मै अपने बडे भाई से ही युद्ध मे हारा ।" अपनी झेंप और पराजय की कालिमा धोते हुए महाराज जगतसिंह कहने लगे ।

"और बन्दा भी तो फकत जनाब ही से हारा है । क्यो बडे भाई, ठीक है न ?" शेरशाह ने स्वर मे स्वर मिलाया ।

"बन्धुवर ! चिन्ता नही, मै इस विजय को कोई महत्व नही देता ।" छत्रसाल ने उत्तर दिया ।

"मगर हम आपकी काबिले तारीफ बहादुरी, हिम्मत और जवाँमर्दी पर आपको दिल से दाद देते हैं ।" शाहजहा पुलकित होकर बोले ।

"सम्राट् की इस कृपादृष्टि एव अनुग्रह के लिये सेवक अत्यन्त कृतज्ञ है ।" बूँदी-नरेश छत्रसाल ने विनम्र-भाव से कहा ।

"इन्द्रगढ-राव मौकमसिंह जी ! आपको अपनी तलवार वापस लेने

का पूरा हक है। आप शर्त जीत गये। हम हाडा-तलवार को काबिले-तारीफ समझते हैं और आपकी बहादुरी और होशियारी पर खुश होकर आपके ठिकाने मे बारह घोडे की जागीर अपने खालसा इलाके से निकाल कर शामिल करते है। अब तो तुमको हमारी तरफ से इन्साफ की शिकायत नही होनी चाहिये।" शाहजहाँ ने कुछ गम्भीर होकर कहा।

"धन्य-धन्य, न्यायमूर्ति सम्राट्! सेवक इस कृपा का अत्याभारी है।"

इसके पश्चात् सम्राट् शाहजहाँ ने एक मखमली म्यान और सुवर्ण की मूठ की तलवार, बारह घोडे की जागीर का पट्टा और खिलअत मौकमसिह को प्रदान की तथा महाराज जगतसिह को आदेश दिया कि भूरसिह का सब्जा घोडा भी शर्त जीतने के फलस्वरूप इन्द्रगढराव साहब को फौरन दिलाया जाय।

इसके पश्चात् सम्राट् शाहजहाँ ने महाराव छत्रसाल को भी एक मखमली म्यान तथा जवाहरात जटित सुवर्ण की मूठ की उत्तम तलवार, खिलअत और दो शीघ्रगामी बहुमूल्य घोडे स्वयवर-युद्ध मे विजयी होने के फलस्वरूप अपनी तरफ से पुरस्कार मे दिये।

इसी समय रूपनगर-नरेश के पास राजमहल से समाचार आया कि उपरोक्त घटनाओ के सुनने के कारण राजकुमारी किरणमयी की अवस्था एक विक्षिप्त व्यक्ति के समान हो, भयकर रूप धारण करती जा रही है। गत तीन दिन से उसने कुछ खाया-पीया नही है। चन्द मिनट के लिए होश मे आकर गहरी आह खीचती है और फिर बेहोश हो जाती है। फिर उसी बेहोशी की दशा मे पलग पर पडी न जाने क्या-क्या अनर्गल बातें बडबडाया करती है। इस समय तो उसकी तबियत और भी ज्यादा खराब हो रही है। रह-रहकर हिचकियाँ आ रही हैं। दिल धडक रहा है। आँखे लाल-लाल मशाल के मानिन्द जल रही हैं। कभी-कभी उनसे आँसुओ के झरने भी झरने लगते हैं। कभी वह आश्चर्य की सी अवस्था

मे भर कर अपने चारो तरफ देखने लगती है, मानो उसकी आँखे किसी हितैषी प्राणी को खोज रही हो।

महाराज रूपनगर इस समाचार के मिलने पर सम्राट् शाहजहाँ से विदा लेकर महाराव छत्रसाल जी सहित अपने राजमहल मे पधारे। मत्री और वैद्यो से राजकुमारी की रुग्ण दशा के सम्बन्ध मे विचार-विनिमय किया। उन्होने कहा कि कुमारी के हृदय को सन्यासी के विजयी होने के कारण घातक आघात पहुँचा है। अत केवल औषधियो से उसकी दशा मे सुधार होना अत्यन्त कठिन है। आवश्यकता इस बात की है कि उसको किसी तरह विजयी सन्यासी के बूँदीपति होने का विश्वास कराया जाय। हो सके तो महाराज को फिर सन्यासी रूप मे राजकुमारी के सम्मुख उपस्थित कर वही उनको अनावृत किया जाय। महाराव छत्रसाल जी के सन्यासी रूप धारण कर स्वयवर-विजय करने का समाचार अब तक महलो मे भी पहुँच गया था। राज-बाला ने किरणमयी को भी यह शुभ सूचना दी, किन्तु उसकी बात पर उसे इसी प्रकार विश्वास नही हुआ, जैसे किसी निपट भाग्यहीन निर्धन व्यक्ति को अतुल धनराशि की लाटरी खुलने पर सहज ही विश्वास नही हुआ करता। इसके पश्चात् ज्योतिमयी और महारानी अर्थात् किरण की माता ने भी बूँदी महाराव छत्रसाल जी का ही श्यामवर्ण वीर होना बतलाया, किन्तु इस पर भी उनका विश्वास न कर किरणमयी ने यहीं समझा कि उसके दिल को बहलाने के लिए ही यह झूठमूठ बहाने बनाये जा रहे है। इसी समय राजकुमारी किरणमयी के विश्राम-कक्ष में महाराज रूपनगर ने महाराव छत्रसाल जी सहित प्रवेश किया। इस समय किरणमयी को कुछ होश मे पाकर उससे महाराव छत्रसाल जी का परिचय कराया और इस रहस्य का स्पष्टीकरण किया कि आप ही ने श्यामवर्ण वीर के रूप मे स्वयवर-युद्ध के प्रथम विजेता होकर, तुम्हारे पाणिग्रहण-सस्कार का अधिकार प्राप्त किया है और

यह विवाह-कार्य कल शुभ वेला मे परिपूर्ण हो जायगा। इस समय महाराव उस वेश-परिवर्तन का अभिनय यही महल मे करके दिखलाएंगे, जिसको धारण करके सन्यासी तथा श्यामवर्ण वीर बन वे स्वयवर-युद्ध में सम्मिलित हुए थे। बूँदी के महाराव छत्रसाल जी ने महारानी, राजकुमारी और समस्त रनवास अर्थात् दासी भृत्यादि के समक्ष अपना सन्यासी तथा श्यामवर्ण वीर का रूप धारण करके दिखलाया।

अब इस तरह बून्दी-पति को वेश-परिवर्तन की दशा मे प्रत्यक्ष देखकर किरणमयी को यह विश्वास हो गया कि वास्तव मे छत्रसाल ही ने सन्यासी का रूप धारण करके जनता को भ्रम मे डाला और श्यामवर्ण वीर बनकर स्वयवर युद्ध को विजय किया है। इस प्रदर्शन के पश्चात् रूपनगर महाराज श्री महाराव छत्रसाल जी को राजकुमारी किरणमयी के कक्ष में छोडकर बाहर चले गये। महाराज के चले जाने पर राजबाला और किरणमयी ने प्रणाम के पश्चात् उनका सादर एव सस्नेह स्वागत किया। महाराव छत्रसाल राजकुमारी के पलग के निकट एक कुर्सी पर बैठ गए और तीनो निम्न प्रकार से वार्तालाप करने लगे—

राजबाला—स्वयवर-विजय की बधाई महाराज! मिठाई खिलाइयेगा न?

छत्रसाल—पहले राजकुमारी किरणमयी से मिठाई खानी चाहिये। वैसे तो हमे भी मिठाई खिलाने मे कोई सकोच नही है पर सन्देह है तुम से हज्म भी होगी या नही।

राजबाला—मैं राजकुमारी किरणमयी जैसी नाजुक-मिजाज थोडे ही हूँ जो जरा सकील भोजन से ही तबियत बिगड जायगी।

छत्रसाल—नही, यदि तबियत बिगड भी जाएगी तो कोई बात नहीं, चिकित्सा हो जायगी।

राजबाला—पहले आप अपनी इनकी तो चिकित्सा करलें, हम तो पीछे ही हैं। (किरण से) बहन! अब अच्छी हो जाओगी। अब

आ गये तुम्हारे रोग को मिटाने वाले योग्य वैद्यराज ।

किरण—चल हट ! मुझ से मज़ाक न कर । इन वैद्यराज को लेजा कर कहीं अपना ही इलाज करा ।

राजबाला—यदि मैंने ऐसा प्रयास किया तो कहीं विषपान करके प्राण तो न त्याग दोगी । अब तक तो हमारी बातों का श्रीमती जी को विश्वास ही नहीं होता था ।

किरण—महाराव ! देखिये !! यह नहीं मानती, व्यर्थ ही मुझे छेड़े जा रही है ।

राजबाला—लो, तो मैं जाती हूँ । अब तो महाराव आगये न हर बात मे हिमायत लेने व नाज उठाने के लिये, इस नाजभरी चितवन का लक्ष्य बनकर ।

इसके अनन्तर परिस्थिति को समझते हुए राजबाला दोनों को कक्ष मे छोडकर बाहर चली गई । एकान्त स्थान मे पुनर्मिलन होने पर दोनो कुछ-कुछ सकुचित तो अवश्य हुए पर पहले से कुछ कम । फिर परस्पर हँसी और मुस्कराहट के साथ निम्न प्रकार से बातचीत होने लगी—

"महाराव ! आपने घायल होकर भी इस दासी के कष्ट-निवारण करने के लिए अपने आप को घोर आपत्ति मे डाल दिया । इसके लिए यह दासी आजन्म ऋणी रहेगी ।"

"मैंने इस आपत्ति मे अपने आपको तुम्हारे कष्ट-निवारण के लिए डाला या अपने कष्ट-निवारण के लिए, इसका निराकरण महा कठिन है । वस्तुतः मेरे प्राण तुम्हारे ही जीवन के साथ बँधे हैं ।"

"मेरी दयनीय दशा को देखकर तथा मुझे साथ लेकर शीघ्र बूँदी चले । अब वियोग अधिक सहन नहीं होता ।"

"अच्छा ! कृष्ण-रुक्मिणी की भाँति, अर्जुन-सुभद्रा की तरह या पृथ्वीराज-सयोगिता······

"चलिए ! हटिए !! ऐसी बाते करते हुए आप बडे बुरे आदमी मालूम देते हैं।"

"विषपान से भी अधिक बुरे, इसी लिए न कि, प्रथम मिलन की बात याद रखते हैं। वही फूल और भ्रमर, वही चन्द्र और चकोर तथा वही दीपक और पतग।"

"मै आपके हाथ जोडू । आप कृपा करके मुझसे ऐसी बात न करे।"

"हाथ-पैर जोडने से काम थोडे ही चलेगा। सौदा प्रेम का है—तन, मन, नही-नही, अन्त करण जोडने होगे।"

"वे तो न जाने कब से जुडे हुए हैं, देव ! सोते-जागते, खाते-पीते अर्थात् हर समय श्रीमान् की यही मनमोहनी मूर्ति हृदय-मन्दिर मे वास किया करती है। श्रीमान् की भगवान् जाने।"

"तुम्हारे हृदय से अधिक शोचनीय दशा मेरे दिल की है। न जाने तुम्हारे प्रेम का अगाध सागर इसमे कहाँ से उमड कर हिलोरे मारने लगा है।"

"नही-नही, मुझे आपके इस कथन पर विश्वास नही होता, क्योकि पुरुष का प्रेम बनावटी होता है।"

"और स्त्रियो का असली, खरा, विशुद्ध ! जैसे गाय का शुद्ध दूध और पुरुष का जैसे छाछ अथवा स्त्री का जैसे मधुमक्खी का शहद और पुरुष का जैसे डगारे का; क्यो, है न यही बात ?"

"अच्छा छोडिये इन बातो को। बताइये आपके घावो का अब क्या हाल है ?"

"तुम्हारी सौदर्य-प्रतिमा को देखकर मेरे सारे घाव भर जाते हैं। तुम अपने स्वास्थ्य की बात भी कहो।"

मेरी तबियत अब बिल्कुल ठीक है। मेरे रोग के वैद्य तो श्रीमान् हैं ही। आते के साथ ही जादू जैसा असर कर दिया।"

"अभी तक वैद्य की औषधि ने तो उदर मे प्रवेश तक भी नही किया। तबियत वैद्य की सूरत देखकर ही ठीक हो गई। वाह रे जादू! तब तो वैद्य नही वास्तव मे जादूगर है और है शूली का अधिकारी।"

"आप तो मुझे तग करना चाहते हैं—फिर वही मजाक"—कह कर किरणमयी ने उक्त वार्तालाप के अन्त मे अपने मुँह को हाथो से ढक लिया।

महाराव छत्रसाल ने 'नही प्रिय यह उचित नही' कह कर उसके हाथ उसके मुँह पर से हटा कर अपने मुँह से लगा लिए। इसी समय राजबाला ने 'जलपान' का सामान लेकर कक्ष मे प्रवेश किया। महाराव छत्रसाल उस मनुहार को प्राप्त करके वहाँ से विदा हो गये।

चौदहवाँ परिच्छेद

प्रात नौ बजे का समय है और गर्मी की ऋतु है। किन्तु आज आकाश-मण्डल मे थोडे-थोडे बादल होने के कारण गर्मी कुछ कम है। वायु भी शीतल चल रही है। इस समय रूपनगर के राजमहल मे बडी चहल-पहल मची हुई है। राजा, प्रजा और राजकर्मचारी, सेवक, भृत्यादि सभी इस हर्ष से आत्म-विस्मृत हो रहे हैं। इस प्रसन्नता का कारण यह है कि आज महाराज की बहुत दिनो की अभिलाषा पूरी हुई है। आज वे मानसिक चिन्ता से ऐसे मुक्त हो गये हैं मानो गगा नहा गये हो। उनकी वह महान् चिन्ता एव उत्सुकता कि उनकी लाडली पुत्रियो, सौन्दर्य-सुषमा किरणमयी और ज्योतिमयी को, न जाने कैसे घर-वर प्राप्त होगे, आज सर्वथा समाप्त हो गई है। योग्यतम उपलब्धि की धारणा को लेकर ही, परीक्षानुरूप इस कार्य के लिये ही तो स्वयवर-युद्ध का आयोजन हुआ था। किन्तु वह भी उनके पूर्ण सन्तोष का कारण न बन सका था, क्योकि स्वयवर-युद्ध मे कोई राजपूत विजयी होगा या यवन, किसी को क्या मालूम था ; दूसरे इस बात का भी कोई निश्चय नही था कि विजेता उत्तम, मध्यम या अधम किस श्रेणी का होगा और इस विवाह का परिणाम भी शुभ होगा या अशुभ। किन्तु आज इस स्वयवर-युद्ध के परिणाम-स्वरूप उक्त समस्त शंकाएँ निर्मूल सिद्ध हो गई हैं। स्वयंवर-युद्ध मे श्यामवर्ण अश्वारोही होकर बून्दी के हाड़ा-नरेश श्री महाराव छत्रसाल

जी प्रथम और आमेर-नरेश श्री महाराज जगतसिंह जी द्वितीय विजयी रहे हैं। कल ही सौन्दर्य-सुषमा ज्येष्ठा राजकुमारी किरणमयी का शुभ विवाह-सस्कार हाडा नरेश छत्रसाल जी और कनिष्ठा राजकुमारी ज्योतिमयी का विवाह आमेर-नरेश जगतसिह जी के साथ सम्पन्न हुआ है। वही राजकुमारी किरणमयी जिसे अद्यावधि लेशमात्र भी आशा तथा विश्वास नही था कि नाहर आखेट मे क्षत-युक्त हो जाने के कारण शोणित-शून्य एव बल-विहीन हो जाने पर भी हाडा-नरेश स्वयवर-युद्ध में सम्मिलित होने की क्षमता तक भी रख सकेंगे और यदि सम्मिलित हुये भी तो विजयी होकर उसे प्राप्त भी कर सकेंगे, आज सम्भावना से अधिक सफलता को देखकर परम गौरव को प्राप्त हो रही है। यही कारण है कि इस समय वह हाडा-नरेश की विजय पर फूली नही समाती। इस आनन्दातिरेक ने उस दुख को भी जैसे भुला-सा दिया है जिसके अन्तर्गत विजेता के अनिश्चित होने के कारण वह अपने हृदय को दग्ध कर चुकी है। आज तो यह विश्वास परिपूर्ण हो जाने पर कि बून्दी-नरेश छत्रसाल प्रथम और आमेर-नरेश जगतसिह जी द्वितीय निकले है, उसके हृदय-सागर मे हर्ष-वारि ज्वार-भाटे मे परिणत हो गया है और उच्चतम शिखर पर लहराने लगा है। इस प्रकार विवाह-सस्कार की सारी कार्यवाही, पिछले दो दिनो मे बडे हर्ष के साथ सम्पन्न हुई है। भारत-सम्राट् भी बेगम और शाहजादियो सहित स्वमित्रो के विवाहोत्सवो मे समुचित भाग लेकर, आज प्रात.काल ही राजधानी के लिये रवाना हुये हैं। अब केवल आमेर-नरेश का ही एक सामान्य सस्कार शेष रहा है और वह है विदा-विसर्जन-सम्बन्धी पलकाचारी भेट। सब स्त्रियाँ आज राजमहल मे, श्रीमान् को कुछ भेट देने के लिये एकत्रित हुई हैं। इस पलकाचार के लिये आमेर-नरेश इस समय महल मे बुलाये गये हैं। एकत्रित स्त्रियो में वहाँ पर राजकुमारी किरणमयी भी उपस्थित है, जो अपनी कनिष्ठ भगिनी के पति को शुभाशीर्वाद और मंगल-कामना

के साथ एक रत्न भेट मे देने के लिये आई है। इसको एक शिष्टाचार भी कह सकते हैं और विनिमय भी, क्योंकि ज्योतिमयी कल हाडा-नरेश को अपना उपहार पहले ही उनके पलकाचार के समय भेट कर चुकी है। अपने उसी कर्त्तव्य के निर्वाह मे राजकुमारी किरणमयी तल्लीन है जिसको किसी दुर्घटना एव दुर्भावना की तनिक भी आशका नही है। किन्तु आमेर-नरेश के भाव, जो पहले ही से अच्छे नही, अब किरणमयी को अपने अति निकट देखकर उसके प्रति और अधिक विकारयुक्त हो गये हैं। अपितु जब से वह हाडा-नरेश छत्रसाल की पत्नी बनी है तब से तो वे ईर्ष्या से उन्मत्त हो ऐसे पशुत्व मे पग गये हैं कि प्रत्येक सम्भव प्रकार से उसकी पवित्रता पर आघात करने के अवसर की प्राप्ति की ताक-झाँक मे ही लग रहे हैं।

इसके साथ ही साथ इस बात की भी प्रत्यक्ष जाँच कर लेना चाहते हैं कि राजकुमारी किरणमयी की प्रवृत्ति भी उनकी ओर कुछ है या नही। इस कारण से, किसी भी मिलन-अवसर को वे बिना छेड-छाड किये, व्यर्थ खोने को तैयार नही हैं। दूसरी बात यह है कि भारत-सम्राट् शाहजहाँ के भी वे विशेष कृपा-भाजन हैं। यद्यपि शाही सिपहसालारी और मन्सब मे अब वे बूँदी-नरेश से अधिक नही रह गये हैं तो भी सम्राट् के अन्तरग एव विशेष सलाहकार होने के नाते साम्राज्य मे वे विशेष प्रभाव एवं महत्व रखते हैं। उनकी सैन्य शक्ति भी बूँदी-नरेश की अपेक्षा कही अधिक बढी-चढी हुई है। धन-धान्य में तो वे साम्राज्य को छोडकर अन्य सभी रजवाडो से अधिक सम्पन्न हैं; बूँदी की तो बात ही क्या जो कि अन्य सब से छोटा राज्य है। यही तक नही, उनका राज्य भी इतना विस्तृत है कि जिसमे बूँदी जैसे चार राज्य समा सकते हैं। तात्पर्य यह है कि बूँदी-नरेश की अपेक्षा आमेर-नरेश अधिक वैभवशाली हैं और उनको अपने इस महान् वैभव पर अभिमान भी बहुत कुछ है। उसमें भी चार चाँद लगाने के लिये नवाब शेरशाह रुहेला जैसे उच्च श्रेणी के शाही सामन्त

उनके परम मित्र और बूंदीपति के परम शत्रु हैं। वे हर समय उनकी सहायतार्थ तैयार रहते हैं।

इन समस्त परिस्थितियो से लाभान्वित होकर, आमेर-नरेश इतने उच्छृखल हो गये हैं कि किसी भी उचितानुचित कार्य के करने मे वे सकोच करने को तैयार नही हैं। उक्ति प्रसिद्ध है कि नाशोन्मुख नर की मति भ्रष्ट हो जाया करती है। यही कारण है कि ज्यो ही राजकुमारी किरण-मयी एकाकी रूप मे उनके निकट उन्हे आशीर्वाद देने के लिये गई त्योही उन्होने दुर्भाग्यवश उसका हाथ पकड लिया और कहने लगे—'प्राणप्रिये! मै तुम को तन, मन, प्राण और प्रण, सब से अधिक मानता हूँ और इतनी प्रबल अनुरक्ति रखता हूँ कि अपने आपको भी उस विकार में विस्मृत कर चुका हूँ।"

किरण—आमेर-नरेश, सावधान! आपको यह ध्यान होना चाहिये कि आप इस अनुचित कार्य के द्वारा कितने बडे अपराधी बन रहे हैं। आप एक पतिव्रता एव सती राजपूत बाला के समक्ष हैं, किसी व्यभिचारिणी बाजारू वेश्या के सामने नही। आप मेरे भाई के समान हैं, मेरा हाथ छोड दीजिये!

आमेर-नरेश—सुन्दरी! तुम्हारा परम सौभाग्य है कि तुमको आमेर-नरेश प्रेम करता है।

किरण—(अपना हाथ झटके से छुडाकर) क्या आमेर-नरेश इतना पामर, नीच, कायर और चाण्डाल है कि स्वयवर-युद्ध मे हारकर भी, उस क्षत्रिय बाला के प्रति हृदय मे दुर्भावना रखता है, जो एक-दूसरे पुरुष की विधिवत् पत्नी बन चुकी है?

आमेर-नरेश—सामर्थ्यवान् के लिये सब कुछ उचित और क्षम्य है। साथ ही प्रेम और युद्ध मे प्रत्येक उचितानुचित कार्य, कर्त्तव्य, उत्तम एव सम्भाव्य है। यदि तुम्हारी प्राप्ति का निर्णय अब तक स्वयवर-युद्ध में व्यक्तिगत शक्ति पर निर्भर रहा है तो अब सैनिक शक्ति पर रहेगा।

किरण—(कटार तानकर) अच्छा तो ले नीच संभल। पति के पूर्व पत्नी से युद्ध कर। मैंने तुझे अपनी छोटी बहन का पति समझकर, कुछ-कुछ क्षमा तथा औदार्य का पात्र माना था, किन्तु अब मालूम हुआ कि तू पामर और नीच है और है दण्डनीय तथा वध-योग्य जो एक पवित्र-हृदया परपत्नी के प्रति दुर्भावना रख, राजवैभव मे चूर हो, उद्दण्डता से पाशविक आक्रमण करता है।

ऐसा कहते-कहते किरणमयी रोष से रण-चण्डिका बन गई और अपने कटार वाले हाथ को ऊँचा उठाकर, प्रहार करने के लिये पैतरा बदलने लगी। जब उसकी यह दशा दूर से ज्योतिमयी ने देखी तो वह झपट कर उसके निकट पहुँची और उसके कटार वाले हाथ को पकडकर, बडी अनुनय-विनय के साथ ज्येष्ठ भगिनी को ऐसा करने से रोकने लगी। उस समय उन दोनो मे निम्न प्रकार से वार्तालाप हुआ —

"मुझे छोड़ दो बहन ! यह नराधम बिना उचित दण्ड भोगे नही बच सकता।"

"बहिन किरण ! कृपया मेरे सुहाग की रक्षा करो। मेरे यह महँदी मे रचे हुये हाथ देखो और देखो नव नथ-वेधित नाक तथा ककण से युक्त कलाई को। विवाह के साथ ही साथ अपनी इस प्यारी बहन को विधवा बनाकर मत बिठाओ। अच्छी ज्येष्ठ बहन, मैं तुम्हारी शरण हूँ।"

"बहन ! इस मूर्ख ने जो पाप किया है, न्यायानुसार उसका दण्ड इसे अवश्य भोगना चाहिये। यह दुष्ट क्षत्रिय नही, कायर, नीच और पापी है।"

"मैं इनका अपराध स्वीकार करती हूँ और न्यायानुसार इन्हे दण्ड का पात्र भी मानती हूँ, किन्तु फिर भी यह प्रार्थना है कि अपनी प्यारी छोटी बहन के वैधव्य-सकट का विचार करके और इस बात का ध्यान करके कि स्त्री का सर्वस्व पति ही हुआ करता है, जिसके बिना वह

जीती हुई भी मृतक-तुल्य है, इनको अपने औदार्य के कारण क्षमा कर प्राण-दान दे दो।"

"किन्तु इसने एक क्षत्रिय बालिका का पवित्र हाथ दुर्भावना से स्पर्श कर दूषित किया है। इसका दण्ड तो इसे मिलकर ही रहेगा।"

"यदि इनको दण्ड ही देना है बहन! तो अवश्य दो, किन्तु इनका सिर झाड़ने से पूर्व, अपनी प्यारी अनुजा का सिर भी उतार लो, ताकि जिस बहन को तुमने अपने ही समान समझा है, वह वैधव्य-सकट से मुक्त हो जाय।"

"अच्छा ठीक है, मै समझ गई, यह दड इस पामर के मिस तुझ निर-पराध बालिका को मिल रहा है, जो सर्वथा अनुचित है। अस्तु, मैं इस पामर को छोडकर, तेरे सौभाग्य-सिन्दूर को सुरक्षित रखती हूँ और इस अपकृत्य का प्रायश्चित दूसरे प्रकार से करती हूँ।"

इतना कहकर उसने अपना कटार वाला हाथ, ज्योतिमयी के हाथ से झटककर छुडा लिया और अपने बाएँ हाथ को फैलाते हुए तथा उसको अपने कटार के आघात का लक्ष्य बनाते हुए, उस कटार को फिर जोर से तान लिया। ज्योतिमयी ने फिर सजल नेत्र करके, जिज्ञासा के रूप में, उसका हाथ पकडकर प्रश्न किया—

ज्योतिमयी—प्रिय भगिनी! अभय-दान देने के पश्चात्, अब इस कटार को तानने का क्या प्रयोजन रह गया? अब इस रण-तत्परता का और क्या उद्देश्य शेष है?

किरणमयी—अब यह इस अपवित्र किये गये हाथ को इस पवित्र देह से पृथक् करने के विचार से ताना गया है। यह मेरा बायाँ हाथ ही इस आघात का लक्ष्य है।

अल्पकाल के अन्तर्गत ही, किरणमयी के इस प्रकार बिगडने का सम्वाद बाहर तक फैल गया। महाराज छत्रसाल ने भी उसे सुना और वे उसे सकट का समय समझ तत्काल राजमहल की ओर को चल

पड़े। महलो मे पहुँचकर बूँदीपति ने, अपने दाये हाथ से खजर तानकर बाएँ हाथ को उसका पूर्ण लक्ष्य बना, उसे स्व-शरीर से पृथक् करने के लिये किरणमयी को उद्यत पाया, और देखा कि ज्योतिमयी उसे रोकने की चेष्टा मे व्यस्त है।

बूँदी-नरेश ने किरणमयी के उच्च एव पवित्र भाव तथा आदर्श की सराहना करते हुए, उसको सम्बोधन करके कहा, "धन्य-धन्य देवी किरण, मैं तुझको पत्नी रूप मे पाकर, महा सौभाग्यशाली और परम धन्य हूँ। वास्तव मे तुम एक महान् आदर्श रमणी हो। अब मेरी आज्ञा से तत्काल अपने खजर को म्यान मे रख लो। तुम्हारे विचारो की पवित्रता ने, तुम्हारे सारे शरीर को ही अलौकिक रूप से पवित्र कर दिया है। तुम्हारे पवित्र हाथ के स्पर्श से, आमेर-नरेश का अपवित्र हाथ, स्वय उसी प्रकार से पवित्र हो गया है, जिस प्रकार पवित्र गगा-जल के स्पर्श से, किसी महा पापी पिशाच की दूषित देह। जिस प्रकार पातकी के स्पर्श से गगा-जल की पवित्रता नष्ट नही होती, ठीक उसी प्रकार तुम्हारे हाथ की पवित्रता को, उस समय तक, जब तक कि तुम्हारे विचार स्वयमेव दूषित नही हैं, ससार की कोई शक्ति नही छीन सकती। अतः आमेर-नरेश तुम्हारी दया के पात्र हैं। मेरे अनुरोध से इनको, बिना शर्त, पूर्णतया क्षमा प्रदान करो।"

किरणमयी—पूर्ण क्षमा तभी मिलेगी देव! जब आमेर-नरेश स्वयं मुझ को भगिनी कह कर क्षमा माँगेंगे।

छत्रसाल—इनकी तरफ से मैं क्षमा माँगने को तैयार हूँ।

ज्योतिमयी—बहन! क्या मेरी क्षमा-याचना काफी नही है?

आमेर-नरेश—अच्छा बहन! मैं अपने कार्य पर लज्जित हूँ, मुझे क्षमा करो।

इसके पश्चात् किरणमयी ने अपने खंजर को म्यान मे कर लिया। अगले दिन दोनों बरात अपने-अपने स्थान को विदा हो गईं। आमेर-

नरेश ज्योतिमयी को लेकर सदल-बल आमेर को चले गये। इधर बूँदी-नरेश महाराव छत्रसाल जी वीरागना किरणमयी का लेकर बूँदी को रवाना हुए।

हाडा तलवार की परीक्षा हो जाने पर इसी समय एक शुभ अवसर और आया, जबकि किरणमयी की चचेरी बहन और सहेली राजबाला की शादी इन्द्रगढ-नरेश मौकमसिह के साथ सम्पन्न हुई।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

प्रात काल का समय है। सूर्य भगवान् अपने शयन-कक्ष से उठकर अपनी निश्चित यात्रार्थ प्रस्थान कर चुके है। आज का दिल्ली नगर अनुपम शोभा को प्राप्त है। हाट, बाट और बाजार सजे हुए हैं। हर जगह नगर मे बडी चहल-पहल है। लाखो रुपये का लेन-देन, क्रय-विक्रय आदि अनेक प्रकारो से व्यापार-कार्य चल रहा है। दिल्ली भारत का प्राण है और दिल्ली का प्राण है चाँदनी चौक। इसी चाँदनी चौक के पूर्वी छोर पर लाल किला अपनी और अपने निर्माता सम्राट् शाहजहाँ की महत्ता को प्रकट कर रहा है। लाल किले के अन्दर दीवाने-खास और दीवाने-आम दर्शनीय सभा-भवन हैं। वहाँ पर प्राय. बादशाह के दरबार लगा करते हैं। आज भी दीवाने-खास में विशेष सरदारो का एक दरबार लगा है। जब से आमेर से आकर सम्राट् ने इस बार यहाँ निवास किया है, इसे पहला ही दरबार समझिये। एक तरफ को उच्चतम मञ्च पर 'तख्ते-ताऊस' नामक शाही सिंहासन रक्खा हुआ है। उस पर भारत-सम्राट् शाहजहाँ विराजमान हैं। मुसाहिब लोग सामने कर बाँधे खडे हुए हैं। अन्य सरदारगण भी यथोचित रूप मे अपने-अपने स्थानों पर अवस्थित हैं। शाहजहाँ और प्रधानमंत्री तहव्वर खाँ में निम्न प्रकार से वार्तालाप हो रहा है—

"चन्द दिन से जनाब आमेर-महाराज जगतसिंह दरबार मे दिखाई नही दे रहे हैं। क्या बात है?"

"बन्दापरवर ! जनाब आमेर महाराज साहब के दुश्मनो की चन्द दिनो से तबियत नासाज है।"

"शादी के बाद ही यह नासाजगी ! यह तो बडे ताज्जुब की बात है !"

"इसकी एक खास वजह है सरकार ! एक वाकये ने उनके दिल को बडा सदमा पहुँचाया है।"

"क्या स्वयवर की जग की हार और राजकुमारी किरण के छिन जाने से ऐसा हुआ है ?"

"नही, सरकार ! इससे भी एक बडे हादसे से उनके दिल के टुकडे-टुकडे हो गए है।"

"यह हादसा क्या है और कैसे उरुज मे आया ?"

"जगे स्वयवर के बाद रूपनगर के राजमहल मे हाडा महाराव की किरणमयी के साथ और आमेर महाराज की ज्योतिमयी के साथ शादियाँ हो गईं· ।"

"उनसे क्या ? वे तो हमारी मौजूदगी मे ही हुई थी ?"

"मगर बन्दापरवर के वहाँ से चले आने के बाद आमेर महाराज के पलकाचार की रस्म पर किरण और आमेर महाराज मे झगडा हो गया।"

"यह सब कुछ हो जाने के बाद किरण के साथ आमेर महाराज का क्या ताल्लुक रहा ?"

"हुजूर ! आमेर महाराज ने अपने पलकाचार के मौके पर मजाक ही मजाक मे किरणमयी का हाथ पकड लिया। इस बात पर वह इस कदर बिगडी कि तलवार निकाल कर महाराज के कत्ल के लिये आमादा हो गई। जब उसकी बहन ज्योतिमयी और हाडा महाराज ने समझाया तो उनको तो छोड दिया, पर फिर अपना हाथ काट डालने का हठ करने लगी। आखिर मजबूर होकर आमेर महाराज को उससे धर्म की हमशीरा कहकर माफी माँगनी पडी, तब कही उन्हे माफ किया

गया। उसी बेइज्जती का सदमा आमेर-महाराज की तबियत को आज तक नासाज व परेशान कर रहा है।"

"बडी गैरतमन्द और दलेर लडकी है, किरण! शाबाश!!"

"मगर आमेर महाराज का तो हुजूर! उसने सारा ही पानी झाड दिया।"

"लेकिन आमेर महाराज को ऐसी क्या पडी थी कि·· ?"

"वाह, गरीबनवाज! किरणमयी पर तो आमेर महाराज जी-जान से फिदा हैं और स्वयवर की लडाई के बाद तो उनका हाल-बेहाल ही हो गया है।"

"अच्छा, तो जनाब की नासाजगी तो बडी मजबूत बुनियाद पर कायम हुई है। क्या किरणमयी कोई निहायत नायाब व हसीन लडकी है?"

"क्या कहिये, हुजूर! निहायत नायाब फूल है। गोया सितारो में महताब कहिये!"

इसी समय आमेर-नरेश के दरबार मे पधारने की सूचना शाहशाह को प्राप्त हुई। शाहजहाँ ने आमेर-नरेश को उचित स्वागत के साथ अपने हुजूर मे बुलाया। आमेर-नरेश ने भी सम्राट् का यथोचित अभिवादन किया। इसके अनन्तर बादशाह और आमेर-नरेश मे थोडी देर तक किन्ही राजनीतिक विषयो पर विशेष वार्तालाप होता रहा। सम्राट की अभिरुचि के साथ वे भी विषय-विश्लेषण मे सलग्न हुये।

इसके पश्चात् आमेर-नरेश अपने निश्चित स्थान पर बैठ गैये। इसी समय शेरशाह रुहेले ने विषय बदल कर किरणमयी द्वारा आमेर-नरेश के अपमान की घटना पर प्रकाश डालकर उसकी गम्भीर विवेचना की। उसके वक्तव्य का मन्तव्य निरन्तर यही रहा कि आमेर-नरेश का अपमान हाडा-नरेश की सम्मति से उन्ही की शै पाकर हुआ है। इसीलिये हाडा नरेश को, इस अपमान-जनक कार्य से दूर समझ लेना मानो घटना का आधार भजन करना है।

शाहजहा को इस विषय मे अधिक अभिरुचि रखना उचित प्रतीत नही हुआ। अत उन्होने आराम के बहाने दीवाने-खास को छोडकर अन्त पुर को प्रस्थान कर दिया। सरदारगण अपने-अपने स्थान पर बैठकर इधर-उधर की वार्तालाप मे सलग्न हुये। शाहजहाँ का उस विषय के छिडने पर उठ जाना, जिसने आमेर-नरेश के मन मे हाडा-नरेश के प्रति स्पर्धा के भाव जागृत कर उन्हे आवेश दिलाया शायद कोई राजनीतिक चाल हो। नवाब रुहेला का कूटनीति-पूर्ण व्यवहार प्रमाणित करता है और सम्भावना उत्पन्न करता है कि शायद यह सब शाहजहाँ के सकेत पर ही हुआ हो। कारण कि इस समय तक के अनुभव से, भारत के मुगल सम्राट् यह निश्चित रूप से समझने लग गये हैं कि यदि वे भारत मे शासन-सूत्र सचालन मे सफल होना चाहते है तो उन्हे उस राजपूत शक्ति को अवश्य विभाजित करके अपने अधीन करके रखना चाहिये जिसे उस समय की अत्यन्त महान् शक्ति कहना होगा। किन्तु महान् शक्ति होने पर भी वह पारस्परिक ईर्ष्या द्वेषवश अपना एकीकरण न कर, मदान्ध रूप से यत्र-तत्र बिखर कर विजातीय और विधर्मी यवनो के हाथ की कठपुतली बन उनके पृष्ठ-पोषण के निमित्त ही अपना सर्वनाश करती रही है।

नवाब रुहेले ने आमेर-नरेश के आवेश के स्वर्णावसर से यह सोच कर लाभ उठाना चाहा कि जब लोह गर्म हो, तभी उस पर प्रहार करना चाहिये और सम्भवत शाहजहाँ भी यही अनुभव करके अपने प्रतिनिधि को, विशेष वार्तालाप करके, विषय में प्रगति करने के लिये ही, उस सुअवसर पर छोडकर आप पृथक् हो गये। सुन्दर सुयोग पाकर शेरशाह ने आमेर-नरेश के साथ निम्न प्रकार से वार्तालाप आरम्भ किया—

"महाराज ! निरादर तो हुआ जनाब का मगर तकलीफ पहुँची है बन्दे के दिल को ! क्योकि बन्दा जनाब का गहरा दोस्त है और जनाब मे खास दिलचस्पी रखता है।"

"नवाब साहब ! आप जैसे वीर पुरुष को मित्र बनाकर मै अपने आपको अत्यन्त गौरवान्वित हुआ समझता हूँ । आप ही एक ऐसे अभिन्न-हृदय सुहृद हैं जिनसे कि मै अपने हृदय की व्यथा दिल खोल कर कहने का साहस कर सकता हूँ, अन्यथा किसी न किसी कारणवश अपने हार्दिक भाव सब ही से छिपाने पड रहे हैं। अपने प्रजावर्ग, सरदारो और परिवार मे तो इस घटना की चर्चा करना सकोच, नही-नही, घोर अपमान का विषय बन गया है । यदि सम्राट् के दरबार मे किसी पर व्यक्त किया जाता है तो लाभ कुछ नही केवल अपना ही और अधिक परिहास है । अत उस उक्ति के अनुसार कि मेले का हारा और औरत का मारा, कहे तो क्या और कहे तो किससे ? अब चुप ही रहना पडता है । किन्तु बिना किसी पर हृदय के भाव प्रकट किये काम भी नही चलता । मस्तिष्क परेशान रहता है और जी घबराया करता है । ऐसी अवस्था मे उक्त समस्त समस्या के फल-स्वरूप आप सदृश अवसरोपयोगी मित्र मिल गये, यह हमारा परम-सौभाग्य है । असल बात तो यह है नबाब साहब, कि अब हमारी किरण को पाने की इच्छा बिल्कुल नही रही है । अब तो केवल बदला लेने की ज्वाला दिल मे धधक रही हैं ।"

"खुदा को हाजिर-नाजिर जानकर और कलामे-पाक की कसम खाकर अर्ज है कि जनाब के पसीने की जगह खून बहाकर भी बन्दा अपनी सच्ची दोस्ती का सबूत मुहैया न करे तो रुहेला पठान नही ।"

"तो इस राजपूत के इन वचनों को भी प्रमाण समझिये कि यदि आप मेरा हित चिंतन करेंगे, तो एक मित्र के नाते मैं भी आपके लिये प्राण तक देने को तत्पर रहूँगा । अब तक की जो मित्रता है, उसे और भी अधिक घनिष्ट बनाने के विचार से लीजिये मैं अपनी पगडी उतार कर आपको पहनाता हूँ और आपकी मै स्वयं धारण करता हूँ, ताकि हम पगड़ी-पलट मित्र बन जायँ और सदा इसी रूप मे बने रहे ।"

इतना कहकर आमेर-नरेश ने अपनी पगड़ी उतार कर शेरशाह

को पहना दी और शेरशाह की पगडी अपने सिर पर रख ली। इसके पश्चात् दोनो मित्र सीने से सीना मिलाकर गहरे आलिंगन में आबद्ध हुए। इस प्रकार से वे घनिष्ट मित्रता के अकाट्य सूत्र मे परिबद्ध हो गये।

बादशाह शाहजहाँ के परम मान्य सामन्त शेरशाह की मित्रता को प्राप्त करके, आमेर-नरेश ने उसे अपने व्यक्तित्व के विस्तार के विचार से एक सौभाग्य-सूचक कारण ही समझा और इसको भावी उपलब्धि का कारण जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुये। फिर इस हर्ष के अतिरेक में उनमे प्रस्तुत प्रयोग पर निम्न वार्तालाप हुआ।

"हाँ, नवाब साहब! जैसा कि मै अभी कह रहा था, अब मेरी इच्छा किरण को अपनाने की तो रही नही है, किन्तु मै इस अपमान का किरण और हाडा नरेश से बदला अवश्य लेना चाहता हूँ। पर यह मेरी समझ मे नही आता कि वह बदला किस प्रकार से लू। इसी चिन्ता मे घुल रहा हूँ।"

"घुले जनाब की बला! खादिम के रहते जनाब को किसी तरह के फिक्र करने की जरूरत नही है। आप इस काम को बन्दे के ऊपर छोडे और तब देखे तमाशा खादिम की नाकिस अक्ल का, कि हाडा नरेश को, बन्दा बदले की शक्ल में किस शान से नाको चने चबाता है।"

"मित्र! मै आपकी किस प्रकार प्रशसा करूँ। आप मेरे परम हितैषी स्वजन है किन्तु फिर भी सन्तोष के विचार से आप अपनी उस योजना को विस्तार के साथ मेरे सामने रखकर, मेरे इस दग्ध हृदय को सान्त्वना प्रदान करे, जिससे आप हाडा-नरेश को मुँह की खिलाना चाहते हैं। कारण कि इस दिल की हालत यह है कि 'कुठौर काटी और ससुर वायगी'। इस समय इसको किसी तरह तसल्ली नही हो रही है।

आमेर-नरेश को अत्यन्त उत्सुक जानकर, शेरशाह ने कुछ देर सोच कर अपनी योजना की रूपरेखा, पहले अपने दिल मे तैयार की और फिर आमेर महाराज के सम्मुख उपस्थित कर दी। योजना का

औचित्य परख कर आमेर-नरेश फूले न समाये। कारण कि शाहन्शाह की अनुमति के बिना, उन्होने बून्दी-नरेश के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने में अपने आपको असमर्थ पाया, इसके अतिरिक्त ऐसी परिस्थिति मे बदला लेने का और कोई ढग उन्हे सूझा ही नही। अत. इस योजना ने उनके हृदय में घर कर लिया और उन्होने सन्तोष का साँस लिया। दरबार से लौटते समय वे इतने प्रसन्न थे मानो उन्हे कोई बडी सम्पत्ति प्राप्त हो गई है।

सोलहवाँ परिच्छेद

परम सुहावनी वर्षा ऋतु का आगमन हो गया है। ग्रीष्म ऋतु की तपन, आधी और तूफान शान्त हो गए हैं। युद्ध, विप्लव और रक्तस्राव-रूपी ज्वालामयी उष्णता अपनी समाप्ति के साथ-साथ ही, कष्ट और अशान्ति की तपन का अन्त कर गई है। अब सन्धि, मिलन और प्रेम-रूपी वर्षा ऋतु ने आकर, एव सुख-शान्ति की मनभावन सघन घटा और रिमझिम-रिमझिम बूँदो के झरने तथा साहस और स्फूर्ति की शीतल वायु के झोको ने, दृश्य को परम आकर्षक बना दिया है। ग्रीष्म-काल के सूखे और मुरझाये हुए हृदयो में वर्षा-व्यारि नव-जीवन का सचार कर रही है। चिन्ता-व्यथा की धूलि पर धूल पड गई है। प्रमुदित-वदन पृथ्वी नें हरियाली तीजो का आनन्दोत्सव मनाने के विचार से, हरी बानात की पोशाक धारण कर ली है। हरियाली का हर तरफ बोलबाला है। हरी-हरी फसल और पौधो से आच्छन्न कृषको के खेत हरे-हरे दिखाई पड़ रहे हैं। हर्षित हृदय वाले हरित-वर्ण मयूर, हरे-हरे वृक्षो पर अथवा हरी-हरी झाडियों में विचरकर आनन्दमय नृत्य कर रहे हैं। कलिसिरा कण्ठकली कोकिला का 'कूकू-कूकू' का कलरव और प्रेम-प्रमत्त पपीहे की पीउ-पीउ' की पुकार, समस्त विरही प्रेमियो की वियोग-व्यथा का व्यापक प्रभाव प्रकट कर रहे हैं। भावना-पूर्ण कवि-हृदय भ्रमरों की गम्भीर गुंजार और चचल-चित्त चहचहाने वाली

चिडियाओं का स्नेहशीलता से चमत्कृत सुन्दर सगीत, हृदय में एक प्रकार की उमगो के द्वारा उमडी हुई हूक उत्पन्न कर रहा है। प्रकृति मादकता की मदिरा पीकर मदमस्त हो अपने प्रियतम मदनदेव के साथ मोहमयी केलिक्रीडा मे निमग्न है। श्रावण का शोभनीय सुन्दर मास, हृदयो को हर्षित करने वाले शुभ सन्देश को लेकर, एक दिव्यदूत की भाँति आया है जिसमे, सब प्रकार से अमृतानन्द की वारि वर्षा हो रही है। अनुरक्ति के झूले पर प्रेम-परिणायक प्रेमी जन सयोग के हिंडोलो पर मिलन और बिछोह की पैग बढा रहे है।

ऐसे स्फूर्तिदायक समय मे युवको का तो कहना ही क्या, वृद्ध पुरुष तक भी यौवन के उन्माद में प्रवृत्त हो प्रेम का मद्यपान कर, कामेच्छा से पीडित कास्तूर्य्य कृष्णसार बन, वाञ्छित वस्तु की खोज में परिभ्रमण करने लगे है।

ऐसी ही एक सन्ध्या के समय दासी मुरादन को साथ लेकर, सम्राज्ञी मुम्ताज बेगम, वायुसेवन के विचार से, प्राकृतिक दृश्यो का भव्यानन्द लेती हुई अपनी विपुल वाटिका मे परिभ्रमण कर रही है। इसी समय किंचित् विशेष कार्यवश, बून्दी-नरेश छत्रसाल का भी उस ओर आगमन हो गया है। अकस्मात सम्राज्ञी और बून्दी-नरेश का साक्षात्कार हो जाता है। बून्दी-नरेश की उपस्थिति को इस निर्जन उद्यान में अपने निकट देख कर, मुम्ताज एक झरने के निकट, एक सगमरमरी पत्थर की शिला पर विराजमान हो जाती है और मुरादन को भेजकर महाराव को अपने समीप बुलवाती है। मुरादन बून्दी-नरेश को बेगम के निकट पहुँचाकर किसी बहाने से उन्हे अकेले छोडकर प्रथक् हो जाती है, जैसे यह उनकी पूर्व नियोजित योजना हो।

बून्दी-नरेश निकट पहुँच, विधिवत् अभिवादन के पश्चात् इस तरह वार्तालाप में संलग्न होते हैं—

छत्रसाल—सेवक के लिए क्या आज्ञा है, सम्राज्ञी ?

मुम्ताज—मुझे जनाब से खास तौर पर कुछ अर्ज करना है, मगर किन अलफाज़ मे अपने खयालात का इजहार करूँ, यह समझ ही में नही आता। कुछ झिझक सी लगती है।

छत्रसाल—आपत्ति क्या है सम्राज्ञी ! सेवक को परम आज्ञाकारी समझ कर नि सकोच भाव से आदेश दें।

मुम्ताज—ठीक है। मगर सबसे पहली बात तो यही है कि मैं तुम्हारे मुँह मे यह अलफाज नही सुनना चाहती जिनको तुम इस वक्त इस्तेमाल कर रहे हो।

छत्रसाल—है ! मै कौनसे अनुचित शब्दो का प्रयोग कर रहा हूँ, बेगम साहिबा ? आप क्या नही सुनना चाहती ?

मुम्ताज—'सेवक', 'आदेश', 'आज्ञा', 'आज्ञाकारी' और 'सम्राज्ञी' वगैरा मुझको जरा भी अच्छे नही लगते।

छत्रसाल—तो कौन से अच्छे लगते है, बेगम साहिबा ? किन शब्दो के साथ आपको सम्बोधन किया जाये ?

मुम्ताज—'प्यारी', 'महबूबा', 'दिलजानी', और 'नूरेनजर', 'सम्राज्ञी' या 'बेगम साहिबा' की जगह और 'आदेश' या 'आज्ञा' की जगह बोलो नाज','मुँह खोलो हुस्न ,'खिलो दिल के फूल','बहको मेरी बुलबुल', 'चहको मेरी चिडी', 'चमको मेरे चॉद', 'महको मेरे गुल' वगैरा ही वह खुशदिल अल्फाज हैं जिन्हे मै तुम्हारे मुँह से सुनना चाहती हूँ। बूँदी-धनी ! आप बोलते क्यो नही ? किस गम मे मुबतला हो गये ?

छत्रसाल—मै सोचता हूँ कि, आखिर आप यह कह क्या रही हैं बेगम साहिबा ! मै बिल्कुल नही समझा। कारण कि ऐसे शब्द तो श्रीमती के लिए केवल श्रीमान् सम्राट् ही प्रयोग कर सकते है अन्य नही।

मुम्ताज—क्यो, डरते हो क्या ? मै तुम्हे तुम्हारे सम्राट से भी ज़्यादा मानती हूँ और उनके बराबर ही ऊँचा पहुँचाना भी चाहती हूँ। वे मेरी उगलियो पर गुड्डी के मानिन्द नाचते हैं, मगर मै बन जाना चाहती

हूँ गुड्डी तुम्हारी ! यह मेरी बहुत दिन की जुस्तजू है।

छत्रसाल—किन्तु बेगम साहिबा · ?

मुम्ताज—नही ! किन्तु-इन्तु कुछ नही !! घबराहट से पशो-पेश की कोई जरूरत नही।

छत्रसाल—घबराता या डरता तो यह राजपूत काल से भी नही है, पर···

मुम्ताज—फिर वही पर ! अजी इस बेपर के पर से क्या फ़ायदा ? चलो, उठो, देर न करो, मेरे साथ-साथ आओ। गौर तो करो, कैसा अच्छा सुहावना मौसम है। उधर तो ख्याल फरमाओ, वह मोर-मोरनी, कपोत-कपोती, चिडा-चिडी, वगैरा सभी जीव अपने दिलो को खुशी की उमगो से भरे हुए, तरह-तरह के जशन, बाहम-वस्ल यानी आपस की केलि-क्रीडा मे मुबतला है। बागो मे खुशबूदार फूल खिल-खिलकर, पराग उँडेल, नीद मे सोये हुए मदन को जगा रहे है। जोबन से भरी हुई कुदरत कोयल की 'कूकू' और पपीहे की 'पीउ-पीउ' की बोली में वस्ल की माँग कर रही है। यही वजह है कि तुम्हारी मुहब्बत की भूखी कनीजा मुम्ताज भी उसी मर्ज की मरीजा हो दर्देदिल की कसकती हूक के सबब से तडफडा रही है। आओ चलो ! तुम पर कुरबान जाऊ नाज ! रूठो नही, नखरे न दिखलाओ !! चलो, चलकर ज़रा दिल बहलाये और खुशियो से लबरेज़ उसी जामे-वस्ल को पियें, जो जन्नत के मज़े की जीती-जागती तस्वीर है।

छत्रसाल—क्या सम्राट् शाहजहाँ, सम्राज्ञी की इस लिप्सा को पूरा करने के लिये पर्याप्त पात्र नही हैं ?

मुम्ताज—जिस तरह कण्ठ की प्यास बुझाने को साफ पानी और दिमाग की प्यास बुझाने को तेज शराब की जरूरत होती है, महज़ खाली घडे या बोतल की नही, उसी तरह दिल की हुडक बुझाने के लिए तमन्नाए-वस्ल से लबरेज गुल की मुहब्बत दरकार होती है,

खाली व खुश्क जिगर की नही।

छत्रसाल—क्या सम्राट् के हृदय मे, सम्राज्ञी के लिए प्रेम-रस का सागर हिलोरे नही लेता अर्थात् क्या वे श्रीमती को प्रेम नही करते? सम्राज्ञी के लिए उनका प्रेम तो एक उदाहरण कहा जाता है।

मुम्ताज—वे करते तो सब कुछ हैं और है भी बन्दी पर जी-जान से फिदा। मगर उनकी सारी कुर्बानी, मुहब्बत, और जाँफिशानी मे मुझे कही जन्नत की वह शै नसीब नही हो रही है, जिसकी मुझे अजहद तलाश है और है वाकई ज़रूरत। इसी वजह से भूल-भटक कर, वास्ते हाजत रफा, मुझे आ जनाब की खिदमत मे आना पड रहा है।

छत्रसाल—किन्तु जिस 'शै' का आप सम्राट् की मुहब्बत मे अभाव पाती है, सम्राज्ञी! वह मेरी मुहब्बत मे मिल जायगी, इसका प्रमाण क्या? और इस तरह की अज्ञानतावश आपने कल्पना भी कैसे कर ली? मेरी किस चीज से आपको ऐसा विश्वास हो गया?

मुम्ताज—सब से बडा मुनसिफ इन्सान का दिल हुआ करता है। लिहाजा मेरा दिल यह गवाही दे रहा है कि बहादुर छत्रसाल जैसे तबीब की खिदमत मे पहुँच जाने पर बन्दी के दर्देदिल की दवा ज़रूर हासिल हो जायगी।

छत्रसाल—और यदि ऐसी कोई औषधि मेरे पास न मिले, न रही हो या आगे न रहे, तो श्री शाहजहाँ की भाति श्रीमती किसी और वैद्य के टटोलने मे लग जायगी, क्यो?

मुम्ताज़—इस बात की फिक्र या गम क्यो करते हो, बहादुर! मुझे कामिल यकीन है कि ऐसा कभी नही होगा। मलकाये मौज्जमा होकर भी मैं तुम्हारी पूरी खिदमत करूँगी। इस बात का इत्मीनान रक्खो।

छत्रसाल—नही सम्राज्ञी! इन चीजो में मै कोई लाभ या आकर्षण नही देखता। सारयुक्त आध्यात्मिकता को छोडकर, ऐसी थोथी भौतिक मृग-तृष्णा अर्थात् शेखचिल्लीपन की विषैली वासना से मै दूर ही रहा

करता हू । मुझ से आपका कार्य सिद्ध नही होगा ।

मुम्ताज—इससे तुम को किसी तरह का नुक्सान नही होगा, बहादुर ! मैं खुद कलाम-पाक की कसम खाकर इस बात का जिम्मा लेती हूँ । खुदा ने औरत, मर्द दोनो को एक-दूसरे का पूरक बनाया है । लिहाजा उनके लिए लाजिम यही है कि मिल-जुलकर रहे और शर्बते-वस्ल पीयें ।

छत्रसाल—किन्तु मेरी इस कमी को तो ईश्वर ने किरणमयी से पूरा कर दिया है, सम्राज्ञी ! और श्रीमती की कमी को पूरा कर दिया है सम्राट् शाहजहाँ से ? अत: यह पशुपन की प्रवृत्ति ईश्वर के साथ भी विश्वासघात है सम्राज्ञी बेगम ! मनुष्य की तो बात ही क्या ? यही कारण है कि मुझे यह प्रस्ताव जिससे ऐश्वर्य नियम, समाज की व्यवस्था, और मनुष्यत्व की मर्यादा का भजन होना हो और इसके साथ ही मनुष्य को पशुत्व से ऊँचा उठाकर फिर उसी गर्त मे गिराया जाता हो, किसी अवस्था मे भी मान्य नही है, सम्राज्ञी !

मुम्ताज—शाहजहाँ के हरम मे मेरे अलावा और कितनी ही बीविया भी तो मौजूद हैं । जब मर्द होकर वह खुदा के साथ गद्दारी कर सकता है तो फिर मेरे औरत होकर, करने मे क्या हर्ज है ?

छत्रसाल—किन्तु सेवक के महल मे तो एकमात्र किरणमयी ही है और जब उसने अपना अमूल्य मन-माणिक, नही-नही, अपना सर्वस्व तक मुझे सच्चे दिल से सौप दिया है तो, यह मुझे कहा तक उचित है कि मैं उसके साथ विश्वासघात करू, सम्राज्ञी ? यदि श्रीमती को अपने दैव-तुल्य पति से कोई शिकायत है तो वे अपना जैसा कोई दूसरा व्यक्ति टटोले, किन्तु मुझे अपनी पत्नी से कोई शिकायत नही, फिर मै किसी अन्य स्त्री की कामना क्यो करू ? और इस पर भी वह अन्य स्त्री हो सम्राज्ञी ! नही ! कदापि नही !! तुम्हारे बैल हमारे भैंसा, हमारा-तुम्हारा साझा कैसा ?

मुम्ताज—तो क्या आपका मतलब है कि ... ?

छत्रसाल—हाँ, सेवक अपने सयम को तोडकर किसी भी अवस्था मे इस घृणित प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिये तैयार नही है। अपनी शुद्धता के लिए नही तो अपनी पत्नी की शुद्धता के ही लिये सही, औचित्य इसी बात में है। यदि ऐसा किया गया तो क्या सम्राट् के घर का अनुकरण मेरे घर में नही होगा ?—होगा और जरूर होगा। क्योकि दुराचारी पुरुषो की स्त्रियाँ सती तथा पतिव्रता नही हुआ करती और न सयमी पुरुषो की व्यभिचारिणी। यही कारण है कि सम्राट् की वासना को होड देने के लिये आज स्वय सम्राज्ञी प्रस्तुत हुई हैं। यह अपने-अपने सिद्धान्त तथा तदाधारित आदर्श की बात है। ससार मे सभी स्त्री-पुरुष तो एक से नही है। इसी पृथ्वी पर शाहजहाँ के समान विलासी जीव भी है और इस सेवक के समान सयमी भी। प्रत्येक व्यक्ति के साथ सच्चरित्रता के विचार से अपने-अपने भिन्न-भिन्न धर्म-सिद्धान्त हैं और उनमे भी अपने-अपने विभिन्न दृष्टिकोण को लिये हुये विभिन्न आदर्श। मुगल सम्राट् के साथ उनका बहुपत्नीवादी—विषय-लोलुपता के दृष्टिकोण को लिये हुए—मुगल आदर्श है तो इस राजपूत के साथ न्याय, सत्य, सयम और त्याग के दृष्टिकोण एव सिद्धात को लिए एकपत्नीवाद का महत्तम क्षात्र आदर्श है। आपको अनुरागमयी अपनी भौतिक सभ्यता पर नाज है तो मुझे त्यागमयी अपनी आध्यात्मिक सभ्यता का अभिमान है।

मुम्ताज—मर्द हर तरह के ऐबो से भरे होते है मगर बना करते हैं फिर भी सुर्खरू। मै जानती हूँ तुम मुझे झुकता देखकर इस बात का नाजाइज फायदा उठाने के लिये अपने बडप्पन की धौस जमा रहे हो, बहादुर ? खैर, कोई बात नहीं। मै इसके लिए भी तुम्हे माफ कर दूँगी; क्योकि मै तुम पर मरती हूँ, तुम्हारी शख्सीयत पर जी जान से फिदा हूँ और इस नाते अपने दिलदार पर सब कुछ कुर्बान कर सकती हूँ। साफ बोलो, मर्तबा चाहते हो क्या ? मै शाहन्शाह की लौडी नही हूँ, शाहन्शाह

मेरा गुलाम है। लिहाजा मै तुम्हे सारे आलम का ताजोतख्त भी अता कर सकती हूँ। जरा मेरे होकर देखो तो सही।

छत्रसाल—किन्तु राजपूत अधर्मपूर्वक तीन लोक की वसुधा को भी लेने पर तत्पर नही हुआ करते, बेगम! इस पर भी दान ग्रहण करना तो उनके धर्म ही मे नही है और वह दान भी एक चरित्र-हीना स्त्री का? क्षमा कीजिये सम्राज्ञी! आप अपनी दौलत को अपने ही पास रखिये। हमे हमारे निर्धनता के टुकडे उससे लाख गुना बेहतर हैं।

मुम्ताज—तुम मेरी बेबसी को देखकर भी मेरे साथ मजाक कर रहे हो, राजपूत?

छत्रसाल—इतनी गम्भीरतापूर्वक मैंने अपना आदर्श किसी के सम्मुख व्यक्त ही नही किया, सम्राज्ञी!

मुम्ताज—तो क्या राजपूतो के दिल नही होता या उनके दिल मे मुहब्बत का जज्बा ही नही होता?

छत्रसाल—यह सब कुछ होता है, सम्राज्ञी! किन्तु धर्माधर्म का सुविचार करके।

मुम्ताज—मै तुम्हारे लिए सब कुछ करने को तैयार हूँ फिर भी मेरा कुछ खयाल न करोगे क्या, बहादुर!

छत्रसाल—आप से पूर्व मुझे अपने धर्म का ध्यान रखना पडेगा सम्राज्ञी! मेरा धर्म मुझे अपने उच्च राजपूत आदर्श और अपने महान् पूर्वजो के गौरव तथा सम्मान-रक्षा की आज्ञा देता है। अतः मैं सौदागरी की वैश्य-वृत्ति के प्रतिकूल अपने क्षात्र आदर्श पर ही अटल रहूँगा, चाहे कुछ भी क्यो न हो।

मुम्ताज—और इस बात का भी खयाल नही है कि मैं तुम्हारी शरण में आ रही हूँ और मुझे जो कुछ हुक्म करो वह करने का वायदा करती हूँ। शरण आने का मान तो रखना ही चाहिये, बहादुर!

छत्रसाल—पथभ्रष्ट और अधर्मी व्यक्ति के बलिदान एव याचना का

भी कोई मूल्य नही हुआ करता, सम्राज्ञी !

मुम्ताज—तो, तुम मेरी अर्ज़ कबूल न करोगे, राजपूत ! क्यो ?

छत्रसाल—नही कदापि नही, बेगम ! अन्यायपूर्ण इच्छा तो सम्राज्ञी की भी पूरी नही होगी ।

मुम्ताज़—मुम्ताज एक अदना औरत की हैसियत से जनाब से भीख देने की फरमाइश नही कर रही और न उसे ज्यादा हकीर होने की ज़रूरत ही है । जब तक मुगल तलवार मे दम है और मेरी हिफाजत पर वह तलवार है, तुमको मेरी ख्वाहिश पूरी करनी ही होगी । तुम से तुम्हारी खिदमात, मै एक बादशाह की बेगम की हेसियत से, एक सामन्त का शाही खिराज समझकर हासिल करूँगी ।

छत्रसाल—मै इस अनुचित प्रस्ताव का एक राज-विद्रोही होकर भी विरोध करूँगा, सम्राज्ञी ! कारण कि यह माँग सरासर न्याय की हत्या है और यदि न्यायाधीश ही अन्याय करने लगे तो फिर न्याय की रक्षा कौन करेगा ? राजा के अन्यायी होने पर प्रजा को पूर्ण अधिकार है कि वह न्याय को अपने हाथ मे लेकर, उस अनुचित प्रथा के मिटाने के लिये समस्त सम्भव प्रकार से राजा का विरोध करे और बता दे कि प्रजा ने न्याय-रक्षार्थ ही शक्ति राजा को सौपी है अन्यथा उसकी वह शक्ति उसी के पास सुरक्षित है ।

मुम्ताज—मुम्ताज की ख्वाहिश को पूरी न करना गोया मौत को मदऊ करना है, बहादुर ?

छत्रसाल—मृत्यु की धमकी हम राजपूतो को कर्त्तव्यच्युत नही कर सकती । सम्राज्ञी को ज्ञात हो कि राजपूतो ने मृत्यु के स्वरूप को बड़ी अच्छी तरह से पहचाना है और वे उसका आलिंगन करने के लिये सर्वदा तत्पर रहते है । ससार की ऐसी कोई शक्ति नही, जो मृत्यु का भय दिखा कर उन्हे कर्त्तव्यच्युत करा सके । वह शक्ति चाहे स्वय सम्राट् की ही क्यो न हो । राजपूत होते हैं धर्म और आदर्श के प्रतिपालक । सिद्धान्त-प्रिय

अथवा सत्यप्रिय होने के कारण वे वैश्यो की भाँति सौदागरी नही किया करते, केवल प्राण का जुआ खेला करते है। वे यदि किसी से डरते भी है तो केवल न्याय, धर्म, सत्य और परमेश्वर से, अन्य किसी से नही।

मुम्ताज़—शै पाकर तुम इस कदर बढबढकर बाते करते हो? छोटा मुँह और बडी बात! मगर याद रक्खो कि तुम को दो मे से एक चीज ज़रूर दी जायगी—मेरा प्यार या तुम्हारी मौत। बोलो! इन दोनो मे से तुम कौन-सी चीज पसन्द करते हो, खूब सोचकर जवाब दो।

छत्रसाल—मौत! मौत!! खूब सोच लिया, मौत!!! यदि सम्राज्ञी मे देने की शक्ति है तो मौत दे। राजपूत मौत से खेलने को सदा तैयार रहते हैं।

मुम्ताज़—अच्छा मौत! मुरादन! अरी ओ मुरादन!! जा, आला-हजरत को जल्द बुला कर ला, जो इस राजपूत को वाजिब सजा दे। इसने मल्काये मौज्जमा हुज़ूर पुरनूर मावदौलत को बद-नजर से देखकर उनकी बेइज्जती की है। शाहशाह आलम की बुलन्दी को ज़क पहुँचाकर ख्वार करने की कोशिश की है। इधर क्या देखती हो, जाओ! जल्दी जाओ!! फौरन जाओ!!!

इसी समय एक व्यक्ति पीछे की झाडी मे से निकला और आगे से मुरादन का मार्ग रोकता हुआ उसे डाट कर बोला, "ठहर लौडी, अगर एक कदम भी आगे बढाया तो अभी सर धड से अलग कर दूँगा।"

मुरादन उस तेज आवाज को सुनकर भय से थर-थर काँपने लगी और घबराकर अनायास ही कोर्निश की दशा मे उसके पैरो पर गिर पडी।

उस युवक को देखकर मुम्ताज़ का शरीर लज्जा, ग्लानि और भय से काँप उठा और एक चीत्कार उसके मुँह से अकस्मात् ही निकल गई। बूँदी-नरेश ने भी उस नवयुवक को यथोचित सम्मान दिया। इसके पश्चात् वह युवक कुछ नम्र होकर क्षोभ से मुँह बिगाडता हुआ बोला, "अम्मीजान! आपका यह चलन! अफसोस! सद्अफसोस!! खैर, आप

को माँ समझकर इस वक्त मै कुछ कहना नही चाहता। मगर यह मत समझना कि मैंने कुछ सुना नही। सारा हाल देखा है और सभी कुछ सुना है। मगर मै इस वक्त तुम्हारी इससे ज्यादा रुसवाई करना ठीक नही समझता। हाँ, मगर इस बात का ध्यान रखिये कि अगर बूँदी महाराज को तुमने मुफ्त मे बदनाम करने की कोशिश की तो, तुमको हद से ज्यादा जिल्लत उठानी पडेगी। जाओ, सीधी तरह से अपने हरम में चली जाओ।"

खडी-खडी मुम्ताज़ एक महान् अपराधी की भाँति सिर नीचा किये हुए अपने पैर के अँगूठे से भूमि को कुरेदती रही।

इसके पश्चात् वह वीर युवक छत्रसाल की तरफ मुडा और उनके कन्धे पर हाथ रखकर बोला, "बूँदी-महाराव साहब! आप अज़ीमोश्शान हैं। आपके वसी ख्यालात होने का तो मुझे पहले भी यकीन था और इसी नाते मै जनाब को और दूसरे सरदारो से ज्यादा ताज़ीम देता था, मगर यह इल्म मुतलक नही था कि आप कयास से भी इतने ज्यादा अजीमोश्शान होगे। आइये! मेरे साथ आइये!! किसकी ताब है कि शाहजादा दाराशिकोह और उसके हाथ में उसकी तलवार के रहते, आप जैसे दरिया-दिल बहादुर की तरफ कोई आँख उठाकर देखने का हौसला भी कर सके।"

इतना कहकर वह युवक महाराव छत्रसाल को अपने साथ लेकर चल दिया और अपने महल की तरफ को रवाना हो गया।

पाठक! अब आप इस नवयुवक से परिचित हो गये होगे। यह सम्राट् शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र और साम्राज्य के युवराज शाहजादा दाराशिकोह हैं। अपने पिता के अत्यन्त लाडले और आमेर आदि राजपूत नरेशो के अत्यन्त कृपा-भाजन होने के कारण, ये साम्राज्य मे इतने प्रभावशाली व्यक्ति है कि दुनिया में इनकी आज्ञा को कोई नही टाल सकता। स्वय सम्राट् शाहजहाँ ने भी इन्हे कतिपय अधिकार सम्पूर्ण रूप से सौप

रक्खे हैं और वे प्रत्येक राज्य-कार्य मे श्री सम्राट् का हाथ बटाया करते हैं। वही युवराज दाराशिकोह आज बूँदी-नरेश की सच्चरित्रता-पूर्ण घटना को स्वय अपनी आँखो से देखकर, उनके व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित हुये हैं और विशेष रूप से उनकी ओर आकर्षित होकर, उन्हे असाधारण सम्मान देने का निश्चय कर चुके हैं।

सत्रहवाँ परिच्छेद्

"बूँदी-महाराव साहब ! आपकी बहादुरी, दलेरी और हिम्मत काबिले-दाद है और काबिले-तारीफ है जनाब की सती बीवी राजकुमारी किरणमयी की पाकीजगी। हम आप दोनो की, नमूना होने के नाते, कदर करते है।

"यह सम्राट् की उदारता एव गुणग्राहकता है, नही तो हम पति-पत्नी केवल सामान्य स्त्री-पुरुष हैं।"

"जो शौहरत आप लोगो ने अपने आला इम्तहानो मे कामयाब होकर हासिल की है वह मामूली नही, निहायत नायाब है। हमारे दिल में तुम लोगो की बडी इज्जत है।"

"सम्राट् महोदय ! यदि सेवक मे कोई महानता है भी, तो वह भी श्रीमान् की ही अनुकम्पा के कारण है।"

"नही, नही, हम तुम दोनो शौहर-बीवी की शख्सियत को अपनी शख्सियत से भी आला और अफजल समझते हैं। तुम जैसा दुनिया में कोई नमूना नही है, तुम्हारी औरत भी, औरत-जमात मे इस तरह है जैसे तारो में चाँद।"

"खुदावन्द ! हम बूँदी महाराव साहब व उनकी रानी साहिबा के किसी तरह बदख्वाह नही है। मगर खुद हिन्दुस्तान के बादशाह के मुँह से अपने एक मामूली सामन्त की इस तरह की तारीफ नही सह सकते, क्योकि यह इन्सानियत और बादशाहत दोनो की तौहीन है।"

"क्या तुम्हारी नजर मे महाराव छत्रसाल की दलेरी और बहादुरी मे और उनकी रानी की पाकीजगी मे काबिले-तारीफ, गैरमामूली व अजीबो-गरीब बात नही ?"

"ठीक है, इसके लिये बादशाह ने खिलअत बख्श दी है, और भी कोई ऊँचे से ऊँचा इनाम दे सकते हैं, मगर खुद भाँड बनकर उनकी विरद तो नही बखान सकते। अगर ऐसा होगा तो दीगर सामन्तो पर इसका क्या असर पडेगा ?"

"क्या गैर-मामूली सिफ्त की तारीफ करना इन्सान की खासियत मे नही है ?"

"क्या खुदावन्द राजकुमारी किरणमयी को गैरमामूली औरत समझते हैं ?"

"क्या वह पाकीजगी मे दुनिया-भर की औरतो में आला व अफजल नही है ?"

"क्या कहा जा सकता है, बन्दा परवर ! शास्त्र बतलाता है कि स्त्री का चरित्र और पुरुष का भाग्य देवता भी नही जानते, मनुष्य की तो बात ही क्या है ?"

"तो क्या तुमको किरणमयी के सती होने मे भी कोई सदेह है ?"

"आजकल सती औरते दुनिया में पैदा ही नही होती, खुदावन्द ! इसमें जरूर कुछ न कुछ राज छिपा हुआ निकलेगा। मुमकिन है कि हाथी के दाँत खाने के और, और दिखाने के और निकलें। अल्लाह ही जानता है—

जिसको ताबे-उम्र लगी हो न हवा,
ऐसा दुनियाँ मे कोई शिजर ही
ऐश इशरत का लाहक व ख्वाहिश न हो
जिसे, ऐसा जहाँ में बसर ही नही ॥

"तो क्या तुम्हारा यह ख्याल है, शेरशाह ! कि उसका सतीत्व महज़ दिखावा या ढोंग है ?"

"हाँ, खुदावन्द ! महज ख्याल ही नही, कामिल यकीन है।"

"सम्राट् ! यह मेरी पत्नी की ज़ात पर खुला आक्रमण है। मैं इसे कदापि सहन नही कर सकता।"

"जहाँपनाह ! मेरा यह दावा है कि आजकल के ज़माने में सती होना मुमकिन ही नही है। सिर्फ मक्कार औरते अपने भोले मर्दो को महज छिनरघघोटे दिखाने के लिये ही इस तरह के दिखावटी स्वाँग रचा करती है।"

"मै अपनी पत्नी के विषय मे पूर्ण विश्वास के साथ कह सकता हूँ, कि वह सती है।"

"माफ कीजिये, महाराव साहब ! आपकी औरत की यह महज मक्कारी है, सत-वत कुछ नही है। इस तरह की मक्कार औरते महा बदमाश हुआ करती है, जो अपने बुद्धू शौहरो को इसी तरह उल्लू बनाकर उँगलियो पर नचाया करती है।"

'नवाब रुहेला ! इस प्रकार हमारे अपमान का आपसे पूरा बदला लिया जायगा। आप अकारण ही एक हाडा राजपूत से भिडने चले हैं।"

"कोई बात नही। यह पठान भी नही डरता। पर यह यकीन कामिल है कि आजकल की औरते सती नही हो सकती। यह मै दावे के साथ कह सकता हूँ कि इसमें उसकी ज़रूर कुछ मक्कारी होगी।"

"और मैं भी यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि मेरी पत्नी परम सती है।"

भरे दरबार में शाहजहाँ द्वारा छत्रसाल और किरणमयी के बारे में प्रशंसात्मक वार्तालाप सुनकर, आपे से बाहर हुए नवाब रुहेला शेरशाह का, बून्दी-नरेश छत्रसाल ने सरोष कड़ा विरोध किया, तो शाहजहाँ ने व्यवस्था भंजन का विचार करके, उनके वार्तालाप में हस्तक्षेप करना

ही उचित समझा और उन दोनो को चुप करके कहा :—

"महाराव छत्रसाल, व नवाब शेरशाह ! आप दोनो को इस दरबार मे, इस तरह झगडने की जरूरत नही। जब तुम दोनो अपने-अपने दावे पर साबित-कदम हो तो क्यो न तुम्हारी शर्त कायम रहे, जिसको पूरा करना तुम दोनो मे से हर फरीक का काम हो।"

"बन्दा शर्त के लिए हमेशा तैयार है, जहाँपनाह ?"

"तो मैं भी शर्त से नही घबराता सम्राट् !"

"जब आप दोनो शर्त को मँजूर करते हैं, तो यह भी बतलाइये कि अपनी-अपनी शर्त के लिए क्या-क्या कुरबानी देने को तैयार है, यानी दाव पर क्या-क्या लगाना चाहते हैं ?"

"मैं अपनी पत्नी की पवित्रता को सिद्ध करने के लिए अपना प्राण भी दे सकता हूँ।"

"मै भी अपनी बात की सचाई को साबित करने के लिए अपनी जान को कुछ भी नही समझता, बन्दानवाज !"

"अच्छा शेरशाह, तुमको एक माह का मौका दिया जाता है कि तुम राजकुमारी किरण को असती साबित कर दो, तो महाराव छत्रसाल अपना सर शर्त के माफिक उतरवा देंगे और अगर तुम खुद नाकामयाब रहे तो तुम्हारा सर धड से अलग कर दिया जायगा। क्या यह शर्त तुम लोगो को मजूर है ?"

"शेरशाह इस शर्त को जरूर मजूर कर लेंगे, सम्राट् !"

उक्त शाहजहाँ, शेरशाह और छत्रसाल की शर्त-सम्बन्धी बातचीत में शामिल होकर आमेर-नरेश से कहा।

शेरशाह—हाँ, मुझे यह शर्त पूरी तरह मजूर है ?

छत्रसाल—मुझे भी अपनी पत्नी की प्रतिष्ठा की रक्षा में अपना प्राण देना स्वीकार है।

शाहजहाँ—बस, तो एक माह तक महाराव छत्रसाल बूंदी न जाकर

यही हमारे नजदीक रहेगे और इस शर्त के दौरान मे अपनी रानी के साथ न कोई ताल्लुक रख सकेंगे और न लिखा-पढी कर सकेंगे। शेरशाह कल से ही शर्त पूरी करने के काम मे मशगूल हो जायँगे और एक महीने के अन्दर-अन्दर अपनी शर्त पूरी करके लाएगे। अगर ये शर्त पूरी करने में नाकामयाब रहे तो एक शरीफ औरत की बेइज्जती करने के कुसूर मे सूली के मुस्तहक होगे।

'मजूर है' कहकर शेरशाह सिर नवाकर दरबार से कार्य पूरा करने के विचार से उठकर चले गये। बूदी-नरेश भी अपने निश्चित स्थान के लिए प्रस्तुत हो गये।

इसके पश्चात् शाहजहाँ, आमेर-नरेश और तहव्वर खाँ मे परस्पर निम्न प्रकार से वार्तालाप होने लगा :—

आमेर-नरेश—धन्य सम्राट्! वास्तव मे इस पारस्परिक द्वेष और साम्प्रदायिक विप्लव को मिटाने के वास्ते अत्यन्त सरल एव सुन्दर विधान श्री सम्राट् ने प्रस्तुत कर दिया।

तहव्वर खाँ—दरहकीकत बन्दा परवर! अगर जहाँपनाह ने इस नेक तदबीर से यह झगडा न मिटाया होता, तो आज सल्तनत मे तूफान ही बर्पा हो जाता।

शाहजहाँ—यह मामला और भी दिलचस्प है। क्योकि बहुत से लोग औरत की पाकीजगी के कायल हैं, मगर बहुत से कहते है कि आजकल कलयुग में औरतो का पाक-अस्मत होना मुम्किन ही नही है। इस शर्त से अव्वल तो यह मसला हल हो जायगा कि औरत जात कहाँ तक पाक है। दूसरे शेरशाह और छत्रसाल के आपसी अरमान भी निकल जायँगे। तीसरे यह झगडा जो कि फिरकेदाराना फिसाद मे बदल जाना मुम्किन था, वह भी ठण्डा हो जायगा।

तहव्वर खाँ—वाह! वाह!! क्या आला दिमाग है, खुदावन्द का। इसी नियामत को हासिल करके तो हुजूर सारे जहाँ की सल्तनत कर

रहे हैं। तुर्रा यह कि इन्साफ करते हैं जो दूध का दूध और पानी का पानी हो जाय।

आमेर-नरेश—सम्राट् अकबर जैसे बुद्धिमान् नरपति के पौत्र श्री सम्राट् शाहजहाँ मे इन गुणो का होना स्वाभाविक ही है मन्त्री ?

तहव्वर खा—क्योकि शाहन्शाह अकबर के नायब और सलाहकार रहे, आमेर-नरेश मार्नासह साहब और खुदावन्द के सलाहकार हैं उनके फरजन्द महाराज जगतसिंह साहब, तब ऐसा क्यो न हो ?

इसके अनन्तर शाहजहाँ ने अपना दरबार समाप्त कर दिया और वे अन्दर चले गये। सरदारगण भी अपने-अपने डेरे की ओर रवाना हो गये।

अठारहवाँ परिच्छेद

सायंकाल का समय है और असौज का महीना है। वर्षा-ऋतु समाप्त होकर अपना स्थान शरद-ऋतु को देती जा रही है। मन्द-मन्द सर्दी पडने लग गई हैं। यह मास बूँदी नगर के लिए प्राय बडी सजधज और दर्शनीय दृश्यो से परिपूर्ण प्रदर्शनो के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का दशहरा-महोत्सव बडे ज़ोर-शोर से हुआ करता है और जनता उसे देखने के लिये अत्यन्त उत्सुक रहा करती है। किन्तु अबकी बार यह दशहरा-उत्सव बूँदी नगर मे नही होगा। कारण कि, सम्राट् द्वारा किसी विशेष कार्य पर नियुक्त हो जाने से अबकी बार जनता के हृदय-पुष्प बूँदीपति महाराव छत्रसाल जी अपने नगर मे न आकर राजधानी मे ही रहेगे। जिस प्रकार विदेश गये पति की पत्नी शृगारो से शून्य हुआ करती है, वही दशा आज बूँदी नगरी की हो रही है। वह सूनी-सूनी लग रही है। व्यापारियो के दिलो मे भी कोई विशेष उत्साह नही है, किन्तु फिर भी नगरी की एक सराय मे बडी चहल-पहल है। सराय के प्रबन्धक तथा सरक्षक आदि कर्मचारी बडे प्रसन्न प्रतीत हो रहे हैं। कारण कि एक बहुत बडे मालदार सौदागर ने आकर कई दिनो से इस सराय में डेरा जमाया है। कई कमरे अपने अधिकार मे कर रखे हैं। नौकर-चाकरो के बडे अमले के साथ वह यहाँ आकर ठहरा है। इसके अतिरिक्त जिस किसी बूँदी-नगर-निवासी को वह ज़रा मनचला और रगीन तबियत का देखता है, उसे तत्काल अपने अमले मे शामिल कर

लेता है और इन लोगो पर धन इस कदर इफरात और खुले दिल से व्यय कर रहा है, मानो उसकी नजर मे उसका कोई मूल्य ही न हो। गरीब बूँदी की जनता उस धनाढ्य सौदागर के चकाचौध मे डालने वाले चमत्कारो को देखकर कुछ उसकी तरफ खिचती तथा प्रभावित-सी होती जा रही है। सराय के प्रबन्धक और नौकरो को तो इसने इतना धन खिलाया है कि उनमे से कुछ का तो भाग्य ही पलट गया है। जो उपलब्धि स्वय महाराव छत्रसाल जी की अनुकम्पा से भी कठिन बनती, वह इस दूर देश के सौदागर के कारण अत्यन्त सुलभ हो गई है। सराय वालो ने भी सौदागर की प्रत्येक सुख-सुविधा का प्रबन्ध कर दिया है। सौदागर महाशय का डेरा एक झाड-फानूस से परम सुसज्जित हण्डो के तेज़ प्रकाश से जगमगाते हुये कमरे मे है। उसमें अन्य आवश्यक वस्तुओ के साथ-साथ कई आराम-कुर्सियाँ भी पडी हुई हैं। ये कुर्सियाँ एक बडी मेज़ के चारो तरफ सजा दी गई हैं। उनमे से एक मध्यवर्ती कुर्सी पर सौदागर महाशय विराजमान हैं। सामने की एक दूसरी कुर्सी पर उनका एक सहकारी या मुसाहिब बैठा हुआ है। इन दोनो मे किसी गुप्त एव रहस्यमय विषय पर वार्तालाप, विचार-विनिमय तथा तर्क-वितर्क हो रहा है। दोनो व्यक्ति सामने पडी हुई मेज पर कभी एक और कभी-कभी दोनों हाथ मारकर किसी गहन समस्या के सुलझाने का प्रयत्न करते जान पडते हैं।

पाठक ! अब तनिक इन लोगो के वार्तालाप के शब्दो पर भी ध्यान दीजिये :—

"हम लोगो को यहाँ झक मारते हुये बीस दिन गुजर गये, मगर काम मे अभी तक कामयाबी की कोई सूरत नजर नही आ रही। हिन्दोस्तान की सबसे होशियार कुटनी नसीबनजान को बहुत बडे महनताने पर लाकर काम में जुटाया गया है। मगर वह भी रोज सुबह जाकर शाम को वापस आ जाती है और मामला वही का वही लटका

रह जाता है। अगर मुझे पहले ऐसा मालूम होता तो मैं इस पचडे में क्यो पडता।

"यह काम तो वाकई बहुत तगडा हाथ मे लिया गया है, हुजूर! क्योंकि सुनने मे आया है कि वह औरत तो सिवाय अपने खाविंद के और किसी दूसरे शख्स का मुँह तक भी नही देखती है और न अपना मुँह किसी दूसरे मर्द को दिखाती ही है। मगर खुदा का इतना शुक्र है कि अपने साथ कुटनी नसीबन जान भी अपने फन की पूरी ही माहिर है। शाहजादे और शाहजादियो को तो वह कठपुतली की तरह हाथो पर नचाती है। कुछ न कुछ काम तो वह जरूर ही बनाकर रहेगी।"

"क्या किया जाय? अगर जान बचाने का सवाल न होता, तो ऐसी लामिसाल पाकीज़ा औरत के ऊपर शर्त पूरा करने की कोशिश कभी नही करता। मगर दुनिया मे जान से प्यारी भी तो कोई दूसरी चीज़ नही है। उसे बचाने के लिये तो नेको-बद सभी कुछ करना पडता है। जब तो मजाक-मज़ाक मे शर्त कर ली, अब उसके पूरा करने के वक्त जान के लाले पड रहे है।"

"मेरे खयाल से तो हुज़ूर, बिना किसी मकरो-फरेब को इस्तेमाल मे लाये, जान बचना मुश्किल है।"

"नसीबन से ज्यादा मकर-फरेब हम लोग समझ ही कब सकते हैं? वह बडी पुरकार कुटनी है। उसके बराबर चतुर और चालाक औरत और कही दूसरी है ही नही।"

"मगर महल में रानी के सामने पहुँच कर भी अभी उसने कोई काम नही किया है। अगर वह भी नाकामयाब रही, तो बस दाता ही बेली है।"

"इस मामले मे दौलत पानी की तरह बहाई जा रही है। पर अभी तक कोई नतीजा निकलने की सूरत नही। इतनी दौलत से तो रियासते तक खरीदी जा सकती हैं। लाखो की रकम तो इस कुटनी पर ही उलट

पलट कर गारत हो गई है।"

"अजी सरकार ! दौलत की कौन चलाई; मामला जान-जोखम का है ? हाथियो के सौदे भी कही टके की साई से हुआ करते हैं ?"

इसी समय सामने पालकी मे से उतर कर एक स्त्री ने कमरे में प्रवेश किया। इस स्त्री की वेश-भूषा और पोशाक शाही बेगमो जैसी जर्क-बर्क और बहुमूल्य है। रेशमी साडियो पर गोटा-किनारी, तारकशी और विचित्र हस्तकला का काम हो रहा है। हीरा, पन्ना और रत्नो से जडे हुये सुवर्णाभूषण धारण किये हुये है। गौर वर्ण, नखशिख सुन्दर, शरीर खूबसूरत, पुररौनक, रौबदार और पुर-जलाल है। नेत्र चचलता से चलने वाले बडे और सुन्दर एव हँसते समय गोल-गोल गुलाबी गालो पर पड जाने वाले गड्ढे उसके रूप को और भी अधिक आकर्षक बना रहे हैं। आयु मे वह लगभग पच्चीस-तीस वर्ष की होगी किन्तु चेहरे के सुडौल, भडकीले और तेज-पूर्ण होने के कारण उसकी आयु बीस से अधिक नही जँचती। बडी नजाकत से फूँक-फूँक कर कदम रखने वाली अल्लहडता को लिये हुये है, देखने मे ऐसी लगती है मानो मुम्ताज बेगम का प्रतिरूप हो। उसकी पालकी पर जो कहार काम कर रहे हैं उनकी वर्दी और पोशाक भी बादशाह के शाही सैनिको के समान है। पालकी को भी जरदोजी और तारकशी के काम से ज़र्क-बर्क और अत्यन्त दर्शनीय ढग से सजाया हुआ है। उस पर बारीक-बारीक रंग-बिरगे रेशमी पर्दे पडे हैं। इन पर्दों की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि, बारीकी के ख्याल से इनमे कमाल करके दिखाया हुआ है। कारण कि, इनमें होकर, पालकी मे बैठी स्त्री के सुन्दर वस्त्राभरण तथा रत्नजटित बहुमूल्य आभूषण एव उनसे सुसज्जित उसके कमनीय अवयव साफ दिखाई देकर दर्शको के दिलो को उसके वैभव से दग कर देते हैं। उस बेपर्दगी के पर्दे को देखकर, देखने वालो के दिल में भाँति-भाँति के खयाल पैदा होने लगते हैं।

पालकी में से सुन्दरी उतर कर सौदागर को आदाब करती तथा मुसकराट के फूल बखेरती हुई कमरे के अन्दर आ गई और एक खाली कुर्सी पर बैठ कर, सौदागर को भेद-भरी दृष्टि से देखने लगी। सौदागर भी उसकी मनमोहनी निगाहो का अध्ययन बडी शान्ति और गम्भीर मुद्रा से करने लगा। इसी समय सौदागर के मुसाहिब द्वारा छेड-छाड़ किये जाने पर कमरे की खामोशी भँग हुई और निम्न प्रकार हँस-मुस्करा कर बाते होने लगी जिससे कमरा गूँजने लगा।

"क्यो बडीबी, गरीबो की तरफ नजरे इनायत तक भी न हुई ?"

"खामोश ! तुम जैसे छोटे ग्रुमाशतो के साथ बातचीत करना, बेगम राहतजान अपने लिये हतक इज्जत का बायस समझती है।" वह स्त्री मुस्करा कर बोली।

"यह बेगम राहतजान क्या बीमारी है, नसीबन जान।"

"माबदोलत हैं बेगम राहतजान, शाहन्शाह आलम शाहजहॉ की दूसरी बेगम। जरा ढग से बाते करना। खबरदार ! अदब कायदा होशियार !!"

"शाहजहाँ की दूसरी बेगम ! इसका क्या मतलब नसीबन ? और पहली बेगम कौन है ?"

"अमा, शाहजहॉ की पहली बेगम मुम्ताज महल है और दूसरी बेगम है, माबदौलत यानी राहतजान। अब भी नही समझे।"

"नसीबन ! मै तेरी इन राजभरी बातो को ज़रा भी नही समझा।"

"अमा मिठाई खिलाओ, मिठाई। अगली बात पीछे पूछना।"

"यहाँ मिठाई मे भी क्या कुछ घाटा है, क्यो ! क्या कोई कामयाबी का रास्ता निकल आया ?"

"जो कुछ कामयाबी का नक्शा आज तैयार हुआ है, यही बस कुछ-कुछ कामयाबी का तरीका है। इससे आगे तो कामयाबी की गाडी बढती ही नही है। इसको इस मामले की इब्तदा और इन्तहा यानी आखरी

ख्याल करना चाहिये। इस मे आगे बढने की गुंजाइश नजर ही नही आ रही है। इस नक्शे पर जितना काम मुझ से आज हुआ है उतना शायद जिन्दगी भर मे कभी होगा भी नही। मुझ से क्या, इस बारे मे किसी से भी आगे कुछ नही हो सकता। जनाबमन ! इतना ही गनीमत समझले कि जान बचाने का आखिर यह छोटा-मोटा तरीका निकला तो सही।"

"किसी से कभी नही होगा, गोया दुनिया की अक्ल की तुम्ही ठेकेदार हो।"

"हाँ जनाब, इसमें शक भी क्या है ? नसीबन नसीबे की बडी तेज़ है।"

"छोडो इन बातो को, पहले यह बताओ कि तुम क्या कर आई हो ?"

"मै एक तजवीज लेकर राजमहल मे गई और वहा पर सभी काम उसके माफिक हो गया।"

"वह तजवीज क्या है और उसमे कामयाबी की सूरत किस तरह नजर आती है। इन सारी बातो को ज़रा साफ-साफ खोलकर कहो। किसी तरह जान तो बचे, अब तो यही चिन्ता है। रहा सवाल इनाम का, सो वह तो तुमको इतना मिल जायगा कि मालामाल हो जाओगी।"

"मैं दस दासियाँ लेकर महल मे गई और अपने आप को शाहजहाँ बादशाह की बेगम राहतजान मशहूर किया और साथ ही महाराव छत्रसाल को अपना धर्म-भतीजा तसव्वुर करके उनकी धर्म-बुआ होने का भी दावा किया। अपने उन एहसानात पर जो महाराव छत्रसाल पर बन्दी की जानिब से हुए पुरअसर तरीके से रोशनी डाली। जैसे कासिमखा की गिरफ्तारी पर शाहन्शाह को इतना गुस्सा आ गया, कि वे बून्दी की ईंट से ईंट बजाने को तैयार हो गये तो बन्दी ने ही उन्हें समझा-बुझाकर बून्दी के साथ सुलह करने पर जोर दिया। दूसरे जब आमेर-नरेश और शेरशाह किरण के झपटने की तजवीजे बाध रहे थे और आला हज़रत को भी अपनी तरफ तोड लेना चाहते थे तो, बन्दी ने ही

स्वयवर की लडाई के नतीजे पर शादी कराने का मशवरा दिया। तीसरे जब छत्रसाल स्वयवर की लडाई जीतकर एक फकीर की शक्ल मे जाहिर हुये तो शाहन्शाह ने फौरन उन्हे कत्ल करा देना चाहा मगर बन्दी के जोर देने पर यह मामला रूपनगर की अदालत को सौपा गया। इसके अलावा मुम्ताज जब महाराव पर तोहमत लगाकर उन्हे बादशाह की निगाह मे गिराने लगी, तो बन्दी ने मुम्ताज को भी डराया-धमकाया और शाह को भी समझाया। मेरे इन्ही एहसानो की वजह से छत्रसाल मुझे धर्म-बूआ बनाकर आदर करते है। यहा तक कि उन्होने मुझे बून्दी आकर भतीज-बहू की दावत पाने का भी नौता दे रक्खा है।

इन सब बातो को सुनकर रानी पहले तो कुछ शक, शुबा और सोच मे मुब्तला रही, मगर फिर मेरे रोब-दाब, मकर-फरेब के जाल मे ऐसी फँसी कि मेरे हर हुक्म को मानकर बडी इज्जत के साथ खातिर-तवाजअ से पेश आने लगी। मैने उसके साथ मेल-जोल भी हद से ज्यादा बढा लिया है। बस अब पौबारह है।"

"शाबाश ! तो आखिर जान बचाने का तुमने तरीका निकाल ही लिया, क्यो ?"

"गुमराह न हो खा साहब ! वह किसी भी तरह से आपको अपना धर्म नही दे सकती। मैने उसे अच्छी तरह टटोल कर देख लिया है। मतलब यह है कि मेरा हर एक वार उस पर खाली गया है। वह हर तरह से पाकीजा और पतिव्रता औरत है।"

"तो फिर जान किस तरह से बचेगी नसीबन ! और इनाम भी किस बात का चाहती हो, तुम ?"

"यही कि किसी छल-फरेब से उसके बदन के पोशीदा निशानात का पता लगाऊँगी और उसकी कोई खास चीज बतौर निशानी के लाऊंगी। वह तुम्हारे शर्त के फैसले के दौरान मे एक सबूत बन

सकेगी । और उसकी वजह से बादशाह और महाराव साहब दोनो को तुम्हारी जीत का यकीन हो जायेगा । यही है बस, वह तजवीज।"

"बहुत अच्छा, यही सही, भागते भूत का लंगोटा तो है । भात न खाया तो हाडी को ही धर बजाया ।"

"मगर क्या दुनिया इतनी खर-दिमाग है कि इस तरह की झूठी बातो को ही सचाई का सबूत मान लेगी ?"

"इससे भी ज्यादा, खासकर इन राजपूत रईसो मे—"

"खर दिमागो की कमी नही गालिब, एक ढूँढो हजार मिलते हैं ।"

"हा अगर······ ।"

"अमा छोडो भी इस अगर मगर को । घबराये क्यो जाते हो ? जरा मेरे हथकण्डे देखो तो सही ; निशानी की चीजे और पोशीदा निशानात वह काफी से ज्यादा सबूत बनेगे कि 'क्या' और 'क्यो' की गु जाइश ही नही रह जायेगी । अदालत मे कानून की ही खानापुरी होती है । इन कामो मे कही मुहर नही लगा करती ।"

"अच्छी बात है । कुछ न होने से तो कुछ होना ही अच्छा । खाली सार से लतखना बैल ही ठीक है ।"

पाठक ! अब आप इस प्रकार से वार्तालाप करने वाले व्यक्तियो से ज़रूर परिचित हो गये होगे । ये लोग और कोई नही, सौदागर के वेश मे स्वय शेरशाह नवाब रुहेला हैं । साथ मे उनके मुसाहिब फजलबेग और कुटनी नसीबन हैं, जो बून्दी में पहुचकर अपनी शर्त पूरी करने के मन्सूबे गांठ रहे हैं, जैसा कि ऊपर की बात-चीत से प्रकट है ।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

"महारानी जी, मै आपका बहुत-बहुत शुक्रिया अदा करती हूँ। आपने जो हमारी ख़ातिर-तवाज़ग्र की है, उसे कभी दिल से नही भुलाया जा सकता। अब मै यहाँ से अजमेर-शरीफ के वास्ते कूच करना चाहती हूँ।"

"आप हमारे अतिथि हैं। बादशाह शाहजहाँ की प्रधान बेगम और साथ ही साथ अनेक एहसानो के बोझ से मेरे पति को दबा देने वाली उनकी धर्म-बूआ! ऐसी दशा में आपकी जो भी सेवा-शुश्रूषा हमसे बन जाय, वही थोडी है। क्यो, ठीक है न बूआ जी?"

"मैं तुम्हारे शौहर महाराव छत्रसाल को अपने नूरेनजर मुरादबख्श से भी ज्यादा अज़ीज़ मानती हूँ और वे भी मेरी इतनी ही इज्ज़त करते हैं। मेरे बराबर आदर की निगाह से तो शायद वह ख़ुदावन्द को भी न देखते होगे। ठीक स्वयवर के बाद ही उन्होने मेरी-तुम्हारी मुलाकात कराने का इकरार किया था। मगर किस्मत ने अब आप से आप ही उसे पूरा कर दिया, जो हमारा ग्वालियर से सीधा अजमेर जाने का इरादा हो गया। कुछ भी हो, मगर सच बात तो यह है कि जितनी मैंने तुम्हारी तारीफ सुनी थी, वाकई तुमको उससे हज़ार-हजार गुना ज्यादा ख़ूबसूरत, शरीफ और नेकदिल पाया है।"

"हम नाचीज क्या हैं, बुआ जी! यह आपकी उदारता और गुण-ग्राहकता है, जो आप हम लोगो को इतना मानती और हमारी प्रतिष्ठा एवं प्रशंसा करती हैं।"

"नही, ये महज बनावटी बाते नही। बन्दी तुम्हारी मेहमान-नवाजी से हद से ज्यादा खुश है। मैने शाहशाह आलम से भी तुम्हारी तारीफ करने का फैसला कर लिया है। तुम्हारे शौहर बूंदी-महाराव छत्रसाल के सामने ही भरे दरबार मे तुम्हारी इस बेहतरीन मेहमान-नवाजी के लिये शुक्रिया अदा किया जायगा। तुम्हारे खजर वाले मामले से वहाँ पर सब लोग इतने पुर-असर हैं कि तुमको बडी इज्जत की नजर से देखते और दिल ही दिल मे तुम्हे ताजीम देते हैं। महाराव के लिये तो बादशाह ने बडी आलीशान खिलअत अता की है। मैं बादशाह पर यह जोर दे रही हूँ कि किरण-मयी के लिये एक अलहदा जागीर अता की जावे। बादशाह सलामत ने मेरी फरमाइश कुछ-कुछ मजूर भी करली है। बाकी तुम्हारे शौहर की तो मै वहाँ पर हर बला से ढाल बनकर हिफाजत कर रही हूँ। उनकी तरफ से तो तुम बिलकुल बेफिक्र रहो। शाही तख्त के नीचे बहुत-सी साजिशे हुआ करती हैं। मगर मेरे रहते, तुम्हारे दुश्मन तुम्हारा कुछ बिगाड नही सकते।"

"बुआजी, आपके दर्शन से हम यहाँ कृतकृत्य हो गये हैं। जाने से पूर्व आपको भोजन तो यहाँ राजमहल मे करके ही जाना होगा। मनाई न सुनी जायगी।"

"मगर खाना खाने से पेशतर नहाना चाहूगी, महारानी! आज सफर की तैयारी की वजह से अभी तक नहाई भी नही हूँ। क्या आप नहा चुकी, महारानी?"

"नही, मैने भी अभी तक स्नान नही किया। आज वास्तव मे कुछ देर हो गई। इधर मैं अभी स्नानागार मे जाने ही वाली थी कि आप आ गईं।"

"चलो, यह भी अच्छा ही हुआ। आज हम-तुम दोनो साथ-साथ स्नान करेगी।"

"नही, आप पहले जाकर स्नान कर आये, मैं आपके पश्चात् नहा लूँगी ।"

"मेरे पीछे क्यो ? साथ क्यो नही, महारानी ! क्या मै कोई मर्द हूँ ? लो देख लो, यहाँ कोई मर्द तो है ही नही ।" इतना कहकर कपडे खोलकर पूरे तौर से बरहना हो जाती है और महारानी को नीचे गर्दन किये देखकर, कपडे सँभालती हुई फिर कहती है, "देख लिया, इतना तरद्दुद क्यो करती हो ? औरत से औरत को किस बात की शर्म और किस मकसद से परदा ? बेफिक्र होकर आओ, साथ-साथ स्नान करेंगे ।"

यह बात-चीत बूँदी-राजमहल मे महारानी किरणमयी और महाराव की तथाकथित धर्म-बुआ तथा शाहजहाँ की द्वितीय बेगम राहतजान के मध्य में हो रही है । महारानी किरणमयी दुविधाजनक स्थिति मे अन्यमनस्क भाव से बेगम के साथ स्नानागार में जाने को तैयार होती है । स्नानागार मे दोनो के साथ-साथ प्रवेश कर चुकने पर बेगम राहतजान फिर शीघ्रता मे अपने कपडे उतारकर पूर्ण नग्न हो जाती है और फिर हँसती हुई महारानी की साडी खीचकर उसे भी नग्न करने का यत्न करने लगती है । रानी साडी को कडी पकड कर, फिर इस प्रकार से आक्षेप कर रही है—

"नही, बुआ जी ! मैं इस प्रकार पूर्ण नग्न होकर स्नान नही किया करती ।"

"इसमे कोई हर्ज थोडे ही है बेटी ! माता की गोद मे बैठकर कभी नहाने मे बेटी को क्या शर्म, मेरी लाडली ! मेरी तो यह दिली ख्वाहिश है कि आज मैं अपनी चिडिया को अपने हाथो से नहलाऊँ। तुमको देखकर मेरी गुड्डी ! आज मुझे अपनी मरहूम बेटी हुस्नबानू की याद आ रही है । (आँखो से आँसू बहाते हुए) तुम्हारी-सी ही सूरत-शक्ल थी उसकी । अगर कही आज वह जिन्दा होती तो ठीक तुम जैसी ही होती । महारानी ! वह लौडियो की लडकियो के साथ महेल के ऊपर

गुडियो से जा खेलती। मैं उसे ढूँढती तो वह छिप जाती। मैं उसे खेलते देखकर फटकारती तो वह चुँदरी से मुँह ढँककर रोने लगती और कहने लगती कि, 'जब मैं मर जाऊँगी अम्मी जान! तब मुझे याद किया करोगी। मेरी कब्र पर बैठकर फूल चढाते हुए रोया करोगी। आज तो मुझे फटकारती हो, ललकारती हो।' हाय! मेरी बेटी बडी अच्छी थी। वह रूठ जाती तो मै उसे मनाया करती थी। लौडी-बाँदियो के होते हुए भी उसे मै अपने हाथो ही से नहलाया-खिलाया करती थी। आज तुम्हे देखकर मेरा वही मातापन जाग उठा है, मगर तुमने अर्ज कबूल ही नही की। खैर, तुम पर कुछ जोर थोडे ही है...अगर मान लेती तो...।"

इतना कहकर वह फिर सुबक-सुबक कर रोने लगी और इस प्रकार उदास होकर बैठ गई, मानो काठ मार गया हो। उसके इस सफल अभिनय को देखकर सीधी-सादी क्षत्रिया महारानी का भी जी भर आया और वह दयार्द्र होकर कहने लगी—

'बुआ जी! आप रज न करे, मैं आपको नाराज या दुखी करना नही चाहती। मै तो तुम्हारे साथ नगी नहाने से इसलिए झिझकती थी कि मुझे इसका अभ्यास नही है।"

"नाराज किस बात पर होऊँगी बेटी! पराई औलाद पर किसी का कोई जोर थोडे ही हुआ करता है। मैं यहाँ कैसे-कैसे जी में अरमान लेकर आई थी, कि अपनी मरहूम बेटी की जगह तुमको मानकर, तुम्ही से उसकी जुदाई की हुडक मिटाऊँगी, लेकिन तुमने मेरे टूटे दिल के और भी टुकडे कर डाले। खैर जी, जैसी तुम्हारी मर्जी?"

"बुआ जी! अब दिल को अधिक हल्का न करो। मैं अपनी धर्म-माता के साथ नगी स्नान करूँगी।"

इतना कहकर उसने अपने सब कपड़े उतारकर एक तरफ रख दिये और पूर्ण रूप से नग्न होकर स्नानार्थ प्रस्तुत हुई। अब निश्चित भाव

से दोनो पूरी तरह से बरहना होकर तथा एक-दूसरे के सामने बैठकर स्नान-कार्य मे सलग्न हुई ।

राहतजान स्नान करते समय खेल-खेलकर अपने टूटे दिल के बहलाने का अभिनय कर रही है । अत. स्नान बडा रोचक हो गया है । महारानी ने तो इन खेलो मे देर तक निमग्न रहने को सामान्य मनोरजन या धर्मबुआ का मन-बहलाव समझा है, किन्तु कुटनी इस अभिप्राय से स्नान-कार्य मे देर तक सलग्न रही है कि रानी के गुप्त अग के कुछ प्रमुख चिह्न समझकर उन्हे पूरी तरह से अपने ध्यान मे बिठा ले ।

महारानी की दाईं जाँघ पर लहसन का चिह्न है और बाईं पर एक बडा तिल । लहसन के निकट नीचे की तरफ एक फोडा-फुन्सी के घाव का गोल निशान भी है । बाईं भुजा पर ऊपर महाराज का नाम और नीचे महारानी का नाम गुदा हुआ है । इन गुप्त चिह्नो को देखकर कुटनी अत्यन्त प्रसन्न हो गई । इसके पश्चात् बडे हर्ष के साथ सहभोज मे सम्मिलित हुई । उसके इस समस्त कौटिल्य को महारानी ने केवल मातृ-वात्सल्य ही समझा और उसे प्रसन्न करने के अवसर दिये ।

अब विदा का समय निकट आया । रानी ने बडे सरल एव सकुचित भाव से प्रार्थना की कि जाते समय वह कोई मनचीती वस्तु भेट या उपहार के रूप मे उससे प्राप्त कर ले । राहतजान पहले तो मना करती रही, किन्तु रानी का अत्यन्त आग्रह देखकर और उससे वचन लेकर महाराव की अँगूठी और कटार भेट रूप मे माँग ली ।

उक्त दोनो वस्तुएँ सुहाग-चिह्न के रूप में रानी को शादी के अवसर पर महाराव द्वारा प्रदान की गई थी और स्वय उन्ही की अवगति मे, वे वस्तुएँ रानी द्वारा महाराव के सदृश ही श्रद्धा, सम्मान और प्रेममय बन, पूज्य दृष्टि से देखी जाने लगी थी । महाराव की अनुपस्थिति में उन्हे, उन्ही के बराबर समझ हृदय से लगाकर रखा जाने लगा था ।

इस माँग पर रानी बडे पशोपेश में पड गई कि आखिर वह करे तो

क्या करे। देना भी बुरा और न देना तो उससे भी अधिक बुरा। साँप-छछूँदर के समान दुविधाजनक स्थिति बन गई। देने पर प्राणनाथ की स्मृति के सुहाग-चिह्नो का वियोग, विसर्जन और उनके प्रेम की लघुता; तथा न देने की दशा मे वचन-भञ्जन, अतिथि की अवज्ञा और मातृवत् महाराव की धर्मबुआ एव भारत-सम्राट् की पत्नी अर्थात् सम्राज्ञी का अपमान, साथ ही स्वामी की अप्रसन्नता पर घोर अनिष्ट की सम्भावना। वह इस दुविधाजनक स्थिति को देखकर बहुत विकल हुई। उसे स्वप्न मे भी यह अनुमान न हुआ कि वह उन वस्तुओ को मागेगी, जो उसके किसी लाभ की न होने पर भी रानी के लिये प्राण से भी अधिक प्रिय हो। रानी ने उसकी अभिरुचि बदलने की अनेक प्रकार से चेष्टा की, जिससे वह इन सामान्य वस्तुओ के स्थान पर और कोई बहुमूल्य वस्तु ले ले, किन्तु वह न मानी और अपनी हठ पर अटल रही तथा रानी को झूठा बनाकर अप्रसन्नता के साथ वचन तोडने का ताना देने लगी। अन्त मे वचन हारने के कारण रानी को वे वस्तुएँ दे ही देनी पडी।

कार्यसाधन योग्य गुप्त-चिह्न और वाछित वस्तुओ को लेकर वह कुटनी सहर्ष महल से विदा हुई और सराय मे आकर शेरशाह के गिरोह में सम्मिलित हो गई। अगले दिन बूँदी की सराय को सौदागर खाली करके चल दिया।

इस पर शाहजहाँ उन दोनो वस्तुओ को लेकर देखते हैं। पलटने पर महाराव छत्रसाल का नाम उन पर खुदा हुआ नजर पडता है। दरबार मे निकट ही बैठे हुये महाराव छत्रसाल को अपने समीप बुलाकर उन्हे वे दोनो वस्तुये पहचानने के विचार से दिखाते हैं। महाराव छत्रसाल देख और पहचानकर घबराहट में पड जाते हैं।

शेरशाह—क्यो महाराव पहचानकर बताइये, वे दोनो चीजे शादी के मौके पर महासती किरणमयी को, निशानी या सुहाग-चिह्न की शक्ल में, जनाब ही ने तो दी थी न ?

छत्रसाल—हाँ ये दोनो वस्तुये मेरी ही हैं, सम्राट् ! मैंने इन्हे शादी के अवसर पर अपनी पत्नी को प्रदान किया था। ये तब से उसी के पास रहती रही हैं।

शेरशाह—महारानी की बाईं भुजा पर, ऊपर महाराज का और नीचे सती रानी जी का नाम गुदा हुआ है। क्यो, है न महाराव छत्रसाल साहब ?

महाराव छत्रसाल यह सुनते ही सन्न होकर तथा सिर नीचा करके पृथ्वी की ओर देखने लगते हैं, बोलते-चालते कुछ नही और न ऊपर को मुँह ही उठाते हैं।

शाहजहाँ—क्या, शेरशाह ठीक फरमा रहे हैं, महाराव ?

छत्रसाल—हाँ, ठीक है, सम्राट् !

शेरशाह—और जिस महासती का पोशीदा अग महाराव के अलावा और किसी को देखने के लिये नसीब ही न हुआ हो और न हो सकता है, जरा उसका भी हाल सुनियेगा, सरकार !

शाहजहाँ—हाँ जरूर ! उसी पर तो मामले का फैसला है।

शेरशाह—महारानी की दाहिनी जाँघ पर लहसन का निशान है और उसी के पास नीचे की तरफ किसी छोटे घाव का गोल निशान भी है।

शायद कोई फोडा हुआ होगा। क्यो महाराव साहब ? और बाईं जाँघ पर एक काला तिल भी है।

छत्रसाल—(अत्यन्त लज्जित होकर) हाँ, जो नवाब साहब कह रहे हैं वह सब ठीक है, सम्राट् !

नृपस्य चित्त, कृपणस्य वित्तं, दुर्जन जनाना च मनोरथानाम् ।
स्त्री चरित्र पुरुषस्य भाग्य, देवो न जानाति कुतो मनुष्य ॥

इस स्त्री के रोग ने मुझे जीवित ही मार डाला। सम्राट् ! अब शीघ्रातिशीघ्र मेरा सिर उतरवाइये।

शाहजहाँ—आप शर्त हार गये है, महाराव ! ऐसी हालत में फैसले के माफिक आपको शीश तो देना ही पडेगा। इसका तो कहना ही क्या है ? मगर सियासी बातो पर गौर करके, इतनी रियायत हम आपको जरूर देते है कि आप आँज से ठीक एक महीना बाद अपना शीश उतरवाकर शर्त को पूरा करे। पेशतर इसके आप बूँदी जाकर अपनी रियासत का मुकम्मिल इन्तजाम कर आये, क्योकि उसकी जिम्मेदारी आपके सर पर लाजमी तौर से है।

महाराव छत्रसाल ने शाहजहाँ को धन्यवाद दिया और दरबार से विदा लेकर अपने डेरे पर आ गये। किन्तु अपनी स्त्री की दुश्चरित्रता देखकर उनका मन लज्जा और ग्लानि से इतना खिन्न हुआ कि उन्हे किसी से मिलना या मुँह दिखाना भी उचित प्रतीत नही हुआ।

दूसरे दिन प्रात काल उन्होने बूँदी को प्रस्थान कर दिया, यद्यपि उनके पैर उस तरफ को पडते ही नही थे। कुछ दिन की यात्रा के पश्चात् वे बूँदी पहुँच गये। राजमहल में न जाकर तथा रानी को अपने आने की खबर तक न देकर नगर से बाहर राज-वाटिका मे ही उन्होने डेरा लगा दिया। महाराव सदा बाहर से आकर राजमहल मे पधारते रहे हैं, किन्तु अब की बार नगर से दूर ही रुके हुये हैं। वही पर अपने सरदार और राजकर्मचारियो को मिलने-जुलने के लिये बुलाते हैं। रनवास में आना तो

दूर रहा, अपने आने की उन्होने रानी को सूचना तक नही भेजी है। जब रानी को यह समाचार विदित हुआ तो उसे विशेष चिन्ता होने लगी कि ऐसा क्या कारण है जो महाराव बूंदी आकर भी बाग में ठहरे हैं। वे न तो राजभवन मे पधारे और न अपने यहाँ आने की सूचना ही दी। यह सोचकर और किसी अनिष्ट की आशका करके उसने पालकी मगाई और उसमे बैठकर वह स्वय महाराव के दर्शनार्थ वाटिका में पहुँची तो महाराव ने वहाँ भी उससे मिलना स्वीकार नही किया और वापस राजमहल में लौट जाने की आज्ञा दी। वह बेचारी हताश होकर वापस महल में आ गई।

महाराव छत्रसाल ने अपने राज्य की उचित व्यवस्था की और अपने सरदार और कर्मचारियो को तत्सम्बन्धी उचित आदेश भी दे दिये। इसके पश्चात् सब से अन्तिम भेंट करके, राजधानी के लिये प्रस्थान कर दिया। उस प्राणप्रिय पत्नी से, जिससे बिना मिले एक क्षण भी उनको कल्प के समान प्रतीत होता था, आज उसकी सूरत को देखना भी अच्छा न लगा। रानी को महाराव के आगमन और राज्य-सम्बन्धी कार्यों का विवरण प्राप्त हुआ। इसके साथ ही साथ यह समाचार भी मिला कि उन्होंने बूंदी से अन्तिम विदा प्राप्त करली है तो उसका कलेजा धक् से रह गया। उसको विश्वास हो गया कि बुआ जी का आना अवश्य किसी रहस्य से युक्त है, जिसके कारण सम्भवत· बूंदी के राजवंश का सम्मान सकट में है। ऐसा विचार कर रानी ने अपनी अभिन्न-हृदया दो-एक सखी-सहेलियों को बुलाकर इस विषय पर मन्त्रणा की। उस मन्त्रणा-गृह का निर्णय यही रहा कि महारानी को कुछ विश्वस्त स्त्री-पुरुषो के साथ दिल्ली जाना चाहिये और वस्तुस्थिति का पता लगाकर उसके उपचार का प्रबन्ध करना चाहिये।

दूसरे दिन प्रात· ही निश्चित योजनानुसार महारानी की विशेष टोली ने दिल्ली की ओर कूच कर दिया। मंजिल पर मजिल तै करके

यह टोली बडी शीघ्रता के साथ राजधानी में पहुँच गई और एक सुविधा-जनक सराय मे उतरकर वही अपना डेरा लगा दिया।

रानी की टोली का नेतृत्व हमारी पूर्व परिचिता चमेली कर रही है, जो जासूसी के कार्य मे बडी चतुर है। अत उसी को रहस्योद्घाटन का कार्य सौपा गया है। इसने नगर मे घूमकर उस समाचार को सुना, जो सर्वसाधारण की चर्चा का विषय बना हुआ था कि हाडा राजा ने अपनी पत्नी के सतीत्व के विषय मे शेरशाह से शर्त बदी थी। शर्त के अनुसार जो व्यक्ति पराजित होगा वही शीश देगा। चूकि शेरशाह रानी को भ्रष्ट करके शर्त जीत गये हैं अत अगले सप्ताह में महाराव का सिर धड से पृथक् कर दिया जायगा। शेरशाह ने रानी से महाराव के अँगूठी और कटार निशानी के रूप मे ले लिये और उसके गुप्त अगो को देख लिया, जो उसके विजय के प्रमाण बन गये।

इस प्रकार पूर्ण पुष्टि के साथ चमेली के द्वारा यह सम्वाद ले आने पर रानी को उसे सुनकर अत्यन्त खेद हुआ और वह उस बनावटी बुआ कुटनी के छल-कपट से तत्काल परिचित हो गई। उस दृश्य का सारा चित्र उसके नेत्रो के सामने प्रत्यक्ष रूप से आ उपस्थित हुआ, जबकि उसके द्वारा वह अपने ही महल मे छली गई थी। यह भी मालूम करा लिया कि वह कुटनी नसीबन लखनऊ की एक प्रसिद्ध वेश्या थी। वह केवल इसी काम के लिए बुलाई गई थी। वह अपना कार्य समाप्त करके तथा इनाम लेकर अपने स्थान को वापिस चली गई।

अब रानी ने भूत, भविष्यत् और वर्तमान सब अवस्थाओ को विचार कर यह अनुभव किया, कि यह समय दुख या पश्चात्ताप करने का नही। इस समय महा कठिन एव 'प्रबल-परीक्षा' की घडी सम्मुख है और इस प्रबल-परीक्षा के अन्तर्गत उसे अपने प्रिय पति के प्राणो की रक्षा और अपनी शुद्धता प्रमाणित करनी होगी। एक बार छली जाने पर उसे यह अनुभव हो गया कि ससार मे पूर्ण सतर्क रहने की आवश्यकता है।

परिस्थिति का गम्भीर अध्ययन कर महारानी अब भावी कार्य-क्रम पर विचार कर इस निश्चय पर पहुँची कि कार्य-सिद्धि के हेतु कोई योजना बनाई जाये। वह योजना अच्छी और अकाट्य हो और बडी दक्षता से कार्यान्वित की जानी चाहिये। अन्त में चमेली की सहायता से बडे विचार-विनिमय के पश्चात् एक ऐसी सामयिक योजना सोच निकाली गई, जिसके द्वारा विजयी शेरशाह का पराभव सम्भाव्य समझा गया।

चूकि दूसरे दिन प्रात काल से उस योजना को कार्यरूप दिया जायगा, अत' तुरन्त ही तत्सम्बन्धी सब सामग्री एकत्रित करने का प्रबन्ध किया गया। यह सब कार्य ऐसे गुप्त रूप से सम्पन्न होने लगा कि उसके सम्बन्ध मे किसी बात की किसी को कानो-कान भी खबर न हो पाई। जिसे जो कार्य सौपा गया, वह उसे करने लगा और अन्त तक पहुँचा दिया। अस्तु, सध्या पर्यन्त उस दिन योजना-सम्बन्धी समस्त सामग्री एकत्रित की गई और प्रत्येक आवश्यक एव प्रयोजनीय वस्तु को जॉच करके देख लिया गया कि वह हर प्रकार से अवसर के उपयुक्त भी है या नही। एक ठोस योजना का आधार पाकर रानी की समस्त चिन्ताएँ दूर हो गई।

इक्कीसवाँ परिच्छेद

दिल्ली में बादशाह शाहजहाँ ने एक विशेष दरबार का आयोजन किया है। हाट, बाट, बाजार तथा किले-कल्लर सब विशेष रूप से सज रहे है। लोग प्रसन्न बदन से सुन्दर सोफियाना लिबास धारण किये हुए, प्रत्येक जन-स्थल पर घूम रहे हैं। इस सारी प्रसन्नता का क्या कारण है? आज शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र एव साम्राज्य-भर के युवराज शाहजादा दाराशिकोह की सालगिरह का दिन है। उत्सव तथा हर्ष प्रकट करने का इसी दरबार मे व्यवस्था की जायगी और फिर दोपहर के पश्चात् दूसरी बैठक मे श्री युवराज को उपहार भेट किये जायेगे। दरबार की पूर्व निश्चित दस बजे की वेला काफी देर पहले व्यतीत हो चुकी है, किन्तु अभी तक बहुत थोडे सरदार एव राज्य-कर्मचारीगण एकत्रित हो पाये हैं। स्वय बादशाह शाहजहाँ बडी देर से दरबार मे आकर अपने तख्त पर विराजमान हो गये हैं, किन्तु सरदारो के स्थान को रिक्त और दरबार को सूना देखकर, उनके हृदय में क्रोध और चिन्ता दोनो से युक्त भावना सम मात्रा मे बढती जा रही है। दरबार का ऐसा फीकापन उन्होने अपने राजसी जीवन मे अब तक कभी नही देखा है। अन्त मे बठे-बैठे उकताकर, मत्री तहव्वर खाँ को निकट बुलाकर इस भाति पूछताछ करने लगे—

"आज अभी तक दरबारी-जन दरबार मे हाजिर क्यो नही हुये, तहव्वर खाँ?"

"बन्दा-परवर, आज एक बडी पुरहुनर नटनी पूर्व की जानिब से आई है। उसका नाच-गान गोया परिस्तान की किसी हूर का नाच-गान है। जिसने उस परी को देखा या उसका नाच-गान सुना है, वह उस पर ऐसा फ़रेफ्ता और पागल होगया है कि उसी गायक-टोली के पीछे लगा हुआ फिर रहा है। यहाँ तक कि उसको यह भी ध्यान नही है कि उसे मुजरे के लिये दरबार मे भी हाज़िर होना है। नटनी के रूप-यौवन ने व उसके जादू के ज़ेर-असर होकर, लोग इस बात को गोया भूल ही से गये हैं, कि फर्ज के अदा न होने की हालत मे सरकार की तरफ से कडी से कड़ी सजा भी मिल सकती है। दरबार के सरदार या सरकारी मुलाज़मान ही क्या, खुदावन्द! सारा का सारा दिल्ली शहर ही अपने होशो-हवास खो बैठा है। दुकानदार अपनी दुकानो को बन्द करके उसी नटनी के साथ हो लिये हैं।"

"ऐसी अजीबो-गरीब नटनी का नाम तो हमने आज तक कभी नही सुना, जो अपने नाच-गान या रूप-यौवन के हुनर से ऐसा जादू कर सकती हो, जिसके जेर-असर सरकारी मुलाज़मान अपने फर्ज की अदा-यगी तक को भूल जायँ।"

"सरकार! हाथ कंगन को आरसी क्या है? मैं कोई झूठ थोडे ही बोल रहा हूँ?"

"अगर यह बात है तो उस नटनी को मय साजो-सामान के हमारे दरबार मे फौरन मुजरे के लिये हाजिर होने के वास्ते जरूरी हुक्म शाया कर दो। हम भी तो देखें वह कैसी पुरनूर व हुनरमन्द नटनी है!"

यह सुनकर मंत्री तहव्वर खाँ ने शाहंशाह की आज्ञा का तत्काल पालन किया और सम्बन्धित सरकारी कर्मचारियो को शाही आज्ञा-पत्र के साथ नटनी को तत्काल दरबार में बुला भेजा। थोडी ही देर में नटनी अपने साज-सामान और स्त्री-पुरुष पात्रों के साथ शाही आज्ञानुसार दरबार में मुजरे के लिये आ उपस्थित हुई। सम्राट् ने नर्तकी-टोली का

निरीक्षण करके, नटनी को अपने सम्मुख अपनी सगीत-कला के प्रदर्शन का आदेश दिया। सम्राट् की आज्ञा का नटनी ने शीघ्र पालन किया। सरदारगण उत्सुकता से नटनी के रूप को देखने लगे। नटनी मे नि.सन्देह कुछ दैवी-चमत्कार जनता को दृष्टिगोचर हो रहा है।

दरबार में नटनी का नाच-गान आरम्भ हो गया है। उसके मोहक प्रभाव मे राजा-प्रजा सभी उपस्थित वर्ग आत्म-विस्मरण करते जा रहे हैं। वास्तव मे ऐसी सुन्दर, सुरूपमान एवं आकर्षक नटनिया देखने का शाहन्शाह शाहजहाँ तक को सौभाग्य प्राप्त नही हुआ है। स्वय शाहन्शाह यह निश्चय करने मे सकुचित प्रतीत होते है कि ये नटनिया साँसारिक विभूतियाँ हैं या स्वर्गीय अप्सराए। वयोवृद्ध शाहजहाँ तक के हृदय की भी इस समय विचित्र दशा हो गई है। वे एक नशे की सी अवस्था मे कभी दत्तचित होकर नटनी का मनमोहक रूप ही देखते रह जाते हैं तो कभी सुमधुर सगीत सुनने में ही इतने तल्लीन हो जाते है कि अन्य किसी बात का उन्हे ध्यान ही नही रहता। कभी वे होश मे होते है तो कभी बिल्कुल की सुधबुध भूल जाते हैं। प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति के मुँह से अनायास ही 'वाह' 'वाह', 'धन्य' 'धन्य', 'वल्ला-वल्ला', 'सुभानअल्ला' आदि शाबाशी तथा प्रशसा-सूचक शब्द निकल पडते हैं। आज्ञानुसार निश्चित समय तक सगीत होने के पश्चात् विराम की वेला भी आ गई जबकि वह मनोरजन समाप्त हो गया। यद्यपि दर्शक-वर्ग सगीत की समाप्ति से प्रसन्न नही, किन्तु फिर भी दरबार की समाप्ति का समय हो जाने एव सगीत-मण्डली के स्वकला-प्रदर्शन करते-करते थक जाने के कारण सम्राट् को भी प्रदर्शन समाप्ति की आज्ञा देनी पडी। शाहजादे, शाहजादियाँ व बेगमे तक सभी की यह सिफारिश हुई कि सम्राट् को इन कलाकारो के लिए मन-वाँछित पुरस्कार देना चाहिए। सम्राट् शाहजहाँ स्वय उनसे अत्यन्त प्रभावित हो गये और उनकी कला की हार्दिक प्रशंसा करते हुए तथा

उनके अलौकिक होने का निर्णय देते हुये मनोवाँछित पुरस्कार माँगने का अनुरोध करने लगे। नटनी ने मनोवाछित पुरस्कार माँगने से पूर्व बादशाह से वचन देने की प्रार्थना की, जिससे पूर्व कुछ भी स्वीकार न करने का अपना निश्चय प्रकट कर दिया। शाहजहाँ ने अपने प्राण, शाही सम्मान, ताज और तख्त के अतिरिक्त प्रत्येक वस्तु के देने का वचन दे दिया। इस पर नटनी ने निवेदन किया कि हमारे प्रतिवादी शेरशाह नवाब रुहेला एक घोर अपराध के अपराधी हैं अत उनके विरुद्ध हम निष्पक्ष न्याय चाहते हैं। इस पर नटनी और सम्राट् मे निम्न प्रकार से वार्तालाप हुआ—

"तुम्हे बिला तास्सुब सच्चा इन्साफ मिलेगा, मगर उसके पेशतर सही- सही यह बतलाना होगा कि, सरदार शेरशाह से तुम्हारा क्या ताल्लुक है और उसने तुम्हारा क्या कसूर किया है।"

"मेरी कहानी यह है कि मैं बनारस की निवासिनी एक प्रसिद्ध नर्तकी हूँ, सम्राट्! शेरशाह ने मेरे साथ निकाह करने तथा अपनी प्रधान बेगम बनाने का धोखा देकर और झूठे वायदे करके प्रथम तो मेरा ईमान बिगाड दिया और फिर मेरा लाखो का धन-जेवर लेकर मुझे धनहीनता की दशा मे भूखी मरने के लिए छोडकर छिपे-छिपे चोरी से इधर चले आये। इस तरह इनके द्वारा मेरा लाखो का धन-जेवर भी धोखे से हडप लिया गया और मेरा धर्म, ईमान भी छीन लिया गया। उसी समय से मैं इनकी खोज मे फिर रही हूँ और ढूंढते-ढूढते पागल हो गई हू। दवयोग से ये आज यहाँ पर मेरे हाथ आये हैं। यह है इनका अपराध। प्रस्तुत न्याय-विधान के अनुसार इन्हे प्राण-दण्ड मिलना चाहिये।"

नटनी के इस वक्तव्य पर शाहजहाँ को बडा आश्चर्य हुआ और उन्होने निम्न तर्क किया—

"तुम्हारी बात का कैसे यकीन किया जाय? शेरशाह की तरफ से

हमे ऐसी उम्मीद कभी नही है। क्या कोई काबिले इत्मीनान सबूत तुम्हारे पास है ?"

"स्वय नवाब रुहेला मेरे प्रमाण होगे सम्राट्! स्मरण रहे सम्राट् ने निष्पक्ष न्याय का वचन दिया है। शेरशाह मेरी लाखो की सम्पत्ति और धर्म-ईमान को लूट लाये है। एक स्त्री से ऐसे गम्भीर विषय पर उसके पूर्ण सत्य कथन के उपरान्त सम्राट् और क्या प्रबल प्रमाण चाहते है।"

"क्यो नवाब शेरशाह! सुन रहे हो कि यह नटनी आपको अपना मुल्जिम करार दे रही है।"

"खादिम सुन रहा है, बन्दानवाज! मगर कलाम पाक की कस्म खाकर खादिम दावे के साथ कह सकता है कि आज इस जगह को छोडकर इससे पहले कभी इस नटनी की हुजूर के इस खाकसार ने शक्ल तक भी नही देखी है और कोई दूसरी बात तो दूर रही। यह नटनी शाहन्शाह के इस खादिम को झूठी तौहमत लगाकर फसाना चाहती है।"

"नही सम्राट्! न्याय किया जाय। मेरा वचन अक्षरश सत्य है। बिना किये कोई भी सुशील स्त्री किसी पुरुष को सरेदरबार धर्म-ईमान लेने की झूठी तौहमत नही लगा सकती और चाहे कुछ कह ले या कर ले।"

"नही सरकार! यह एक इज्जतदार सरदार की तौहीन करने के लिये ही कोई झूठा जाल बनाया गया है।"

"क्या भारत सम्राट् वचन-बद्ध होकर भी केवल पक्षपातवश न्याय का गला घोट देगे? वह भी केवल इसलिए कि बन्दी एक गरीब स्त्री और प्रतिद्वन्द्वी एक अमीर पुरुष है। क्या पुरुष स्त्रीत्व का और अमीर गरीबी का खून चूसने के लिये ही बनाये हैं, भगवान् ने?"

"कभी नही! कभी नही! मगर तुम्हारे दावे की सच्चाई का तो

आखिर कोई सबूत होना ही चाहिये ।"

"सरकार ! मैं श्रीमान् के पूरे दरबार के सामने मुँह खोले खडी हूँ । शेरशाह मुझे अच्छी तरह से पहचानते हैं, किन्तु फिर भी पहले कभी न देखने का सफेद झूठ बोल रहे हैं ।"

"नही, बन्दानवाज ! यह झूठी है । इसीलिये इसके पास झूठी तौहमत को छोडकर और कोई सबूत नही है ।"

"सम्राट् ! स्त्री के निकट तो उसके कथन के अतिरिक्त धर्म-ईमान जाने का और कोई प्रमाण हुआ ही नही करता । किन्तु इतने पर भी उसे असत्य माना जाता है, तो यह भी सही । यदि शेरशाह सत्यवक्ता हैं तो इस बात का निर्णय इन्ही के कथन पर छोडा जाये । ये कुरान मजीद को हाथ मे लेकर तथा कलाम-पाक की शपथ खाकर सम्राट् के सामने बयान दे कि, इन्होने आज से पूर्व मुझे कभी कही नही देखा, और न मेरा दीन-ईमान बिगाडा एव न कभी आज तक मेरी धन-दौलत आदि किसी वस्तु को ही छूआ है । साथ ही यह मजूर करे कि मैं इनके लिये इनकी बहन के समान अत्यन्त पवित्र स्त्री हूँ और इन्हे सम्राट् के समक्ष इस समय मुझ को धर्म-बहन बनाने और उस नाम से पुकारने में भी कोई सकोच नही है ।"

"शेरशाह ! तुम अपनी सफाई पेश करो, वरना हमारी निगाह से मुल्जिम साबित होकर सजाये मौत के हकदार ठहराये जाते हो ।"

"आज मैं बाहोश कुरान-मजीद को हाथ में लेकर और कलामे पाक की हज़ार-हजार कस्म खाकर शाहन्शाह के रूबरू सच-सच बयान करता हूँ, खुदावन्द ! कि इस नटनी का यह दावा बिलकुल झूठा है । मैने आज से पहले इसे कभी नही देखा । दीन-ईमान लेने की बात तो दूर रही, मैंने कभी इसके बदन को हाथ तक नही लगाया । इसकी कोई चीज भी मैंने किसी तरह से कभी नही ली है । लिहाजा मुझको इसे हमशीरा कहकर पुकारने मे भी कोई गुरेज नही है ।"

"सम्राट् ! अब ये नवाब साहब शेरशाह मेरे धर्म-भाई बन रहे हैं। इन्होने आज से पहले मुझे कभी कही नही देखा। इनकी तरफ से, इनके कहने के अनुसार मेरा दीन-ईमान भी सलामत है। इन्होने मुझसे मेरी कोई चीज़ भी नही ली। इसके साथ ही इस वक्त ये होश-हवास से भी दुरुस्त हैं। अब मै इनसे प्रश्न करती हूँ कि जब इन्होने किसी नाते मुझसे कोई चीज ली ही नही, तो इनको मेरी अगूठी और कटार निशानी के रूप मे कहाँ से मिल गईं ? जब इन्होने आज से पूर्व मुझको भर नजर देखा तक ही नही है, सम्राट् ! तो ये मेरी जघा का लहसन, तिल तथा घाव का निशान कहाँ से और किस तरह देख आये ? और जब मै इनकी बहन के समान पवित्र हूँ एव मेरे शरीर का कोई अग इन्होने कभी स्वप्न तक मे नही छूआ, तो ये मेरा धर्म-ईमान कैसे बिगाड आये ? ये खूब देख ले सम्राट् ! मै हाडा-नरेश बून्दीपति महाराव श्री छत्रसाल जी की पत्नी किरणमयी हूँ।"

किरणमयी का नाम सुनकर शाहजहा आत्म-विस्मृत होकर बोले—"शेरशाह !"

सारे दरबार में इस समय पूर्ण सन्नाटा छा गया। दरबार के सब उपस्थित जन भूमि की ओर देखकर कानो मे बात-चीत करने और सकेत द्वारा अपने-अपने मनोभाव एक दूसरे पर प्रकट करने लगे। प्रत्येक व्यक्ति को अपने सामने एक विचित्र चमत्कार दिखाई पडने लगा। स्वर्ग की पूज्य प्रतिमा महारानी किरणमयी साक्षात् दुर्गाभवानी के सदृश आज निर्भीक होकर सिहनी की भाति गर्जती हुई, मुगल-सम्राट् के दरबार में खडी है। उसका यह विजय-नाद वायु-मण्डल मे गूँज रहा है कि 'मैं किरणमयी हूँ। जब ये मुझे पहचानते तक ही नही तो इन्होने मेरे गुप्त चिह्न कहा से देखे ?' सारी सरदारी की दृष्टि कभी उस स्वनाम-धन्य वीराँगना पर जाती है, तो कभी निर्जीववत् बने नवाब शेरशाह पर। इधर नतमस्तक शेरशाह भूमि की ओर देखते हुये खडे-खडे थर-थर

काँप रहे हैं । उनके शरीर में सहस्र-सहस्र विषधर-दश के समान कष्ट हो रहा है । उनका चेहरा लज्जा और ग्लानि से काला पड गया है । वे इबादत की सी दशा मे महारानी किरणमयी के पैरो की तरफ झुक कर अस्फुट शब्दो मे बडबडा रहे हैं . "रानी, बहन, ! तुम वाकई महासती हो । मैं जहन्नुम का एक अदना कीडा हूँ । मैंने अपनी खुदगर्जी मे अन्धा होकर, सूरज की तरफ धूल फेंकने और उसे अटाने यानी कलकित करने का हौसला किया था, पर उस काम मे खुद-बखुद मुँह की खाई । मेरा ऊपर मुँह करके थूका हुआ खुद मेरे ही मुँह पर आकर गिर गया । यानी मैं खुद ही बेहद जलील और ख्वार हो चुका हूँ । अब मुझे यह जिन्दगी बोझ मालूम देने लगी है ।"

"क्या हमारे ऊपर प्रहार करते समय आपको यह ख्याल नही आया कि सुख-दु ख और मानापमान का दूसरा भी तुम्हारी ही तरह शिकार बनता है और वह भी तुम्हारे जैसा मनुष्य है ?"

"शेरशाह ! अब मालूम हुआ कि, एक इज्जतदार पठान खानदान मे पैदा होकर भी तुम कितने नीच और कमीने हो । खैर, अब तुम को सजाये मौत तो जरूर-बिल्जरूर मिलेगी ही, मगर मरने से पेशतर इस अमर का सच-सच बयान करो कि आखिर यह सब साजिश है क्या ?"

"जहापनाह ! मैंने एक झूठा जाल रचकर एक पाकीजा बहन को बदनाम करने की कोशिश की और चाहा उसके खाविंद महाराव छत्रसाल जी को उसी के नतीजे पर कत्ल कराना और उसका सुहाग मिटाना, मगर इसके धर्म ने इसके बेकसूर खाविंद और इज्जत दोनो को बचा लिया ।"

इतना कहकर शेरशाह ने जिस प्रकार रानी को कलकित करने का षड्यन्त्र रचा गया था, उसका समस्त विवरण व्यौरेवार शाहजँहाँ के सम्मुख प्रकट कर दिया । उसे सुनकर बादशाह के क्रोध का ठिकाना न रहा और तत्काल शेरशाह के वध की आज्ञा देते हुए रानी की ओर

मुडकर बोले, "बेटी किरणमयी ! हम तुम्हारी पाकीजगी को पहले से भी ज्यादा इज्जत की नजर से देखते हैं। तुम हमारी धर्म की बेटी हो। हम तुमसे इतने खुश हैं कि तुम्हारी हरएक ख्वाहिश को पूरा करने के लिये तैयार है। सिर्फ तुम्हारे कहने की देर है।"

"भारत-सम्राट् ! नही, नही, पूज्य पिताजी ! जहाँ पत्नी का पति की सेवा तथा तद्रक्षार्थ आत्म-समर्पण हमारे आदर्शानुसार अनिवार्य है, वहाँ अपने भाई का हितचिन्तन भी एक सच्ची और वास्तविक बहन का कर्तव्य हो जाता है। अब, जबकि अपने पाप के लिये प्रायश्चित् अर्थात् तोबा करके शेरशाह मुझे बहन मानकर धर्म-भाई बन गये, तो उनके प्राण-दण्ड का प्रयोजन ही कहाँ रहा ? अब तो इनको और भी कठोर दण्ड दिया जाना चाहिये। जो होगा इनकी धर्म-बहन की तरफ से क्षमा और प्राण-दान।"

"नही, नही, खुदावन्द ! मुझे जल्द से जल्द कत्ल कराइये। मैं अपनी निहायत पाकीजा और दरियादिल बहन की गगा-जल के मानिन्द सच्ची अस्मत को जक पहुँचा कर इस काले मुँह को लिये हुए दुनिया में ज़िन्दा रहना पसन्द नही करता। बन्दानवाज ! अहले-आलम मे रह-कर बदनामी और जिल्लत की जिन्दगी बिताने से, अपने वास्ते जहन्नुम की आग मे गिरना लाख दर्जे बेहतर समझता हूँ। जिन्दगी बख्शने की सजा, सजाये मौत की बनिस्बत मौजूदा हालत मे मेरे लिये कही ज्यादा खतरनाक है, हुजूर !"

"बेटी किरण ! शाही कानून की रू से शेरशाह के कत्ल का हुक्म शाया हो चुका है। अब वह बदला जाना नही चाहिये।"

"पुत्री की इच्छा-पूर्ति का पिता जी और रानी की माँग का सम्राट् वचन दे चुके हैं, श्रीमान् ! वह भी आपको मान्य होना चाहिये।"

"मेरी अजीमोश्शान बहन ! मुझे माफ करो ! मेरा गुनाह बहुत बडा

है। मैंने तुम पर नही पाक नारी जाति पर लाछन लगाया है। अभी से जहन्नुम के कुत्ते मुझे नोच-नोचकर खाने के लिये मुँह बाने लगे हैं। वह देखो···।

"भाई शेरशाह! सती का दण्ड श्रेष्ठतम श्रेणी का दण्ड हुआ करता है। वैसा ही तुमको भी मिलेगा, कमो-बेश नही। जाओ तुमको मेरी ओर से क्षमा किया गया। अब मेरे प्राणनाथ श्री बूँदी-नरेश···सम्राट् !"

"शेरशाह! बेटी किरण की हठ मानकर, उसकी मेहरबानी से तुमको नये सिरे से ज़िन्दगी बख्शी गई। अपनी नीचता पर तोबा करो। राजपूतो के अमोघ धर्म के उसूलो को सिर नवाकर शुक्रिया अदा करो अपनी इस धर्म-बहन का, जिसने इस वक्त, इस हालत में भी तुम्हारी जान बचाई है। रहे महाराव छत्रसाल, उनका तो सल्तनत में अब कोई बाल भी बाका नही कर सकेगा। उनका नाम तुमने अमर कर दिया, बेटी !"

"मैंने उनका! नही, नही, उन्होंने मेरा, सम्राट्! यह सब मेरे पति परमेश्वर की ही चरण-रज का प्रताप है।"

"मैं हज़ार बार तोबा करता हूँ गरीब-परवर! और राजपूतो के धर्म की फय्याजी के उसूल को तसलीम करते हुए सैकडो जबानो से हजार बार अपनी पाकीज़ा बहन किरणमयी का शुक्रिया अदा करता हूँ और उसके सदा सुहागन रहने के लिये लाखों बार दुआ देता हूँ। खुदा इस जोडी को कयामत तक कायम रक्खे और बाद मुर्दन जन्नत बख्शे।"

"बेटी, हम अपनी ज़िन्दगी और शाहशाही को बहुत खुश-किस्मत समझते हैं, जिसके दौरान में खुदा ने हम को उस गुल्शने-जहाँ का माली बनाया, जिसमे तुम लोगो के मानिन्द जन्नत के पाक फूल खिलते हैं। धन्य है महाराव छत्रसाल की और तुम्हारी आला और अफजल शख्सियत को; और धन्य है, उन वसीअ धर्म-उसूलों को व नेकनाम माता-पिता को, जिन्होने तुम्हें जन्म देकर इन्सानियत के सही साँचे में ढाला है।"

"सम्राट् के मुख से प्रजाजन की और पिता के मुख से अपनी सतान की, सीमा से अधिक प्रशसा अशोभनीय है, सम्राट् ! हमने केवल अपने-अपने धर्मादर्शो का अनुकरण करते हुए केवलमात्र स्वकर्तव्य का ही पालन किया है और कुछ नही ।"

"फराइज का अञ्जाम देना ही तो दुनिया में इन्सानी जिन्दगी है, वरना जीता हुआ भी आदमी मुर्दे के बराबर है । इस मतलब की दुनिया मे फराइज की अहमियत को महसूस करने वाले भी तो बहुत थोडे ही इन्सान होते है । इसी खयाल से तो हम कहते हैं, कि तुम दोनो खाविंद-बीवी हमारी हुकूमत के नायाब नमूने हो और अपने कान के हीरो की कदर न करना किसी जौहरी का जडपन नही, तो और क्या है ?"

"खैर, सम्राट् ! अब श्रीमान् की यह पुत्री अपने पतिदेव के दर्शन करना चाहती है ।"

"तहव्वर खाँ ! महाराव छत्रसाल जी को हमारी याददाश्त कराओ ।"

इस आज्ञा को पाकर मत्री तहव्वर खाँ ने शीघ्र बूदी-नरेश महाराव छत्रसाल को सम्राट् के आह्वान का सन्देश भेजा। तत्काल उनके श्रीहुजूर मे उपस्थित होने की व्यवस्था हो गई। इसी समय सम्राट् की आज्ञा से महारानी किरणमयी को दरबार मे बैठने के लिये वही स्थान दिया गया, जिस पर शाहजादी जहानआरा विराजती है। सम्राट् के द्वारा बडे आग्रह के साथ परम सम्मान को प्राप्त होकर, महारानी किरणमयी उस भव्य आसन पर आसीन हुई। सब उपस्थित दरबारी उसके धर्म की प्रशसा करने लगे। शाहजहाँ द्वारा अवसरानुकूल प्रसग छेडे जाने पर इसी बीच मे दोनो मे प्रश्नोत्तर सम्बन्धी निम्न वार्तालाप हुआ—

"औरत की शख्सीयत को ऊँचा उठाने वाली कौन-सी शै है, बेटी ? और क्या है उसकी जिन्दगी का खास मुद्दाअ ?"

"सम्राट् ! स्त्री का जीवन-ध्येय केवल-मात्र सत्य और पवित्र प्रेम

तथा उसके प्रदर्शन से दैव को प्रसन्न करना है। इसी व्यापार से ससार के अन्दर उसके अपने तथा उसके स्वजनो के जीवन मे सासारिक बन्धन के प्रति रोचकता उत्पन्न होती है। वह पवित्र एव अगाध प्रेम, स्त्री के हृदय मे अपने पति के प्रति त्याग, तपस्या, सेवा और सत्य से परिपूर्ण होना चाहिये और अन्य जन के लिये होना चाहिये, मृदु वचन, दया और उदारता से युक्त।"

"औरत और मर्द की मुहब्बत मे क्या फर्क है, पुत्री ?"

"स्त्री का प्रेम ठोस, स्थायी और एकक्षेत्री होता है, सम्राट्! किन्तु साधारणतया पुरुष का प्रेम होता है पोला, अस्थायी और बहुक्षेत्री। स्त्री अपने प्रेम में स्वाकाक्षाओ को अहवृत की शून्यता पर ले आती है, किन्तु पुरुष अपने प्रेम मे पहुँचा देता है उन्हे उसकी परिपूर्णता अर्थात् उच्च शिखर-बिन्दु पर। किन्तु ऐसा स्त्री और पुरुष के स्वाभाविक अवस्था में रहने पर्यन्त ही सम्भव है, स्वपन खोने के पश्चात् नही।"

"इस तरह की तनज्जुली के रोकने का क्या उपाय है, बेटी ?"

"इसके लिये अपने उच्च आदर्श और सद्धर्म सिद्धान्तो का शिक्षण तथा अध्ययन आदि ही ऐसे नियत्रण हैं, जो दोनो के व्यक्तित्व को पतन-पथ से रोककर नष्ट होने से बचा सकते हैं। अन्यथा वह इसी प्रकार विनाश को प्राप्त होता है जैसे चक्की मे गिरा हुआ वह दाना पिसने से बचा रहता है, जो तद्स्थित कीली के निकट रहता है, नही तो उससे दूर होकर उसका सर्वथा चूर्ण ही हो जाता है। धर्म-सिद्धान्तो के उच्च स्तर के आधार पर ही अर्थात् उसी के क्रमानुसार किसी के व्यक्तित्व का उत्थान हुआ करता है, अधिक नही।"

"सभी औरतें अपने अच्छे व नेक-चलन होने का दावा करती हैं। हालाकि उनमें से बहुत-सी निहायत बदचलन साबित होती हैं। क्या, बता सकती हो बेटी! कि शरीफ और बदमाश औरत की आम-फहम पहचान क्या है ?"

"जो पत्नी ससार में प्रत्येक वस्तु से, यहाँ तक कि अपने आपे तक से भी अधिक श्रेष्ठ अपने पति को समझ, तथा सर्वदा उसकी आज्ञानुसार चलकर, उसके हित और प्रतिष्ठा मे, अपना सर्वस्व निछावर करने पर तत्पर होती है, वही स्त्री अच्छी होती है। वह अपने पति में अपनी समस्त क्रियाओ का इसी प्रकार केन्द्रीकरण कर देती है, जैसे अर्जुन ने लक्ष्य-वेध के समय अपनी दृष्टि का केन्द्रीकरण मीन की आँख के तिल मे कर दिया था। उसी दशा में वह हमारे हिन्दू-आदर्श के अनुसार सफल जीवन होता है। मोटे तौर से इसका तात्पर्य यह है कि पति की अहित-कारक निन्दा एव अपयश की बातचीत सुनना या तत्सम्बन्धी दृश्य देखना जिसे असह्य हो और जो अपने तप, जप, यज्ञ, दान आदि सबका अन्त पतित्व मे मानती हो तथा पति के अतिरिक्त जिसे ससार मे और कुछ सूझता ही न हो, वही स्त्री सती, भली या शरीफ कही जा सकती है। इसके अतिरिक्त जो स्त्री पति की अपेक्षा, पुत्र पर्यन्त किसी भी अन्य जन को अधिकतर प्यार करती हो, बहुत-सी बातो मे अपने पति से छिपाव-लुकाव या बचाव रखती हो, उस स्त्री को पतिता समझना चाहिये; अर्थात् जो स्त्री अपने पति के गृहागमन तथा उपस्थिति पर आलस्य, अप्रसन्नता, किन्तु उसके विदेश-गमन, रोग पीडन अथवा निधन पर प्रसन्नता अनुभव करती हो, जो स्त्री पुत्र पर्यन्त परिजन की चाव से सेवार्थ तत्पर रहती हो, किन्तु पति की सेवा मे अरुचि और हतोत्साह का भाव रखती हो तथा उसे एक भार मानती हो, जो पतिके दुख, हानि और निदादि को अभिरुचि, प्रसन्नता एवं समर्थन की दृष्टि से देखती हो और जो किसी भी परिजन की हानि या निन्दादि से उसके विपरीत दुखी हो; अथवा जो पर-पुरुषो के साथ मृदुता, मधुरता, सौहार्द्र एव सुरुचिपूर्वक वार्तालाप करती हो, किन्तु अपने पति के प्रति कर्कश हो, अनर्गल बकवास करती हो, अपरञ्च जो परपुरुषो के नैकटय मे अभिरुचि और परगृहगमन में प्रसन्नता तथा तत्परता प्रकट करती हो और पति के नैकट्य तथा स्वगृह

प्रतिष्ठान से घृणा कर गृहस्थ कार्यों मे अन्यमनस्कता प्रदर्शित करती हो, उस स्त्री को दुराचारिणी एव नारी-जाति का कलक समझना चाहिये—ऐसा हमारे धर्मशास्त्र का उल्लेख है। गोस्वामी श्री तुलसीदास जी के अनुसार, प्राकृतिक एव स्वाभाविक रूप से ही स्त्री के हृदय मे सदा आठ अवगुण निवास किया करते हैं। उत्तम स्त्रियाँ ज्ञान, स्वाभिमान, अपवाद, लज्जा तथा भय का अवलम्ब लेकर उन अवगुणो से अपने को सयमित रखती हैं। वे आठ अवगुण इस प्रकार हैं —

साहस, अनृत, चपलता, माया, भय, अविवेक, अशौच, अदाया।
नारि स्वभाव सुबुधजन कहही, अवगुण आठ सदा उर रहही॥

"इन्सान मे वह ताकत किस तरह पैदा होती है जिससे वह ऐसे ऊँचे काम कर देता है कि जिनका हर खासो-आम को कयास तक भी न हो?"

"सम्राट्! हमारे क्षात्रादर्श के अनुसार मनुष्य-जीवन का अन्तिम ध्येय त्याग, तपस्या, सयम, सत्य, धर्म, स्वध्येयार्थ बलिदान और न्याय है। इनसे जो जीव प्रेम रखते हैं और इनके विरुद्ध बातो से घृणा करते है वे एक विलक्षण शक्ति को प्राप्त कर लिया करते हैं। उक्त शक्ति के प्राप्त हो जाने पर, ससार के सुख-दुख, जीवन-मरण, यश-अपयश, हानि-लाभ उनके लिये ऐसे सामान्य विषय बन जाते हैं कि वे उन शक्तिशाली मनुष्यो को उनकी उच्चता के कारण प्रभावित ही नही कर सकते। उनका अपना चरित्र, अपना सिद्धात, अपना दृष्टिकोण और अपना आदर्श होता है। संसार के जीवो मे वे अग्रणी गिने जाते हैं और समाज मे महती प्रतिष्ठा को प्राप्त होते हैं। वे ही समाज की मर्यादा के आधार-स्तम्भ बनते हैं तथा सामान्य स्तर के स्त्री-पुरुषो के लिये आश्चर्य प्रतीत हुआ करते हैं। जो बकरी रूपी जीव अपने उच्च आदर्शरूपी बाड़े मे सुरक्षित है उसे हीनत्व के भेडिये हानि नही पहुँचा सकते। यह भावना सदा ही वीर हृदय स्त्री-पुरुषो, में जागरूक रही है और इसी ने उन्हें जग-पूज्य बनाया है। यदि वह हरिश्चन्द्र के दान का स्रोत है तो शिवि और दधीचि के

परोपकार का हेतु भी वही है। भीष्म, अर्जुन और लक्ष्मण के सयम एवं राम, भरत तथा देव के राज्य-वसुधा-त्याग का मूल उसमे है तो सीता, सावित्री और पद्मिनी के पतिव्रत का आधार भी वही है। इसकी प्रेरणा हमको हमारे तत्वज्ञान पुनर्जीवनवाद से मिलती है, जिसके कारण मृत्यु हमारी दृष्टि में ऐसी महत्त्वहीन वस्तु बन जाती है कि हम उसकी तरफ से किञ्चित मात्र भी भय अनुभव न कर, निश्चिन्त होकर कर्मकाण्ड मे लगे रहते है।

इसी धर्मादर्श की छत्रछाया मे प्रस्तुत भावना के अन्तर्गत उसके जन्म-जात उत्साह और आनन्द से उन्मत्त हो, किसी ने अतिथि-सत्कार के लिये अस्थियाँ प्रदान की, तो किसी ने अपने प्राणप्रिय पुत्र पर्यन्त को चीर डाला। किसी ने राज्य-लोभ को त्याग कर सन्यास धारण किया, तो किसी ने स्वर्ग-सुख पर्यन्त को ठोकर मार दी। किसी ने ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन किया, तो किसी ने अपने पति अथवा स्वामी के लिये अपने शरीर के टुकडे-टुकडे करा डाले। इसी धर्मबल ने स्त्री-पुरुषो को वह महान् शक्ति प्रदान की, कि वे ससार की प्रत्येक सबल से सबल शक्ति, यहाँ तक कि मृत्यु पर्यन्त के साथ, सघर्ष करने के लिये सहर्ष तत्पर हो गये। इसी धर्मबल ने कोमलागी अबलाओ तक को सबला बनाकर जौहराग्नि की लपटो तक के साथ खेलने का साहस प्रदान किया।

इस क्षात्रादर्श की महिमा का कहाँ तक वर्णन किया जाय। जहाँ वह एक तरफ मानव व्यक्तित्व को उन्नति तथा अभ्युत्थान की ओर ले जाता है, वहाँ यह मनुष्य को पतन के गर्त मे गिरने से भी रोकता है। इसी बल को प्राप्त करा पर मनुष्य, मृत्यु-भय की सकीर्णहृदयता को छोड़ देश, जाति, धर्म और स्वामी के लिये मर-मिटने की क्षमता देने वाले उच्च भावो को उपलब्ध कर अमर बन इतिहास मे स्थान पाता है। प्रस्तुत धर्मादर्श ही उस महान् शक्ति का स्रोत है और अत्यन्त स्तुत्य है।"

"बेटी ! तुम्हारी काबलियत पर बलिहारी ! तुमको शाबाश है।"

उपर्युक्त वार्ता के समाप्त होने के साथ ही बूदी-नरेश छत्रसाल ने शाहजहाँ के दरबार मे पदार्पण किया। उन्हे सम्राट् के समक्ष आने से पूर्व ही अपनी पत्नी के साहस, कर्तव्यतत्परता, पति-प्रेम और पावित्र्य आदि विषयो का, जिनको लेकर उनकी सहधर्मिणी अपनी कठिनतम 'प्रबल-परीक्षा' मे बडे गौरव के साथ उत्तीर्ण हुई है, परिचय-सम्बन्धी समाचार मिल गये हैं। ऐसी वीरागना एव पतिपरायणा पत्नी को पाकर वे अपने जीवन को परम धन्य मान रहे हैं।

जिस समय बूदी-नरेश महाराव छत्रसाल जी शाही दरबार में महारानी किरण के सम्मुख गये, उसी समय रानी अपने पूज्य पति को निकट देखकर अपने स्थान से उठ खडी हुई और अपने प्राणनाथ के पैर पकड़ कर उनसे क्षमा-याचना करने लगी। महाराव ने प्रेम से गद्गद् होकर, उसे अपने हाथो से उठा कर, अपनी हार्दिक प्रसन्नता और स्नेह का परिचय दिया। अब दोनो के हृदय स्नेह-रस मे गोते खाने लगे।

इस प्रकार इस आदर्श दम्पतिवर्ग का वियोग के पश्चात् पुनर्मिलन हुआ। दोनो ही पक्ष अपनी-अपनी 'प्रबल-परीक्षा' में पूर्ण रूप से उत्तीर्ण हो चुके हैं। इन दोनो ने, उच्चतम क्षात्र-आदर्श का अनुसरण करके जीवन में जीवट-युक्त खेल खेले हैं। इसलिये इनके जीवन स्वयमेव ही आदर्श बन गये हैं। जीवन का ध्येय उच्च आदर्श को मानकर जो कर्त्तव्यशील बनते हैं वे ही उन्नति को प्राप्त होते हैं, चाहे वे व्यक्ति हों या राष्ट्र, अन्यथा अवनति के गर्त मे गिरकर ससार से प्रस्थान कर जाते हैं।

दरबार के सभी सभासदो ने किरणमयी और छत्रसाल के दाम्पत्य-प्रेम को अटूट तथा चिरस्थायी रखने और उनके दीर्घायु होने की कामना की। शाहजहाँ ने किरण को पुत्री बनाने के उपलक्ष में एक बडी जागीर व्यक्तिगत रूप से उसे प्रदान की। इसके पश्चात महाराव ने महारानी सहित बूदी को प्रस्थान किया और वहाँ पहुँच कर शेष जीवन शान्तिपूर्वक व्यतीत किया।